सहकारी समितियाँ और आधारभूत शिक्षा

इन्डियन एडल्ट ऐजूकेशन एसोसिएशन
३०, फ़ैज़ बाज़ार, दिल्ली

Translation of:

CO-OPERATIVES AND FUNDAMENTAL EDUCATION

by Maurice Colombain

मूल रूप में यह पुस्तक यूनेस्को द्वारा प्रकाशित की गई थी। हम यूनेस्को की सौजन्यता के कारण ही मूल पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद प्रकाशित कर सके हैं।

मूल्य दो रुपये आठ आना

Naya Hindustan Press, Delhi.

सहकारी समितियाँ

और

आधारभूत शिक्षा

सिरीज़ नं० २५

१९५७

यूनेस्को की सदाशयता से प्रकाशित

आभार प्रदर्शन

समाज शिक्षा का मुख्य कार्य, समाज में ग्रामीण समाज की उन्नति के लिये तीव्र भावना उत्पन्न करने का है अतएव समाज शिक्षा कार्यकर्ता का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह समाज के व्यक्तियों में ऐसी चेतना उत्पन्न करे कि समाज एक ऐसा संगठन बनाये जिसका कि उनके जीवन से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध हो। साथ ही साथ इसका यह भी प्रयत्न होना चाहिये कि जिससे समाज अपने लिये एक उपयोगी कार्यक्रम बना सके और उन्हें पूरा करने की विधियों से भी परिचित हो जाय।

सहकारी संस्थायें ठीक इसी प्रकार की संस्थाये हैं और उनका विकास व उन्नति अत्यावश्यक है। इस पुस्तक में अनेक देशों की विभिन्न प्रकार की सहकारी संस्थाओं के चित्र मिलते हैं। मूल रूप में यह पुस्तक यूनेस्को द्वारा अंग्रेजी में छपी थीं परन्तु हमारे कार्यकर्ताओं के लिये इसके महत्व और उपयोगिता को देखकर एसोसियेशन ने इसका हिन्दी संस्करण निकालना आवश्यक समझा। हम यूनेस्को के आभारी हैं कि जिसने हमें इसके हिन्दी रूपान्तर करने की अनुमति प्रदान की व इसके लिये आर्थिक सहायता भी दी। हम भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के हिन्दी विभाग व यूनेस्को नेशनल कमीशन के भी आभारी हैं जिन्होंने अपने सहयोग, सहायता व पथ-प्रदर्शन से इस कार्य को सरल बना दिया।

एस० सी० दत्ता
जनरल सैक्रेटरी
इण्डियन एडल्ट एजुकेशन एसोसियेशन

३१ जनवरी १६५७
३०, फैज़ बाज़ार, दिल्ली

विषय सूची

पृष्ठ संख्या

भूमिका

पहला अध्याय

मितव्ययता और ऋण की समस्या ... १

दूसरा अध्याय

खरीदने की समस्या ... ३३

तीसरा अध्याय

कृषकों, लकड़हारों तथा मछुओं की समस्यायें ... ४४

चौथा अध्याय

उद्योग धन्धों के मज़दूरों, घरेलू नौकरों—
तथा दस्तकारों की समस्यायें ... ६६

पांचवां अध्याय

स्वास्थ्य और शरीर विज्ञान ... ६३

छठा अध्याय

रीति रिवाज़ों के सुधार के लिए सहकारी समितियाँ ... ११६

सातवां अध्याय

सहकारी शिक्षा और नेताओं का प्रशिक्षण ... १२३

भूमिका

पिछड़े हुए और अनुन्नत समाजों में प्रौढ़ अथवा आधारभूत शिक्षा का कार्य अत्यन्त कठिन और जटिल हुआ करता है। इसका कारण यह है कि इसमें हमें एक ऐसी स्थिति के विरुद्ध मोर्चा लेना होता है जिसमें अज्ञान, कुप्रथाएं, रोग, निर्धनता, अल्पदृष्टि, निराशा, फूट और कभी-कभी नैतिक दुर्बलतायें मिल कर सामाजिक तन्तुओं को नष्ट कर डालती हैं और तदुपरान्त वे अपने कुप्रभाव से स्थिति को और भी अधिकाधिक विषाक्त करती रहती हैं।

शिक्षा प्रसार से नई शैलियों और ढंगों के विकास के लिये मार्ग खुलता है। इन नवीन शैलियों और ढंगों से आर्थिक उन्नति का मार्ग तो खुलता है परन्तु नैतिकता का अभाव ज्यों का त्यों बना रहता है। अतएव, वह प्रश्न कि निर्धन, भूखे, रोगी और निराश व्यक्तियों को शिक्षित कैसे किया जाय, फिर भी ज्यों का त्यों बना रहता है। यदि यह कार्य उन्हीं देशों में कठिन है जहां व्यक्ति बहुत उच्च शैक्षिक वातावरण में रहता और पलता है तो अनुमान लगाया जा सकता है कि घनी झाड़ियों और दुर्गम वनों के बीच में यह कार्य कितना दुष्कर होगा। जैसा कि डाक्टर स्पैन्सर हैच ने कहा है, "आत्मिक, मानसिक, शारीरिक, सामाजिक और आर्थिक निर्धनता मिलकर एक सम्पूर्ण वस्तु हो जाती है जिस पर प्रत्येक दिशा से एक साथ ही आक्रमण करना चाहिये।"

मानव पुनर्संस्थापन के इस महत्वपूर्ण कार्य के लिये विद्यालय (पाठशाला) एक आवश्यक साधन तो है परन्तु अन्यतम नहीं। इस प्रकार के पुनर्संस्थापन के लिये प्रमुख साधन और इसमें प्रमुख बाधा वे मनुष्य हैं जिनका इससे सीधा सम्बन्ध है। उनके बिना, उनकी समझ के बिना, अपनी परिस्थिति को सुधारने की उनकी इच्छा के बिना, उनके सहयोग के बिना, कोई भी दीर्घकालिक या गहरा सुधार हो ही नहीं सकता। अतएव समस्त सुधारकों के लिये सबसे बड़ी समस्या और सबसे बड़ी सफलता उन लोगों की क्रियात्मक सहमति और सहयोग प्राप्ति ही है। इसका कारण यह है कि जिन लोगों में अपने आपको

विकसित करने की इच्छा ही नहीं उन्हें किसी भी प्रकार के प्रयास सदैव के लिये कोई स्थाई सहायता नहीं पहुँचा सकते।

परन्तु भला निर्बल व्यक्ति अपनी सहायता कैसे कर सकते हैं ? इसका सबसे उत्तम और एकमात्र मार्ग यही है कि वे पारस्परिक सहायता करें। "अपनी स्वयं की सहायता करो" तथा "एक दूसरे की सहायता करो"। ये ही दो सिद्धान्त सहकारी संस्थाओं द्वारा मुख्यतया काम में लिये गये हैं।

अब तो इस प्रकार की संस्थाओं के सिद्धान्त और ढंग काफी लोकप्रिय हो चुके हैं। कारण यह है कि अब वे एक शताब्दी से भी अधिक और कम से कम सौ देशों के विभिन्न जल-वायु तथा भौगोलिक और मानवीय वातावरणों में पल चुके हैं। दस वर्ष पूर्व "इण्टर नैशनल लेबर आफिस (अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय) द्वारा स्थापित नवीनतम अन्तर्राष्ट्रीय आंकाड़ों ने बताया है कि उस समय ८,१०,००० सरकारी संस्थायें अपने १४,३०,००,००० से भी अधिक सदस्यों के साथ पांचों महाद्वीपों में फैली हुई थीं और उस समय के पश्चात् तो इन आंकड़ों में अब और भी वृद्धि हुई होगी। एशिया में भी जहाँ उन्हें स्थापित हुए ५० वर्ष भी नहीं बीते इनकी संख्या लगभग १,६८,००० तथा सदस्य संख्या १,५०,००,००० है। अफ्रीका में ये और भी देरी से आरम्भ की गई थीं परन्तु वहां भी इनकी संख्या ४,००० है और सदस्य संख्या बहुत से अफ्रीका निवासियों सहित ३,३०,००० है।

सहकारी संस्थाओं से इसके सदस्यों के लिये, तथा इसके चारों ओर रहने वाले व्यक्तियों के लिये प्रथम लाभ तो आर्थिक मुक्ति है। परन्तु विकसित जीवन व काम करने की सुधरी हुई स्थितियां व ऋणता में कमी उत्पादन की लागत और उपभोग्य वस्तुओं के मूल्यों में कमी (खाद्य-सामग्री तथा व्यवसाय सम्बन्धी वस्तुओं को इकट्ठा खरीदने से) उत्पादकों की क्रय-शक्ति में वृद्धि (मंडी के उत्तम संगठन और बाजार में एक भाव पर उसी प्रकार का माल अधिक मात्रा में मिलने के कारण) आदि भी अनेकों और लाभ भी हैं।

परन्तु यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि सारे लाभ केवल संचयन के के ही परिणाम नहीं हैं। टेक्निकल (तकनीकी) उन्नति व उत्पादन के विकसित ढंगों के कारण भी बहुत से लाभ हुये हैं जो कि पास्परिक सहयोग से प्रसारित हो गये हैं।

इस प्रश्न पर हम "इण्टर नैशनल लेबर आफिस" (अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय) द्वारा तैयार किये अध्ययन का अंश यहां उद्धृत कर सकते हैं : यद्यपि

यह अध्ययन मुख्यतः ग्राम सहिकारिता की ओर ही निर्देशन करता है परन्तु यथोचित परिवर्तन करके इसे औद्योगिक सहकारिता के साथ भी लागू किया जा सकता है।

"ग्राम सहकारी समितियां कृषक तक विशेषज्ञ, परामर्श और राय को शीघ्रता से पहुँचाने के लिये सबसे अधिक उपयुक्त साधन हैं। इसका कारण यह है कि वह परामर्श किसी एक व्यक्ति को नहीं दिया जाता किन्तु एक संयुक्त ग्रुप को दिया जाता है और परामर्श भी एक व्यक्ति का न होकर उस काल के उत्तमोत्तम विशेषज्ञों का होता है। वे सिद्धान्त पुस्तकीय न होकर अनुभव पर आधारित हैं। अतएव शिक्षा के जीबित एवं व्यावहारिक माप दण्ड हैं। वे कृषक के लिए केवल निर्देशन मात्र नहीं रह जाते जिन पर वह उन्हें अधिकारी गणों की वस्तु समझ कर या तो अविश्वास करता है या वे परामर्श अपनी अस्पष्टता के कारण व्यावहारिक नहीं होते। इसके विपरीत चूंकि वे परामर्श उन्हें अपने ही साथियों से प्राप्त होते हैं अतएव वे उसके कार्य करने के ढंग हो जाते हैं जो उसके मित्रों द्वारा अनुभव में आ चुके हैं और उसके लाभ की दृष्टि से ही उसके पास भेजे हैं जिनमें उसका व्यक्तिगत विश्वास है और जिन्हें उसने समाज निर्देशन करने का भार तक दे दिया है। यदि कृषक इन परामर्शों को मान लेता है तो इसका अर्थ यह हुआ कि वह उन परामर्शों के अनुसार कार्य करने को उद्यत है। उस स्थिति में उधार लेने वाला अपने कर्ज लेने के इस समझौते के अनुसार इस बात के लिए स्वयं ही बाध्य हो जाता है कि वह तकनीकी (टेक्निकल) प्रगति के मार्ग पर चले। संस्थाओं को भी चाहिए कि वे उसे इन्हें मानकर चलने के लिए प्रोत्साहित करें। इस प्रकार से हो सकता है कि उसकी वस्तुओं के लिए मंडी सहकारी समिति द्वारा ऊंची कीमत दी जाय। यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं है कि समिति अपने सदस्यों पर जो अनुशासन लादती है अथवा उसके पालन के लिये जो सुविधायें प्रदान करती है (उत्तम बीज, खाद, कीड़े मारने वाली औषधियां, उपादान, तकनीकी परामर्श इत्यादि) उनके कारण समितियां एक प्रकार की व्यावसायिक पाठशालाओं (बोकेशनल स्कूल) की भांति ही काम करती हैं। वे छोटे भू स्वामियों को समय तथा श्रम बचाना, अपनी वस्तुओं की किस्म सुधारना, माल को उचित मूल्य पर बेचना तथा सुरक्षित रखना, परिवहन व विक्रय का खर्चा घटाना आदि की रीतियां भी सिखाती हैं।

निर्देशन के रूप में यहां अनेकों उदाहरणों का उल्लेख किया जा सकता है। आइवरी कोस्ट पर अफ्रीका के किसानों की सहकारी समितियों ने ताड़ का

तेल बनाने के लिये कूटने और कुचलने की मशीनें खरीद ली हैं। फ्रांसीसी पश्चिमी अफ्रीका तथा फ्रांसीसी केमेरन में पाठशाला सहकारी समितियां बच्चों को बहुत-सी दस्तकारियों में तथा रबर और कोको के वृक्षों की खेती करने में प्रशिक्षित करती हैं। नाइजेरिया तथा ब्रिटिश केमेरन में प्रशासन ने कोको तैयार करने वाली सहकारी संस्थाओं की सहायता से लोगों को उत्तम प्रकार का कोको बाजार में देकर अच्छे पैसे वसूल करना सिखलाया है। तांगानिका में एक सहकारी समिति सदस्यों को कहवे की खेती करने में प्रशिक्षित करती है। इसी प्रकार केन्या के निवासियों ने यह ज्ञात किया है कि पशु-पालन केवल परम्परागत प्रकार के पशुओं के प्रदर्शन के अतिरिक्त और भी कुछ अधिक है और दुग्ध की वस्तुओं का आर्थिक मूल्य काफी होता है। मारिशस में ऋण समितियों ने शक्कर के संकट से भयभीत अपने सदस्यों को मिश्रित कृषि के लिये प्रोत्साहित किया। भारत में प्रमुखतया सहकारी समितियों के कारण ही नये तरीकों से कृषि करने के लाभ, नई फस्लों, कृत्रिम चारा और रासायनिक खादों के बारे में लोगों ने नया ज्ञान प्राप्त किया है। इनके कारण ही बंगाल और पंजाब में कृषि और भूमि एकत्रीकरण की योजना चली और कुछ अन्य प्रांतों में दुग्ध की बस्तुओं, चावल, तम्बाकू, रूई और गन्ने के संगठित विक्रय का कार्य चला। सहकारी संस्थाओं ने हिन्देशिया के गन्ने के उत्पादकों को खाद दी है, मलय प्रदेशवासियों को तथा हिन्देशिया के मछुओं को मछली बेचना सिखलाया है, फिलिपाइन्स में भी चावल, तम्बाकू, सन और पशु बेचने के लिये उसने वही काम किया है, वेस्ट इण्डीज में एण्टिग्युआ में सहकारी आंदोलन ने उत्पादन बढ़ा दिया है तथा मक्का को सड़ने व गलने से बचाने के ढंग भी बताये हैं। ट्रिनिडाड और टोबेगो में सहकारी कार्यकर्ताओं ने कोको का उत्पादन सीख लिया है जो अब विश्व प्रसिद्ध हो गया है।

सहकारी समितियों ने इन दिशाओं में जो कार्य किया है उन्हीं के कारण उन्होंने उन सरकारों की सामान्य योजनाओं में भी स्थान पा लिया है जो अपने देशवासियों को आर्थिक व सामाजिक दशा को सुधारना व उन्नत करना चाहती हैं।

उदाहरण के लिये सितम्बर १९४८ में भारत के कृषि मन्त्री ने राज्यों और प्रान्तों के कृषि मन्त्रियों की एक कान्फ्रेंस के सम्मुख भाषण देते हुए कहा, "हमारे देश के गांवों में इस समय १,५०,००० सहकारी समितियां काम कर रही हैं जिनके पास ३० करोड़ के लगभग की पूंजी है। क्या हम सारी मानव-

शक्ति को एकत्रित करके इन समितियों की प्रमुख शक्ति को खाद्य उत्पादन की योजना में नहीं लगा सकते ? क्या हम लोग उन्हें सरकार के एजेण्ट (अभिकर्ता) के रूप में इस प्रकार के कृषि सुधार के कामों में नहीं ले सकते कि जो देश को वदेशी मशीनों, जलाने के तेल या खाद वगैरह के मामले में परमुखापेक्षी न रखें ? क्या हम लोग उनकी सहायता से रजिस्टर्ड कृषकों के तत्वावधान में असंख्य बीजों के फार्म शुरू करके उन्हें कम से कम समय में कई गुना करके विस्तृंत से विस्तृत भाग में नहीं बांट सकते ? क्या हम लोग हरी व सूखी खाद उत्पादन को बढ़ाने वाली हमारी विशाल योजना में उनकी सहायता नहीं ले सकते ? क्या कृषि की उन्नति के लिये सहकारी बैंक से लिये गये कर्जे सबसे उत्तम साधन नहीं रहेंगे ? अर्थात् वह रुपया जो सहकारी बैंक को रिजर्व बैंक आफ इण्डिया से कृषि अनुसन्धान तथा अर्ध शिक्षित व अशिक्षित किसानों के लिये अग्रिम (एडवांस) मिलेगा ? क्या ये सहकारी समितियां कुछ समय के लिये काम करने वाले कर्मचारी भर्ती नहीं कर सकतीं जिन्हें पहले इन विधियों में प्रशिक्षित किया जावे और जो फिर वे आगे चलकर कृषकों को प्रशिक्षित करें ?"

क्योंकि आर्थिक मुक्ति और पुनरुत्थान तथा तकनीकी (टेक्नीकल) उन्नति के लिये सहकारी आंदोलन एक आवश्यक और प्रभावशाली साधन हैं अतः आधारभूत शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिये भी यह बहुत मूल्यवान् है। किन्तु सहकारी आँदोलन केवल इस प्रकार की सहायता करने के कार्य से भी कहीं अधिक काम कर सकता है। प्रकृतया हर प्रकार की शिक्षा को आगे बढ़ाती है। गाँवों तथा शहरों में सहकारी आन्दोलनों के इतिहास से पता चलता है कि शैक्षिक आवश्यकताओं में तथा सहकारी आन्दोलन को जन्म देने वाली आवश्यकताओं में काफी गहरा ताल्लुक है। शैक्षिक उन्नति के लिये इसके प्रयत्नों में केवल उन्नति की आशा और आकांशा वैसे सामान्य कारणों के अतिरिक्त और भी बहुत सी व्यावहारिक और महत्वपूर्ण बातें हैं। सहकारी संस्था स्थापित करने या उसमें सम्मिलित होने का निश्चय करने में तथा इसको चालू रखने में यथेष्ट सहयोग दे सकने के लिये एक निश्चित बौद्धिक व नैतिक स्तर तथा ज्ञान की आवश्यकता होती है। अतएव सारे सदस्यों या कम से कम उनमें से सर्वोत्तम या अधिकांश सदस्यों को विचार और कार्य करने के सहकारी ढंगों को जानना चाहिये। प्रशासकों, प्रबन्धकों, सचिवों तथा कोषाध्यक्षों को व्यापार चलाने के कार्य से परिचित होना चाहियें, उन्हें खाते रखने तथा कुछ अंश तक आर्थिक ज्ञान भी अवश्य प्राप्त करना चाहिये।

यही कारण है कि प्रत्येक जगह सहकारी कार्यकर्ताओं ने अपने व अपने बच्चों के लिये शिक्षा के साधन प्राप्त करने की कोशिश सर्वोपरि रखी है। "इक्वीटेबल पायोनियर्स" नामक संस्था को ही लीजिये। उसने अपनी आरम्भिक कठिनाइयों के समाप्त होते ही बच्चों व नवयुवकों के लिये एक पाठशाला स्थापित कर दी और उस समय जब कि यह रिवाज ही नहीं था सांय कक्षायें भी आरंभ कर दीं। भारत में भी सहकारी कार्यकर्ताओं ने अपने आपको इसी बात के लिये बाध्य कर लिया है कि वे अपने बच्चों को पाठशालाओं में भेजेंगे तथा पाठशाला को चलाने या अध्यापक को वेतन देने के लिये धन देंगे। भूमध्य रेखा के निकट स्थित अफ्रीका के प्रदेशों में भी सहकारी समितियों ने पाठशालायें बनवाई हैं। इस प्रकार आप देखेंगे कि अज्ञान और अकर्मण्यता के विरुद्ध मोरचा लेने में सहकारी आन्दोलन एक दृढ़ साथी के समान काम कर रहा है।

किन्तु हमें इससे भी आगे चलना चाहिये। आर्थिक पुनर्निमाण के लिये अपने प्रयासों से प्रौढ़ों तथा आधारभूत शिक्षा के सहायक के रूप में तकनीकी उन्नति के मार्ग को खोलने में उनका एजेंट होने में, और हर प्रकार के अज्ञान के प्रति अरुचि रखने के कारण उनका साथी होने के अतिरिक्त सहकारी आन्दोलन उनकी (प्रौढ़ तथा आधारभूत शिक्षा का) एक प्रकार से एक विधि भी हो सकती है। सी० एफ० स्ट्रिक लैंड ने भारत, चीन, मध्यपूर्व तथा भूमध्य सागरीय अफ्रीका के सहकारी आन्दोलन के अपने दीर्घ और सफल अनुभव को संक्षेप में इन शब्दों में रखा है: "जीवन के व्यापार में सहकारिता भी प्रौढ़ शिक्षा ही है।" हैनरी डबल्यू. वूल्फ ने पहले कहा है, "सहकारिता निर्धन लोगों की शिक्षक होनी चाहिये।" तथा फादर हस ने ट्रंसकी (दक्षिणी अफ्रीका के संघ में) में सहकारिता के संदेश का प्रसार करते हुये ऋण समितियों को लोकप्रिय पाठशालायें बताई, जिनकी स्थापना में भी उसका हाथ था। उसने कहा, "उनका प्रमुख उद्देश्य धन कमाना नहीं मनुष्य बनाना है।"

जिन लोगों ने भी सहकारिता आन्दोलन के विषय में सोचा है वे सभी उपरोक्त बातों से सहमत हैं। "कैनेडियन कमेटी आन रिकंस्ट्रक्शन एंड रिएस्टेबिलशमेंट" (पुनर्निमाण तथा पुनर्संस्थापन की कनाडा की एक समिति) को दिये गये एक यक्तव्य में सैंट ग्रेकोइस जेवियर यूनिवर्सिटी एटीगोनिश (नोवा स्कोसिया) के एक्टसटैंशन सर्विसेज़ (विस्तार विभाग) के डाइरेक्टर

डाक्टर एम० एम० कोडी ने घोषणा की :

"आर्थिक क्षेत्र में हमने सहकारिता का आश्रय शिक्षा के साधन के रूप में ही लिया है, आर्थिक साधन के रूप में नहीं।"

अनुभव ने बताया है कि आर्थिक परिणामों से स्वतंत्र भी केवल अपने कार्य द्वारा अपने सदस्यों के बौद्धिक, नैतिक और नागरिक प्रशिक्षण में सहकारिता ने पिछड़े हुये समाजों को भारी सहयोग दिया है।

मिलजुल कर काम करने, खरीदने, बेचने या निर्माण करने का अर्थ है साथ-साथ सोचना, और साथ-साथ सोचने का मतलब है संचारी विचारों का निर्माण अर्थात् युक्तियुक्त विचार। जिन नियमों को हमने ही बनाया है या जिनके बारे में किसी व्यक्ति ने स्वयं वाद-विवाद किया है, समझ लिया है तथा स्वीकार कर लिया है, उनका पूर्ण सावधानी के साथ पालन करना अपने स्वयं के लिये एक नई नैतिकता स्थापित करना है। इसमें केवल इतनी सी ही बात नहीं है कि हम स्वनिर्मित अनुशासन को ही स्वीकार करते हैं वरन् एक प्रकार से हम अपने अन्दर उत्तरदायित्व, मुक्त और मानव प्रतिष्ठा के उद्गम स्थल को भी ढूंढ़ रहे हैं। सहकारिता आन्दोलन अपने सदस्यों को कुसीद ओर मुनाफाखोरों से ही बचाने का काम नहीं करता, वरन् अपने सदस्यों को स्वयं अपने आपसे तथा अपनी ही बुरी आदतों से भी बचाता है। यह उन लोगों को वे गुण (अच्छाइयां) सिखाता है जो प्राय: उनमें नहीं पाये जाते जैसे सुव्यवस्था, दूरदर्शित, समय की पाबन्दी तथा वचन पालन। अंत में वह उन लोगों को ऐसे अवसर भी प्रदान करता है कि वे सचेत रूप से अपने आर्थिक जीवन का निर्माण भी करें। इसके लिये उन्हें नये निबन्धों का निर्माण करना होगा जिसका निर्माण स्वतन्त्रता से और सब लोगों की सहमति से हुआ है और जो उन्हें घृणास्पद या अर्थहीन सामाजिक निर्बन्धों से मुक्त कर देंगे। उन लोगों को स्वनिर्मित शासन के एक ऐसे सीधे ढांचे में रख कर जहाँ जाति व लिंग का भेद भाव नहीं रहता वह उन्हें प्रजातांत्रिक तरीकों से भी परिचित कराता है। वह उन्हें नागरिक कर्तव्यों में प्रशिक्षित करता है, एक नये समाज की रूपरेखा का निर्माण करता है जिसमें प्राचीन सामूहिक जीवन, जो लुप्त प्राय: हो रहा है, पोषण पाता है तथा उसका नवीनीकरण होता है। साथ ही उनकी राष्ट्रीय संस्कृति के मौलिक व लाभदायक तत्वों को बिना तनिक भी हानि पहुँचाये, यह प्राचीन तथा आधुनिक संस्कृति में एक प्राकृतिक और स्वतन्त्र संचार स्थापित करने की भी चेष्टा करता है।

इसकी तथा प्रौढ़ और आधारभूत शिक्षा की तुलना करने से भी सहकारिता आन्दोलन की वास्तविक बिशेषताओं से परिचय हो जाता है, विशेष रूप से जब कि हम पिछड़े हुये या आर्थिक और सामाजिक रूप से अनुन्नत लोगों में उसके प्रभाव का अनुमान लगाते हैं।

यद्यपि आर्थिक क्षेत्र में भी इसका महत्व उपेक्षा योग्य नहीं है फिर भी शैक्षिक आन्दोलन के तौर पर यह कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। एक प्रसिद्ध अंग्रेजी सहकारी कार्यकर्ता ने लिखा है, "यह उचित ही कहा गया है कि सहकारिता एक आर्थिक आन्दोलन है जो शिक्षा का उपयोग करता है, किन्तु उसी वक्तव्य को उलट कर रखें और कहें कि सहकारिता एक शैक्षिक आन्दोलन है जो आर्थिक कार्यों को उपयोग में लेता है तो और भी उत्तम हो।" इसी प्रकार डा० फोके ने कहा है :

> "सहकारी संस्थाओं का प्रथम उद्देश्य इसके सदस्यों की आर्थिक दशा सुधारना है किन्तु जो तरीके यह काम में लेती है या जिन गुणों की इसके सदस्यों में अपेक्षा होती है या जिन्हें यह विकसित कर देती है, उसके कारण यह एक उच्च उद्देश्य प्राप्ति के लिये प्रयास है और न केवल यह प्रयास मात्र है वरन् वह उन्हें प्राप्त भी कर लेती है। यह लोगों को उत्तरदायी और पारस्परिक ढंग से एक दूसरे का आश्रित बनाती है ताकि प्रत्येक अपना भी पूर्ण विकास कर सके और सब लोग एक पूर्ण सामाजिक जीवन का पूरा पूरा आनन्द भी उठा सकें।"

अविकसित प्रदेशों और समाजों में सहकारी और शैक्षिक कार्यों के उद्दीपक, उद्देश्य तथा विधियों में इतना साम्य है कि इन दोनों के लिये निकट सहयोग प्राकृतिक भी है और आवश्यक भी। इस बात को ध्यान में रखकर यूनेस्को के आधारभूत विभाग के लिये कुछ रिपोर्ट एकत्रित की गई थीं इसका उद्देश्य एक समशोधन गृह (क्लीयरिंग हाउस) की स्थापना करना था जिसमें विश्व के विभिन्न भागों में किये गये प्रयोगों का पूर्ण विवरण मिल सके। बहुत ही आवश्यक समझा गया था क्योंकि, इस प्रकार, यूनेस्को के लिये यह सरल हो जावेगा कि वह आधारभूत शिक्षा विशेषज्ञों और क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं को ऐसी चीजें दे सकें जिससे कि उन्हें प्रोत्साहन भी मिले और कठिन कामों में मार्ग निर्देशन भी।

यूनेस्को के पास न कोई ऐसा संगठन है और न सहकारिता के प्रयोगों पर सम्पूर्ण तकनीकी आंकड़े प्राप्त करने का कोई साधन। इन रिपोर्टों

का उद्देश्य तो केवल उदाहरणों और तरीकों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करना तथा शिक्षा शास्त्रियों को सबों के सम्पर्क में ला देना था।

लगभग ४५ रिपोर्टें तैयार की गई थीं जिनमें से कुछ तो व्यक्गित निरीक्षण के आधार पर किन्तु अधिकांश "इण्टरनैशनल लेबर आफिस" के डाइरेक्टर जनरल की सहमति से। यह गत ३० वर्षों से एकत्रित किये लेखों के आधार पर थीं। बिना इन्हें एकत्रित किये संतुलन स्थापित करने का कोई प्रयास असम्भव था। अधिकांश रिपोर्टों को व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर ही चुना गया था। अतएव इनके आधार पर यह दावा नहीं किया जा सकता कि इनसे उन प्रदेशों की सहकारी विधि का कोई पूर्ण चित्र सामने आ जायगा। इनका चुनाव करते समय केवल आधार यही था कि या तो उसका उस वातावरण से घनिष्ठ सम्बन्ध था या इसकी अन्तर्वस्तु एवं विधि को सन्मुख लाना आवश्यक था।

पहले तो रिपोर्टों को प्रकाशित करने का विचार ही नहीं था। परन्तु जब प्रमुख समस्याओं के आधार पर उन्हें वर्गों में विभाजित किया गया तो ज्ञात हुआ कि उनमें अत्यधिक विविधिता तथा प्रदेशीयता थी और सब मिलाकर तो एक छोटी निर्देश पुस्तक (रेफेरेन्स बुक) का काम दे सकती थी यह विशेष निवन्ध उन लोगों के लिये जो उत्तम जीवन के लिये प्रयास करते हों स्वयं की सहायता करने में अतीव लाभदायक प्रमाणित होगा।

प्रथम अध्याय

मितव्ययता और ऋण की समस्या

ग्रामीण ऋण दाता समितियां : रेफेसिन प्रयोग

यह एक बहुत ही पुराना प्रयोग है, जो कि आरम्भ में जर्मन राइन लैंड के कुछ छोटे जिलों में आरम्भ हुआ था किन्तु जो आज विश्व के अनेक देशों में प्रचलित हो गया है। आज भी यह प्रयोग उपयोग के लिये उतना ही ठीक है जितना कि तब था क्योंकि यह जिस प्रकार के सामाजिक व आर्थिक वातावरण में आरम्भ हुआ था आज भी बहुत कुछ अंशों में वही वातावरण मिल जाता है। आज की परिस्थितियों के लिये यह विशेष रूप से शिक्षाप्रद इसलिये भी है कि इसमें मौलिक और स्थाई प्रयोग के सब तत्त्व तो हैं ही साथ ही साथ इसमें भविष्य के संभव सुधारों के लिये भी प्रर्याप्त सुझाव मिल जाते हैं।

आर्थिक एवं सामाजिक वातावरण :

राइन तथा इसकी सहायक नदियों के मध्य वेस्टर वाल्ड का ऊंचा समतल कठोर और अनुपजाऊ जिला है। जिस समय यह प्रयोग आरम्भ किया गया था जिसका वर्णन नीचे दिया जा रहा है वहां केवल अधभूखे पशु तथा राई, गेहूं तथा आलू मिल सकते थे। परिवहन के साधन अपर्याप्त थे। भूखे, नंगे और बेघरबार किसान सूदखोरों की दया पर आश्रित थे। उनके मकानों को रहन रख दिया गया था यहां तक कि उनके क्षुधा पीड़ित पशु तक भी साहूकारों के चंगुल में फंसे हुये थे।

फसल के खराब होने के कारण १६४६-४७ का शीत एक भयंकर अकाल का शीत बन गया। उन दिनों बेचारे किसानों को खाने के लिये वन्यकाशिनी तथा गोभी से तैयार किया हुआ साग भी मुश्किल से मिल सकता था।

प्राथमिक प्रयास :

इस समय विलियम रेफेसिन उस प्रदेश में वेयरकुश का मास्टर था। यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि उसने सर्व प्रथम अपना ध्यान पाठशाला के पुनर्निर्माण, समाज की सड़कों तथा गलियों के सुधारने में और नये मकान बनवाने में लगाया।

जब अकाल पड़ा उस समय कुछ समृद्धिशाली लोगों के सहयोग से उसने एक उपभोक्ता सहकारी समिति बनाई। यह समिति इस आधार पर बनी थी कि इसके द्वारा नफा न उठाया जाये। इस सहकारी समिति ने दालें तथा आलू जुटाये, एक रोटी बनाने की भट्टी (बेकरी) बनाई जो निर्धन लोगों को बाजार दर से भी कम मूल्य पर रोटियां देने लगी (और इस कारण सारे प्रदेश में रोटी का मूल्य फिर गिर गया)। उसी प्रकार के अन्य सामूहिक कार्यों द्वारा आगामी बसन्त में बीज भी खरीदा गया और किसानों को बिना कर्ज के झंझट में पड़े यह बीज आसानी से मिलने लगा।

इस प्रकार इस संकट पर तो किसी प्रकार काबू पा लिया गया किन्तु रेफेसिन ने यह भी जान लिया कि यद्यपि अकाल से जिले के किसानों की दशा बहुत खराब हो गई है किन्तु फिर भी यह प्रभाव वास्तव में स्थाई कारण अर्थात् ऋण ग्रस्तता से संबंधित था। इस प्रकार की परिस्थितियों के उपयुक्त उपभोक्ता सहकारी समिति की सफलता ने एक नई दिशा में संकेत कर सहकारी प्रयासों का मूल्य भी भली भांति प्रकट कर दिया था।

शीघ्र ही फैलमर्स फील्ड में, जहां रेफेसिन १६४८ में बर्गो मास्टर हो गया था उसने अपने विचारों को कार्य रूप में परिणित करना आरम्भ कर दिया। ऋण में पड़े पशुओं को उबारने के लिये उसने दिसम्बर १६४६ में फैलमर्स फील्ड निर्धन कृषक सहायक समिति स्थापित की।

इस कार्य के लिये उसने साठ ऐसे व्यक्तियों को लिया जिनके पास साधनों की प्रचुरता थी तथा जो सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से अपनी सामर्थ्य पर समिति के कर्जे को उतारने की गारंटी देने के इच्छुक थे। हम देखते हैं कि इस प्रकार रेफेसिन सिद्धान्तों में से एक आधारभूत सिद्धान्त का निर्माण सैद्धान्तिक विचारधाराओं के आश्रय पर न हो कर प्रथमतः एक सामयिक आवश्यकता के कारण ही हुआ।

समिति ने पशु खरीद कर उन्हें बाद की अदायगी के आधार पर किसानों को बेच दिये। यह प्रबन्ध प्रायः ५ वर्ष के समय के लिये हुआ करता था किन्तु यह हल संतोषप्रद बिल्कुल नहीं था; एक तो यह बहुत ही जटिल था दूसरे अधूरा था क्यों कि इसमें ऋण की वास्तविक सूरतों को पूरा करने के साधन नहीं थे।

अतएव अब किसानों को नकद धन उधार देने की सुविधा का निर्णय किया गया। रेनिश कस्बों के एक पूंजीपति से बड़ी कठिनाई से २००० थेलर का धन लिया गया। किन्तु सदस्यों की संयुक्त और व्यक्तिगत देयता को धन्य है जिसके फलस्वरूप रिलीफ (सहायता) सोसाइटी ने उधार बैंक आरम्भ कर दिया और कुछ समय उपरान्त ही बचत बैंक का काम भी आरम्भ कर दिया। उधार लेने वालों को तत्काल लाभ हुआ और इसका प्रभाव सारे प्रदेश में भी अनुभव किया गया, क्योंकि व्यावसायिक ऋणदाताओं को भी मजबूर होकर अपने कर्जदारों को उचित दरों पर ऋण देना पड़ा।

इस प्रयास की सफलता के बावजूद भी इसमें निहित सिद्धान्त शीघ्र ही लोकप्रिय न हो सके। संयुक्त तथा व्यक्तिगत असीम देयता का विचार उस समय के लिये बिल्कुल नया था, तथा ग्रामीण जनता के प्रवृत्तिजन्य अविश्वास के दृष्टिकोण के भी विरुद्ध था। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान में रखने की बात है कि उधार बैंक उस समय सहायता करने वाली समिति की भांति ही अधिक दिखाई देने लगी थी क्योंकि इसके सदस्य इस समय तक उधार देने वाले ही रहे उससे लाभ उठाने वाले नहीं। इस समय तक भी पारस्परिक सहायता का विचार लोगों के दिमागों में दान देने ही का एक रूप था।

रेफेसिन को अपने प्रयोग को नवीन रूप देने व सुधारने के लिये पांच वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ी। यह कार्य उसने हैडर्सडोर्फ में किया

जहां कि उसे अप्रैल १६५२ में बर्गो मास्टर की जगह परिवर्तन कर दिया गया था। अपने जिले के ५२ व्यक्तियों को मिलाकर उसने हैडर्सडोर्फ बेनेवोलेंट सोसाइटी (हैडर्सडोर्फ उपकारी समाज) की स्थापना की। इस तृतीय स्थापना में दो नये गुण थे। प्रारम्भ में तो यह बहुद्देशीय सहकारी समिति थी जिसकी कार्यवाहियां आर्थिक के अतिरिक्त नैतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी फैली हुई थी। यह बेघर-बार बच्चों को सहायता और शिक्षा देती थी, बेरोज़गार और कारावास से मुक्त कैदियों को रोजगार देती थी, और साथ ही इसने लोकप्रिय पुस्तकालयों की भी स्थापना की थी। इसके प्रोत्साहन दाताओं की नैतिक विचारधाराओं के फलस्वरूप ही यह पहला गुण इसमें पनप सका और इस प्रकार के प्रयासों के फलस्वरूप स्थापित सहकारी समितियों का पहला कार्य लोगों का नैतिक उत्थान ही अधिक रहा है। इसके अन्य गुणों के कारण तो लोगों में एक आन्दोलन सा ही आ गया। सोसाइटी के नियमों द्वारा यह भी घोषित किया गया कि इसकी पूंजी अविभाज्य है।

पहली ग्राम सहकारी समिति :

अनुभव से शीघ्र ही पता लग गया कि जो जो नये काम किये जाने के लिये चुने गये थे वे पुरानी संस्था और पुराने नियमों से नहीं चल सकते। १८६४ में पहले वाली उपकारी समिति के स्थान में कर्ज देने वाली संस्था (डालेहेनसकासेन्वरित) की स्थापना हुई। नई समिति के नये नियमों द्वारा अब इसका काम केवल कर्ज देना ही रह गया और इस प्रकार इसमें अब एक नया आधारभूत परिवर्तन आया। इस विश्वास से प्रोत्साहित होकर कि निर्बल व्यक्ति सम्प्रदाय के प्रयासों से अधिक से अधिक शक्ति प्राप्त कर सकेंगे रेफेसिन ने सभी प्रकार की व्यक्तिगत और सामाजिक सहायताओं का विचार छोड़ कर स्वयं सहायता तथा पारस्परिक सहायता के दो सिद्धान्तों के आधार पर उधार देने वाले बैंक की स्थापना की और भविष्य में अपने लिये ऋण की उचित आवश्यकता पूर्ति के लिये निर्धनों को भी आपस में मिलकर ही इसको पूरा करने के लिये खड़ा होना सिखलाया।

रेफेसिन सिद्धांत :

निरन्तर प्रयोगों के फलस्वरूप रेफेसिन ने अपने सूत्र को एक निश्चित रूप दे दिया जिसे हम संक्षेप में यों लिख सकते हैं :

१. सदस्यों की व्यक्तिगत तथा संयुक्त असीम देयता।
२. समिति के कार्यक्षेत्र का निर्धारण (एक ही कम्यून, (जिला) या कुछ थोड़े से कम्यून्स।
३. प्रशासनिक कार्य के लिये निःशुल्क सेवा (केवल खजांची को वेतन मिलता है)।
४. बहुत छोटे शेयर।
५. किसी भी प्रकार के लाभांश का या लाभ का न होना।
६. सोसाइटी की अविभाज्य पूंजी का निर्माण।
७. केवल सदस्यों को उधार देना और वह भी अच्छी जमानत पर।

प्रसार :

रेफेसिन द्वारा आरम्भ किया हुआ आन्दोलन पहले पहल बहुत ही शनैः शनैः चला। जर्मनी में ही ग्रामीण उधार देने वाली समितियों की संख्या १८८५ में २४५, १६४१ में ८८५, १६४८ में १८०० से भी अधिक थीं जब कि सदस्य संख्या २० लाख के लगभग थी।

गत महायुद्ध से पूर्व यह आंका गया था कि ५४ देशों में मिला कर इनकी संख्या १६००० है और १ करोड़ ७० लाख से भी अधिक व्यक्ति इससे लाभ उठाते हैं। सहकारी समितियों में इस प्रकार की समितियां सबसे अधिक प्रचलित हैं। यह एक मात्र यूरोप में ही नहीं है बल्कि अफ्रीका, अमेरिका तथा एशिया में भी प्रचलित है जहां उनकी संख्या विश्व की इस प्रकार की समितियों से भी ज्यादा है।

ग्रामीण ऋणदाता समितियों का आर्थिक तथा सामाजिक मूल्य :

सूद खोरों की कार्यवाहियों को कम करने में ऋणदाता समितियां बहुत अधिक प्रभावप्रद प्रमाणित हुई हैं। ये सूदखोरी के विरुद्ध बनाये गये कानून से भी अधिक लाभदायक यों हैं कि उधार लेने वालों की साजिश से कानून का आसानी से उल्लंघन किया जा सकता है। यदि ये समितियां न होतीं तो उधार देने वाले यही सूदखोर होते। परन्तु अब भी जहां जहां यह सूदखोर बच गया है वह केवल धन

उधार देने का काम ही नहीं करता, बल्कि गांव का सौदागर भी वही होता है। वह अपने ऋण-ग्रस्त लोगों की फसल को बेचने का काम करता है और उनकी आवश्यकता के अनुसार उन्हें बहुत सी चीजें बीज और खाद के रूप में देता है। इसलिये यदि उससे पूर्णतः छुटकारा ही पाना है तो उसके स्थान पर कोई उचित व्यवस्था करनी पड़ेगी। इसके द्वारा न केवल उधार का ही काम करवाना होगा बल्कि उसके सारे अन्य उपयोगी कामों को भी इसी के द्वारा करवाना होगा।

रेफेसिन इस तथ्य से पूर्णतया परिचित था। इसलिये उसने अपनी संस्थाओं द्वारा उन विभिन्न कार्यों को करवाना शुरू भी कर दिया। कुछ समय बाद उधार देने वाली समिति की स्थापना के साथ साथ सहायक करने वाली अन्य समितियों के संस्थापन में भी उसने सहयोग दिया। आगे के अनुभव से रेफेसिन के दोनों कार्यों की पुष्टि होती है। एक तरफ तो ग्रामीण ऋणदाता समितियों को अपने सदस्यों के लिये आवश्यक वस्तुओं को जुटाना होता है या उन लोगों को अपनी चीजें बेचने के लिये उचित मंडी तलाश करनी होती है और दूसरी ओर जब इन सहायक कार्यवाहियों का विस्तार एक निश्चित सीमा तक हो जाता है (खास तौर से जब कि वे लोग एक स्टोर की स्थापना कर लें) तो यह आवश्यक हो जाता है कि इन कामों के लिये दो अलग अलग किस्म की सहकारी समितियां भी बनाई जायें, क्योंकि उधार देने का काम अन्य कार्यों से अलग ही रहना चाहिये।

ग्रामीण ऋणदाता समितियों की सबसे बड़ी विशेषता केवल यही नहीं है कि वे अपने सदस्यों के लिये ऋण उपलब्ध कर देती हैं। वरन् इनका महत्व इस बात में है कि यह इस बात पर भी विचार करती हैं कि इन उपायों से ऋण-ग्रस्तता घटेगी, बढ़ेगी नहीं।

और यह इस कार्य को करती भी बहुत बुद्धिमत्ता से हैं। इसके सदस्य भली प्रकार जानते हैं कि उन लोगों की वास्तविक आवश्यकता और आर्थिक साधन कितने हैं और हम इस बात की भी पुष्टि कर सकते हैं कि जो कर्ज लिया गया है वह उचित काम से लिया गया है अथवा नहीं। इसके अतिरिक्त सहकारी समिति इसलिये भी बड़ी सतर्कता से काम लेती है कि इसके दिये हुये कर्जों की गारंटी इसके सदस्यों की व्यक्तिगत और संयुक्त असीमित देयता से होती है।

प्रत्येक ग्रामीण ऋणदाता समिति जिसका प्रबन्ध बहुत सुन्दर ढंग का होता है, कर्जों को देने का ऐसा आयोजन करती है कि यह कर्ज उपयोग के उपरान्त अपनी अदायगी की सूरत भी पैदा कर सके। कर्ज कुछ शर्तों पर दिया जा सकता है जैसे कि कर्ज लेने वाले ने पहले धन संचय का प्रयास किया हो या किसी विशेष प्रकार के बीज को काम लेने पर, या खेत को एक खास ढंग से संवारने इत्यादि पर ध्यान दिया हो।

इस प्रकार आप देखेंगे कि ग्राम ऋणदाता समितियां कर्ज लेने वालों को सूदखोरों के चंगुल से ही मुक्त नहीं कर देतीं बल्कि वे उनको अपनी बुराइयों से या उसकी दैनिक दिनचर्या की बुरी आदतों से भी मुक्त कर देती हैं। उन्हें नियमित होने के लिये, धन बचाने के लिये, दूरदर्शिता काम में लेने के लिये, तथा उन्हें उत्तम टैकनीकों को काम में लेने के लिये भी प्रोत्साहित कर सकती हैं। वे आर्थिक सुधार के दृष्टिकोण से ही उत्तम नहीं हैं, किन्तु साथ ही साथ शैक्षिक दृष्टिकोण से भी मूल्यवान हैं।

चीनी अंतर्राष्ट्रीय अकाल सहायता कमीशन का सहकारी और शैक्षिक कार्य :

चीनी अन्तर्राष्ट्रीय अकाल सहायता कमीशन का इतिहास एक प्रकार से सहायता कार्य का इतिहास है जो आगे चल कर शीघ्र ही अकाल के रोक थाम के कार्यों में परिणित हो गया और जिसके द्वारा एक ओर तो सहकारिता के विचार का आविष्कार हुआ तथा दूसरी ओर इसी दौरान में वास्तविक समस्याओं के सम्पर्क से धीरे धीरे उन सिद्धान्तों तथा रीतियों का भी जन्म हुआ जिनके कारण आगे चलकर इस महान् देश में विशाल स्तर पर सहकारिता आन्दोलन पनप सका।

समस्या :

चीनी अंतर्राष्ट्रीय अकाल सहायता कमीशन (सी० आई० एफ० आर० सी०) १९२०-२१ के अकाल के समय स्थापित किया गया था। यह अकाल शीघ्र ही उत्तरी चीन के पांच प्रान्तों में फैल गया तथा इसने लगभग तीन करोड़ मनुष्यों को हिला डाला। १९३३ में "पीली नदी" की बाढ़ के कारण एक बार फिर इसकी आवश्यकता पड़ी।

इसका काम अकाल की पुनरावृत्ति को कम करना तथा सहायता के लिये किये जाने वाले कार्यों के ऊंचे खर्चों को घटाना था। १ नवम्बर १९३९ को प्रकाशित एक बुलेटिन इसकी कार्य करने की योजना का वर्णन करता है तथा इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि इसने समस्या को किस प्रकार सम्भाल लिया था।

इस प्रोग्राम में सबसे पहले तात्कालिक सहायता के कार्यों को रखा गया था, जैसे सार्वजनिक रसोईघर, भोजन तथा धन वितरण (धन-वितरण श्रमदान के एवज में होता था), चिकित्सा इत्यादि।

किन्तु खास जोर रोकथाम के उपायों पर दिया जाता था जो कि अकाल से लड़ने का स्वयं एक बहुत उत्तम साधन है और जो अकाल के पूर्व काम में लिया जा सकता है। सहायता कार्य के लिए रचनात्मक कार्यों का उपयोग किया जाता है और सबसे ऊपरी स्थान पाता है। उसका उद्देश्य तो अकालग्रस्त लोगों को जीविका कमाने का साधन उपलब्ध करना है। इसके द्वारा उन लोगों को ऐसे काम दिये जाने चाहिए जिससे कृषि को भी सहायता मिले, उत्पादन की वृद्धि हो सके तथा साथ ही साथ इसकी गारंटी भी कि उपरोक्त परिस्थितियों का सुधार स्थाई रहेगा।

इस प्रकार के कामों में सिंचाई के लिए नहरें बनाना, कुएं खोदना, झरनों की मिट्टी निकाल कर उन्हें साफ करना, बांध बनाना, व सड़कें बनाना इत्यादि सम्मिलित हैं।

अन्य रचनात्मक सुझावों में वैज्ञानिक कृषि प्रणालियों का ढंग आरम्भ करना, इस काम के लिए सार्वजनिक शिक्षा बढ़ाना, आदर्श फार्म स्थापित करना, व्यावहारिक ढंग की पुस्तकें तथा प्रचार पत्र बांटना, तथा कृषि पाठयक्रम द्वारा ग्राम समाजों का निर्माण करना इत्यादि भी सम्मिलित है।

"किन्तु उचित आर्थिक व सामाजिक दशा में सुधार हुए बिना कृषि का सुधार असंभव है।" इस कमीशन के इस मत के अनुसार यह सुधार विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों द्वारा ही लाया जा सकेगा जैसे ऋणदाता समिति, उपभोक्ता समिति, ग्राम सप्लाई समिति इत्यादि। कमीशन ने यह भी लिखा है कि ग्राम और कुटीर धंधों को प्रोत्साहन

दिया जावे। इस प्रोग्राम को चलाने के लिए कमीशन ने सिंचाई की नहरें, सड़कें, बांध इत्यादि के निर्माण में पर्याप्त धन तथा समय लगाया जिनके बारे में विस्तृत सूचना देने की यहां आवश्यकता नहीं है।

१९२२ में ऋण तथा आर्थिक सुधार के लिए एक कमेटी की स्थापना हुई। चीन के ग्रामों के रहने वालों की रहने की दशा का अध्ययन करने के उपरान्त तथा अन्य देशों में उसी प्रकार की दशा को सुधारने के ढंगों का अध्ययन करके इस कमेटी ने १९२३ में ग्राम सहकारिता पर एक उपसमिति बनाने का निश्चय किया।

ग्राम सहकारिता पर उपसमिति का कार्य :

हल का ढंग :---ऋणदाता तथा ग्राम सुधार समिति ने यह निष्कर्ष निकाला कि बुराई की जड़ सूद की ऊंची दर, तथा वह ऋण है जिसके कारण किसानों का नाश हो जाता है तथा उनके खेतों की दशा निरन्तर गिरती जाती है।

इस बुराई से पिंड छुड़ाने के लिए तथा गांवों से शहरों की ओर जाने वाले धन के प्रवाह को रोकने के लिए ग्राम सहकारिता की उपसमिति से कहा गया कि वह रेफेसिन किस्म की ग्रामीण ऋणदाता समितियां स्थापित करने की योजना बनाये।

प्रतिकूल परिस्थितियां :

समिति के मार्ग में बहुत सी विशेष कठिनाइयां भी आईं जिनके कारण यह प्रयोग और भी शिक्षाप्रद हो गया है :

१. यह काम जटिल था क्योंकि इसको प्रवर्तक, प्रबन्धक तथा बैंक की भांति कार्य करना था।

२. जिन लोगों को यह काम चलाना पड़ रहा था उन्हें व्यावहारिक अनुभव बिल्कुल नहीं था।

३. उन लोगों के पास आर्थिक साधन भी बहुत कम थे। सी० आई० एफ० आर० सी० की कार्यकारिणी समिति द्वारा जून १९२२ में ५००० डालर की सहायता मिली थी।

४. यह पूर्णतया एक नया ही क्षेत्र था। एकाध इक्के दुक्के तथा बिखरे हुए प्रयासों (जिनमें से बहुत प्रमुख प्रयास शंघाई

विश्वविद्यालय द्वारा आरम्भ किये गये थे) के अतिरिक्त सहकारिता आन्दोलन अभी मुश्किल से शुरू ही हुआ था। 'सहकारिता' का नाम भी अधिकांश लोगों के लिए नया था और ग्राम सहकारिता की उपसमिति को इसकी कार्यवाही को स्पष्ट करने में तथा लोगों के दिमागों से यह भ्रम निकालने में कि सहकारिता कोई दान या राजनीति है, बहुत कठिनाई उठानी पड़ी।

इन परिस्थितियों के कारण उपसमिति को एक छोटे पैमाने पर प्रयोग आरम्भ करना पड़ा, जो शनैः शनैः तथा सतर्कता से विकसित किया गया।

रीति :

जिस प्रकार कि उपसमिति के सदस्यों को इस काम के लिये अपने आपको ठीक प्रकार से योग्य बनाने के लिये पहला काम रेफेसिन सहकारी संस्थाओं के सिद्धान्त और रीतियों को सीखना पड़ा था, उसी प्रकार जिन लोगों में उन्हें काम करना था उन लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिये पहला कदम यह उठाया गया कि इन बातों को सीखने, सोचने और आपस में स्वयं को संगठित करने के साधनों को भी उन लोगों के लिये जुटाना था। इस कार्य के लिये अप्रैल १६२३ में ग्रामीण ऋणदाता सहकारी समितियां, बचत तथा मंडी समितियों के लिये "माडल कन्सटीट्यूशन [आदर्श संविधान] प्रकाशित करवाया गया तथा वितरण किया गया।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान में रखने योग्य एक बहुत दिलचस्प बात है कि, सदैव के विपरीत; उपसमिति [सब कमेटी] के दिमाग में यह बात थी कि किसान प्रत्येक नई व विदेशी वस्तु के लिये अविश्वास लिये बैठा है। इसलिए उसने पहले लोगों को अपने मत ग्रहण करने के लिये कोई प्रयास नहीं किया केवल आदर्श संविधान तथा उसमें निहित सिद्धान्तों को लोगों को एक बार बता भर दिया। उस पर टिप्पणी करने तथा लोगों को अपनी बात से सहमत कराने के कार्य को गाँव के स्थानीय नेताओं पर छोड़ दिया गया।

प्रचारक लोग जो स्वेच्छा से आगे बढ़ कर आये, उन लोगों का उत्साह और ज्ञान प्रवर्तकों के सम्पर्क में आने से तथा नये पत्रकों आदि को पढ़ने से बहुत बढ़ गया।

जब बड़े लम्बे चौड़े वाद विवाद के बाद कुछ किसान लोगों ने स्वेच्छा से इस विचार को स्वीकार कर लिया और आदर्श संविधान से अपनी जानकारी काफी बढ़ा ली तो उन्होंने इस संविधान पर आधारभूत एक समिति बना ली।

यह केवल उस समय की ही बात है कि जब सी० आई० एफ० आर० सी० ने [अपनी उपसमिति के द्वारा] अपना प्रभाव जमाने और सहायता देने का कार्य आरम्भ किया था। किन्तु अभी तक भी यह सहायता आर्थिक सहायता का रूप नहीं प्राप्त कर पाई थी। अभी तो सावधानी से सारे काम की निगरानी मात्र रखना, यह आरम्भ किया गया था। जिस समिति का निर्माण हो चुका था उसे अपनी सहकारी शिक्षा पूर्ण करने के लिये सहायता दी गई उसको पैम्फलेट तथा मासिक बुलेटिन भेजे जाते थे, इसके अतिरिक्त उसके सदस्यों को एक वार्षिक प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम के लिये भी आमंत्रित किया जाता था।

कोई समिति सी० आई० एफ० आर० सी० से उसी अवस्था में ऋण के लिये प्रार्थना कर सकती थी जब इसे स्वीकृत करलिया गया हो अर्थात् जब इसके सदस्यों के साख की भली भांति जाँच हो गई हो (कभी कभी एक वर्ष तक भी) तथा सी० साई० एफ० आर० सी० के इंस्पैक्टर ने यह सूचित कर दिया हो कि इसका संगठन बहुत अच्छा और दृढ़ है।

इन्सपेक्टर नियमित रूप से सहकारी संस्थाओं का दौरा करने जाया करते थे, उनकी कार्यवाहियाँ देखते थे और सुधारों के लिये सुझाव देते थे। सहकारी समितियों को प्रश्नोत्तर के रूप में सी० आई० एफ० आर० सी० को एक मासिक रिपोर्ट देनी पड़ती थी। ज्यों ही किसी सहकारी समिति की स्थापना हुई और उन्होंने कार्य आरम्भ किया कि लोगों को अपनी समस्याओं को सुलझाने की योग्यता, तथा अपने काम की प्रमुखता तथा समाज के सामान्य जीवन में उनके प्रभाव के आधार पर (शिक्षा, स्वास्थ्य, बुरी आदतों का सुधार, इत्यादि) उन्हें

पाँच श्रेणियों में विभक्त कर दिया जाता था। भारत में भी इसी रीति द्वारा इंस्पेक्टर के निरीक्षण में पूर्णता आ जाती है, साथ ही साथ इसका अनुमोदन और निर्देशन भी हो जाता है।

उधार देना व बचत करना :

सी० आई० एफ० आर० सी० से लिये हुए कर्जे से सहकारी समितियों के लिये अब यह सम्भव हो गया कि वे अपने सदस्यों को कर्ज दे सकें। सी० आई० एफ० आर० सी० ६ प्रतिशत से अधिक व्याज की दर नहीं रख सकती थी। सहकारी समिति अपने सदस्यों से अधिकतम १२ प्रतिशत दर पर व्याज ले सकती थी।

प्रथम वर्षों में दिये गये कर्ज की रकम बहुत थोड़ी थी; जिससे ज्ञात होता है कि कर्ज समाज के केवल बहुत ही निर्धन व्यक्तियों को दिया जाता था। उदाहरण के लिये १९२४ से १९२८ के आरम्भ तक दिये गये ३७५० कर्जों का विवरण इस प्रकार का है :

५५७	किसानों ने	सोसाइटी से	१०डालर	प्रति व्यक्ति से भी कम	ही कर्ज लिये
२२२३	”	”	२०	”	”
४२६	”	”	३०	”	”
१५७	”	”	४०	”	”
१०५	”	”	५०	”	”
१०७	”	”	५०	”	अधिक

इस समय में सी० आइ० एफ० आर० सी० द्वारा दिया गया गया कुल कर्ज ८७,३५२ डालर था। कमीशन की रिपोर्ट (नवम्बर १९२८) के अनुसार यही धन जिले में प्रचलित सूद की दर से तीन वर्षों में ९४,२३३ डालर तो व्याज ही के रूप में जमा कर लेता, किन्तु उतने ही समय के लिये कमीशन द्वारा वसूल की गई ६ प्रतिशत की दर से केवल १५,६०५ डालर ही व्याज के आये। इसका आशय है कि यदि कर्ज लेने वालों ने सूदखोरों से धन लिया होता तो उन्हें ७८,५२७ हजार डालर अधिक देने पड़ते। रिपोर्ट ने बताया कि "इस अन्तर से स्थानीय कीमतों पर ३००० लोगों को एक वर्ष के लिये खाना खिलाना संभव हो सकता था।"

कर्ज का निर्धारण किस काम के लिये हुआ, कितना हुआ, और यह निर्धारण किस ढंग पर हुआ यह सब कुछ जानना भी काफी दिलचस्प है।

होयी प्रान्त में जहां ग्रामीण ऋणदाता समितियों की स्थापना सर्व प्रथम हुई थी, १९२४ से जून १९२५ तक ४० प्रतिशत के लगभग धन कृषि (बीज, चारा, खाद, पशु तथा खेती के औजार) के लिये दिया गया, २० प्रतिशत मौजूदा कर्ज की अदायगी के लिये, ४० प्रतिशत ग्राम और कुटीर धंधों की सहायता तथा कुछ व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिये था। ११ वर्ष उपरान्त सी० आई० एफ० आर० सी० की रिपोर्ट ने बताया कि उसी प्रान्त में कुल कर्ज का ६४.६ प्रतिशत कृषि के लिये (जिसमें से २२ प्रतिशत पशु खरीदने के लिये, और १६.८ प्रतिशत खाद के लिये) १३ प्रतिशत घरों की मरम्मत के लिये तथा केवल ०.९८ प्रतिशत मौजूदा कर्ज की अदायगी के लिये था।

कर्ज के उपयोग पर भी सहकारी संस्थाओं का, उनके सदस्यों का, तथा सी० आई० एफ० आर० सी० का नियन्त्रण था। सहकारी संस्थाओं को इस मामले तथा अन्य मामलों पर सी० आई० एफ० आर० सी० को रिपोर्ट भी देनी पड़ती थी।

उन्हीं दिनों जब कि यह कर्ज दिया गया था, बचत करने की भी एक पद्धति का संयोजन किया गया था। सहकारी संस्थाओं के आदर्श संविधान के साथ इसके लिये भी विशिष्ट नियम प्रकाशित किये गये थे। बचत की निरन्तर वृद्धि ने यह सिद्ध कर दिया था कि निर्धनता घट रही है और सी० आई० एफ० आर० सी० किसानों के हितार्थ वह धन गांवों में ही रखने में समर्थ हो चुकी है जो पहले वहां से निकल कर शहरों में पहुँच जाया करता था। इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि आरम्भ में चाहे सहकारी आन्दोलन में उधार की सुविधा ने ही लोगों को आकर्षित किया हो, फिर भी वे लोग कभी भी दूरदर्शिता तथा पारस्परिक सहायता के लिये असमर्थ नहीं थे।

इस पारस्परिक सहायता के अतिरिक्त अन्य प्रमाण भी हैं। पहले वर्षों में भी सहकारी संस्था के २४ प्रतिशत सदस्यों ने कर्ज नहीं मांगा। सी० आई० एफ० आर० सी० की वार्षिक रिपोर्टों से पता चला है कि पहले वर्षों के २० प्रतिशत शेयर तथा १९३६ के ३३ प्रतिशत शेयर

(होयी प्रान्त में) स्वेच्छा से एकत्रित किये गये थे। इनके अतिरिक्त सदस्य बनने के लिये आवश्यक शेयर इस संख्या से अलग थे। रिपोर्टों से यह भी ज्ञात होता है कि सदस्य लोग अग्रिम लिये हुये धन को वापिस देने में भी समय के बहुत पाबन्द थे।

अन्य सहकारी कार्यवाहियां :

सी० आई० एफ आर० सी० ने पहले मुख्य रूप से ग्रामीण ऋण-दाता समितियों के संगठन व कार्य का ही प्रयत्न किया। किन्तु १९२८ के लगभग ही इसने होयी प्रान्त व अन्य स्थानों में सहकारिता के आधार पर कृषि की वस्तुओं के विक्रय के कार्य को भी प्रोत्साहन दिया। इन वस्तुओं में मुख्य रूप से कई थीं। १९३२ में ग्राम निर्माण की उप-समिति ने उन ग्राम समुदायों के लिये विक्रय और वितरण की एक सामान्य योजना बनाई, जिनमें पहले ही इन चीजों का संगठन हो गया था। कमीशन के भ्रमण करने वाले एजेंटों (ट्रेविलिंग एजेंट्स) को इस प्रकार के आदेश मिले थे कि ये इस कार्य में किसानों की भर-सक सहायता करें।

इसके अतिरिक्त स्वीकृत सहकारी ऋणदाता समितियों को शनैः शनैः सामूहिक धान्यागार खोलने की भी आज्ञा मिल गई थी। यह कार्य केवल अकाल के बचाव करने के साधन की भांति ही नहीं किन्तु मांग के अनुसार विक्रय को भी संयोजित करने के लिये थे तथा उन्हें अपनी उत्पादित वस्तुओं के विक्रय का प्रबन्ध करने की भी आज्ञा मिल गई थी। १९३६ में अकेले होयी प्रान्त में ही १२१७ ऋण समि-तियां सप्लाई का प्रबन्ध करने में लगी थीं, ११५२ उत्पादित वस्तुओं के विक्रय की देखभाल करती थीं, तथा १२ ने सामूहिक धान्यागारों का प्रबन्ध किया था।

सामाजिक कार्यवाहियाँ :

सहकारी समितियों ने जुये तथा शराबखोरी को भी बंद करने का प्रयास किया है, तथा विवाह, मृत्यु व अन्य उत्सवों के खर्चों को भी कम करने का प्रयास किया है। उन्होंने कुयें खोदे, सड़कें बनायीं, पुल बनाये और बहुतों की मरम्मत भी की। उन लोगों ने गांवों में टीका भी आरम्भ किया, प्राथमिक पाठशालायें स्थापित कीं, (इनमें ग़ैर सदस्यों

के भी बच्चे आ सकते हैं) तथा प्रौढ़ लोगों को प्रोत्साहित किया कि वे लोग फालतू समय में यहाँ आकर बैठें। सी० आई० एफ० आर० सी० ने शनैः शनैः गश्ती पुस्तकालयों की संख्या बढ़ा दी। होयी प्रांत की १९३६ की रिपोर्ट से यह स्पष्ट है कि १९४ सहकारी समितियों ने लड़कों व आदमियों के लिये स्कूलों की स्थापना की, २९ ने स्त्री व बालिकाओं के लिये स्कूल खोले, १३४ समितियों ने आपसी झगड़े के निबटाने के लिये लोगों को समझौता करने वाली समितियों के पास जाने को प्रोत्साहित किया तथा कचहरी में जाने से रोका। १५८ ने वृक्ष लगाये, १४६ ने सड़कें बनवाइ, ९१ ने कृषि के तरीकों में सुधार किये, ६६ ने भूमि जोतने में पारस्परिक सहायता को संगठित किया, ४५ ने सार्वजनिक स्वास्थ्य का प्रबन्ध किया इत्यादि इत्यादि।

सहकारी प्रशिक्षण :

इंस्पैक्टरों के निरीक्षण तथा अनेक पुस्तकों के वितरण के बावजूद भी अनुभव ने शीघ्र ही यह बता दिया कि सहकारी कार्यकर्ताओं तथा प्रबन्धकों के लिये सहकारिता की और भी अधिक व्यावहारिक व सैद्धान्तिक ज्ञान होना चाहिये। इस कार्य के लिये सी० आई० एफ० आर० सी० ने प्रान्त, काल तथा आवश्यकता के अनुसार विभिन्न तरीके काम में लिये हैं। शीत काल में इसने सहकारी प्रशिक्षण स्कूलों की स्थापना की। पहले स्कूल स्थापना नवम्बर १९२५ में पैकिंग में हुई जिसमें ५४ सहकारी समितियों के (जिनमें से कुछ बन गई थीं, कुछ बन रही थीं) १०४ प्रतिनिधि आये थे।

इस प्रकार एक सप्ताह वाले पाठ्यक्रमों की संख्या बढ़ गई और ये पाठ्यक्रम विभिन्न जिलों में आरम्भ किये गये। आरम्भ में तो उनका खर्च तथा संगठन का कार्य कमीशन ही करता था, किन्तु शनैः शनैः संगठन तथा आर्थिक सहायता का कार्य समितियों ने अपने हाथों में ले लिया।

१९३५-३६ के वित्तीय वर्ष में ९३ भागों में होयी में प्राथमिक पाठशालाओं का संगठन हुआ। इनमें १८९४ सोसाइटियों के ६८९३ सदस्य आया करते थे। ८ भागों ने अध्यापकों के लिये भी स्कूल खोले।

इनमें २१४ आदमी आया करते थे। "पीली नदी" की बाढ़ से पीड़ित स्थानों में काम के लिये विशिष्ट पाठशालायें भी आरम्भ की गईं।

परिणाम :

१६२३ के दिसम्बर में ८ ऋणदाता समितियाँ शुरू की गईं, यद्यपि उनमें से किसी को भी अनुमोदित नहीं किया गया था। उनमें कुल मिलाकर २६२ सदस्य थे। दिसम्बर १६३६ में अकेले होयी प्रान्त में ३२१४ सहकारी संस्थायें थीं (जिनमें १०२१ को अनुमोदित कर लिया था) इसकी सदस्य संख्या ६६२६६ (जिनमें से २७,६२८ अनुमोदित ग्रुप में नहीं थी)।

इन दो वर्षों में उसी प्रान्त में सहकारिता की सम्पूर्ण धनराशि २८६ डालर से बढ़कर ११५०८१६ डालर हो गयी। १६२४ में सहकारी संस्थाओं को दिया गया ऋण बढ़कर ३२६० डालर हो गया। १६३६ में वे ऋण बढ़कर १०४७६० डालर हो गये, और इन सारे वर्षों में यह द्रव्य कुल ७६६,५६० डालर हो गया।

इसी प्रकार बचत और चालू खाते का धन भी काफी बढ़ गया। होयी प्रान्त में (जिसमें सी० आई० एफ० आर० सी० का काम सबसे अधिक दिलचस्प है) १६२५ में कुल धन का २-५ प्रतिशत (२६१ डालर) बचत का था, तथा १६३६ में ११ प्रतिशत, (१२७८६६ डालर) पूरक शेअर वाले इसमें शामिल नहीं थे जो एक प्रकार की बचत ही होती है।

सी० आई० एफ० आर० सी० का काम प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों ही तरह का रहा है। पहले तो कुछ प्रान्तीय सरकारें इसको अच्छा नहीं समझती थीं किन्तु जब इसके काम का मूल्य मालूम हुआ और इसकी कार्य शैली में दृढ़ता आ गयी तो बहुत सी सरकारों ने, जिन्हें ग्राम पुनर्निर्माण के कार्य में दिलचस्पी थी, कमीशन से इसकी सहायता के लिये याचना की। इसके प्रकाशन भी उधार लिये गये तथा इसके अनुभवी कार्यकर्ताओं की सेवाओं को भी अपने यहां के लिये मांगा गया। सहकारी कानून बनने से पूर्व (जिनका आरम्भ १६३४ में हुआ तथा शनैः शनैः १ सितम्बर १६३५ में लागू किये गये) सी० आई० एफ० आर० सी० द्वारा तैयार किया हुआ संविधान ही विभिन्न प्रान्तों में सहकारी संगठनों की स्थापना के काम में आता था।

इस प्रकार देखने से विदित होगा कि १६३५ में चीन में स्थापित २६२२४ समितियों (सदस्य संख्या १००४४०२) की स्थापना का श्रेय यदि सी० आई० एफ० आर० सी० के प्रभाव और कार्य को दिया जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी।

इन समितियों में से ५६ प्रतिशत ऋणदाता समितियाँ थीं, ६० प्रतिशत फार्म समितियाँ थीं जो इसकी चीजें बेचती थीं, ६ प्रतिशत समितियाँ उत्पादन के लिये थीं, ४ प्रतिशत सेवा सहकारी समितियाँ थीं, ३ प्रतिशत सप्लाई समितियाँ थीं, तथा १५ प्रतिशत अन्य विभिन्न कार्यों में व्यस्त थीं।

१६३६ की मार्च से "सी० आई० एफ० आर० सी०" की सहकारी कार्यवाहियां जो अन्हेवी, होनान, कियांगसी तथा होयी में फैली हुई थीं, अब नेशनल इकोनामिक कौंसिल की कोआपरेशन कौंसिल को हस्तांतरित कर दी गई हैं। इस कौंसिल की स्थापना १६३३ में पुनः-निर्माण के कार्य को बड़े पैमाने पर तैयार करने, संयोजित करने व चलाने के लिये की गई थी। उसी प्रकार सी० आई० एफ० आर० सी० तथा कोआपरेशन कमीशन आफ नोर्दर्न चाइना (एक सरकारी संस्था) के बीच हुये समझौते के अनुसार इस संस्था को होयी प्रान्त में शनैः शनैः सारी सहकारी जिम्मेदारियों को वहन करना था।

सन् १६३६ से आगे के काल के लिये सी० आई० एफ० आर० सी० सहकारी उत्थान का सारा प्रबन्ध व संचालन जनता के अधिकारियों को सौंपने को उत्सुक थी और अपने आपको केवल अनुसंधान कार्य में ही रत रखना चाहती थी ताकि नये सूत्रों का आविष्कार और परीक्षण संभव हो सके।

१६३५ में सी० आई० एफ० आर० सी० के भूतपूर्व सेक्रेटरी के निर्देशन में उद्योग मंत्रालय में सहकारी विभाग खोला गया। थोड़े दिनों पश्चात् यह विभाग सामाजिक मामलों के मंत्रालय से संबंधित सहकारिता का केन्द्रीय प्रशासन विभाग हो गया।

१६३६ में सरकार चीनी सहकारी लीग के निकट सम्पर्क में रह कर काम किया करती थी। इस प्रकार प्रबन्ध से अर्थात् नये बैंकों की आर्थिक सहायता, तथा बहुत से सांस्कृतिक व सामाजिक संगठनों की सहायता (जैसे "मास एजूकेशन मूवमेंट", यूनिवर्सिटी आफ

नानकिंग, नेन्की इंस्टीटयूट, चोपिंग एग्रीकलचरल कालेज, नेशनल क्रिश्चियन कौंसिल) ने इस आन्दोलन की काफी मदद की तथा इसकी सदस्य संख्या में भी काफी वृद्धि की।

अप्रैल १९४८ में इस आन्दोलन में १६२,४१४ प्राथमिक सोसाइटियां थीं जिनकी सदस्य संख्या २२,९५२,००० थी। ग्रामीण ऋणदाता समितियां जिनकी संख्या सबसे अधिक है, कुल संख्या की ३० प्रतिशत से कुछ ही ऊपर हैं। इसका कारण यह है कि अन्य समितियां भी बहुत तेजी से आगे बढ़ रही हैं जैसे कृषि उत्पादक समिति (२२.३ प्रतिशत), उपभोक्ता समिति (१३.८ प्रतिशत), कृषि उत्पादन को बेचने वाली समितियां (१३.७ प्रतिशत), सहकारी सप्लाई समितियां (१०.३ प्रतिशत) इत्यादि।

सहकारिता आन्दोलन की उन्नति की प्रमुखता चीन में संविधान में भी परिलक्षित होती है, जिसके अनुसार "सहकारी संस्थाओं को सरकार द्वारा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये तथा उनकी रक्षा भी की जानी चाहिए"।

भारत के एक गांव में उधार देने वाली सहकारी समिति :

बड़ौदा राज्य का गांव मुवेल भारत के हजारों अन्य गांवों की भांति ही है। इसकी सहकारी ऋणदाता समिति को १९१३ में रजिस्टर किया गया था। अपने प्रारम्भिक दिनों में इसे भी बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। साहूकारों का गांव के लोगों पर इतना गहरा असर था कि गांव के लोग समिति के रजिस्ट्रेशन के लिये दरख्वास्त देते भी भय खाते थे।

किसी न किसी तरह से इसने ३१ सदस्यों के साथ कार्य आरंभ किया था। आज अब इसकी सदस्य संख्या बढ़कर १०९ (१९४५-४६ में) हो गई है। यह संख्या लगभग गांव के सारे किसानों की संख्या के बराबर है।

बचत, बीमा, उधार :

अपने सदस्यों में संचय की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने के लिये समिति ने अनिवार्य जमा, प्राविडैंड (निर्वाह) जमा तथा बीमा जमा रिवाज चालू किया है।

पिछले कुछ वर्षों से इसके साधन इतने पर्याप्त हो गये हैं कि सदस्यों के उधार की आवश्यकता जिला या प्रदेश सहकारी बैंक के पास गये बिना ही पूरी हो जाती है। ५०० रु० तक के ऋण व्यक्तिगत जमानत पर दे दिये जाते हैं, किन्तु बहुत बड़े ऋण के लिये भूमि की जमानत की आवश्यकता पड़ती है। १९४५-४६ में ३४०११ रुपयों का ऋण दिया गया जिसमें से अधिकांश तत्कालीन कार्यों में व्यय हुआ।

अन्य कार्यवाहियां :

महायुद्ध के दिनों में सोसाइटी ने खाद्य पदार्थ, मिट्टी का तेल, कपड़ा तथा अन्य राशन की वस्तुयें अपने सदस्य व गैर सदस्यों को देना शुरू किया। १९४५-४६ में इन वस्तुओं का व्यापार ३०२८० रुपये का था। लगभग २००० मन खल भी किसानों को दी गई थी।

समिति अपने अतिरिक्त लाभ में से प्रतिवर्ष कुछ धन निकाल कर औषधालय व पुस्तकालय चलाती है।

परिणाम :

१९४६ में सदस्यों तथा गैर सदस्यों की जमा क्रमशः २१९५५ तथा ३७६४२ रुपये थी। इस प्रकार कुल जमा ५९५९७ रुपये की थी। यद्यपि यह धन बहुत थोड़ा प्रतीत होता है किन्तु फिर भी यह इस बात का प्रमाण है कि बचत द्वारा निर्धन से निर्धन गांव तक में भी पूंजी एकत्रित की जा सकती है।

समिति के प्रभाव के कारण, सदस्य लोगों का उत्सवों पर भी व्यय बहुत कम हो गया है।

१९४६ तक ६५ सदस्यों ने "बड़ौदा कोआपरेटिव इंश्योरेंस" में अपना बीमा करवा लिया था।

आरम्भ से ही समिति ने पुराने ऋण से मुक्ति पाने के लिए अग्रिम ऋण देना आरम्भ कर दिया और इस कार्य में २१८८४५ रुपये व्यय किये गये। इस प्रकार साहूकारों का प्रभाव गांव से हट गया है, इनमें से अधिकांश ने गांव छोड़ दिया है, जो बाकी रह गये हैं वे भी अब उचित दरों पर लोगों को उधार देने लग गए हैं।

निरीक्षण :

सोसाइटी की सफलता का श्रेय निश्चित रूप से इसके सेक्रेट्री के व्यक्तित्व, लगन और परिश्रम को दिया जाना चाहिए जो यहां आने से पूर्व केवल गाँव का अध्यापक मात्र था।

अब तक केवल जमीन वाले लोग ही इसके सदस्य हो सकते थे। आरम्भ में इस प्रकार के कार्य से प्रबन्ध व आर्थिक स्थिरता सरल हो जाती है किन्तु फिर भी सहकारिता को गांव में जो काम करना पड़ता है उसमें यह कमी है कि वे लोग जो परिश्रमी तथा सचरित्र हैं तथा जो ऋण चुका सकते हैं उन्हें इसके सदस्य होने का अभी कोई अवसर नहीं है।

कुसीद तथा ऋणता : मज़दूरों के लिए मितव्ययता व कर्ज देने वाला एसोसिएशन : संयुक्त राष्ट्र अमेरिका :

कुसीद तथा ऋणता गांव के किसानों की भांति औद्योगिक तथा शहरी केन्द्रों के मजदूरों में भी बहुप्रचलित है।

वे इस प्रकार की समस्यायें तथा परिस्थितियां उत्पन्न कर देती हैं जिसका उदाहरण निम्नांकित है :

> "मूर्ख कर्जदार और असंतुलित कर्जदाता के मेल से जो परेशानी उत्पन्न हो सकती है उसका एक बेजोड़ उदाहरण हाल ही में एक पश्चिमी शहर में देखने में आया है। एक गृहस्थिन को उसकी एक मित्र ने एक अवैध कर्जदाता से ५० डालर उधार लेने को उकसाया। इस पर १० डालर या बीस प्रतिशत प्रति सप्ताह का व्याज तय हो गया। यह कहानी की शुरुआत थी। सप्ताह के अन्त में वह बेचारी कर्ज अदा नहीं कर पाई। इस प्रकार कर्ज बढ़ कर ६० डालर हो गया। दो सप्ताह के अन्त में यह ७२ डालर हो गया। पहले तो कर्जदाता ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया बल्कि उसने कर्जदार को और भी धन उधार लेने को प्रोत्साहित किया किन्तु जब कर्ज अधिक बढ़ गया तो उसने कर्जदार पर कर्ज चुकाने के लिए जोर डालना शुरू किया। निराश होकर बेचारी ने धन पाने के लिए तरह तरह के तरीके सोचने शुरू

किए। एक दिन उसने एक अवैध रूप से अपने भाई के बचत खाते में से कुछ धन निकाल लिया और फिर २५०० डालर के मूल्य के संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पोस्टल सार्टिफिकेट अपनी मां के धन में से भी इसी प्रकार हड़प लिए। किन्तु ब्याज तो उसके धन संचय के सभी प्रयासों से भी अधिक तेजी से बढ़ चला। दो वर्ष के अन्त में उसने २५० डालर कर्ज पर ४३६५ डालर अदा कर दिए और अन्त में जब वह जालसाजी और षड़यन्त्र के मामले में पकड़ी गई तब तक वह अपना पूरा कर्ज नहीं चुका पाई थी।"

समस्या की जड़ें :

राय एफ० बर्जेन्ग्रेन ने कहा है कि "सूदखोरी तो एक परिणाम है।" यह दो परिस्थितियों के सम्मिश्रण का फल है पहला तो ऋण की घोर आवश्यकता, दूसरा उचित दरों पर ऋण न मिलने की व्यवस्था।

ऋण की आवश्यकता :

उपरोक्त कहानी से यह तो मालूम नहीं हो सकता है कि उस स्त्री की धन की आवश्यकता जायज़ थी या नहीं किन्तु फिर भी इसमें संदेह नहीं कि जायज़ आवश्यकतायें होती अवश्य हैं। बहुत से ऐसे आकस्मिक और भारी भारी खर्च होते हैं जो कम आमदनी वाले लोग अपनी बचत से पूरा नहीं कर पाते। एक नवविवाहित दम्पति के लिए इस प्रकार के खर्चों से फर्नीचर का खर्च भी हो सकता है या कोई और तात्कालिक व्यय भी हो सकता है जैसे बीमारी, चोट, बच्चा पैदा होना, बेरोजगारी या मौत या इसी प्रकार के दूसरे उदाहरण भी हो सकते हैं जिनमें गृहस्थ के आर्थिक विकास के लिए उदाहरणार्थ घर खरीदना, बनाना, ठीक ठीक रखना या कोई सिलाई की मशीन खरीदने के लिए, किसी होनहार लड़के या लड़की को स्कूल भेजने के लिए, या किसी दोस्त व घर के सदस्य की कठिनाई में सहायता के लिए कर्जा लिया जाता है।

इस प्रकार के उदाहरणों से अनुमान किया गया है कि अधिकांश कर्ज लेने वाले लोग कम आमदनी वालों में से ही होते हैं। १९१५ में बोस्टन में कीगई एक जांच से पता चला है कि शहर के लगभग १२०० कर्मचारियों ने साहूकारों से कर्ज लिया था, और प्रति सप्ताह लगभग

१०० कर्मचारियों को साहूकारों द्वारा की गई कानूनी कायवाही की पैरवी करने के लिये अपना आधे दिन का काम छोड़ना पड़ता था।

यह अनुमान लगाया गया है कि १६२६ में अमेरिका में १५ प्रतिशत (१४,००० लाख डालर) का फुटकर सामान किस्तों पर खरीदा गया, १६ प्रतिशत फर्नीचर किस्तों पर खरीदा गया, ७५ प्रतिशत कपड़े धोने की मशीनें, ६५ प्रतिशत वेकुअम क्लीनर्स, २५ प्रतिशत सिलाई की मशीनें और लगभग १४०० लाख डालर का कपड़ा उधार खरीदा गया। ६०,००० आबादी वाले शहर में ५३२ गृहस्थों को उधार खरीदने के लिये फुसलाया गया था। देखा गया कि शहर के निर्धन इलाकों के ४० प्रतिशत व्यक्तियों ने, २५ प्रतिशत मध्यवर्ग के लोगों ने तथा ५ प्रतिशत धनाढय लोगों ने भी किस्तों पर सामान खरीदा।

उधार देने की शर्तें :

कुछ थोड़े से औद्योगिक बैंकों तथा अल्प ऋण देने वाली कम्पनियों को छोड़कर, ऋण देने का शेष काम साहूकारों, गिरवी रखने वालों, किस्तों पर चीजें देने वालों और तनख्वाह खरीदने वालों द्वारा ही चलाया जाता था।

औद्योगिक बैंकों की दरें ३५ प्रतिशत वार्षिक थीं, जबकि अल्प ऋण देने वाली कम्पनियों की ("जो यूनीफार्म स्माल लोन ला" नामक कानून के अन्तर्गत काम किया करती थीं) दर ३ से साढ़े तीन प्रतिशत प्रति मास या ३६ से ४२ प्रतिशत वार्षिक थी।

यह बात बहुत महत्व की है कि "यूनीफार्म स्माल लोन ला" नामक कानून की शर्तें सूदखोरों की तरह ऊँची नहीं थीं। इस कानून से पहले और इसके विरोध में सूदखोरों द्वारा वसूल की जाने वाली सूद की दरें अब भी बहुत अधिक थीं। पूर्व वर्णित जाँच से यह स्पष्ट हो गया कि बोस्टन में व्याज की वार्षिक दर १८० प्रतिशत तक थी। इस प्रकार के उदाहरण भी पाये गये हैं कि १० डालर वाले कर्जदार ने ३१२ डालर का तो भुगतान कर दिया है और फिर भी भूल के लिये उस पर मुकदमा चलाया जा रहा है। इसी प्रकार शिकागो के एक रेलवे कर्मचारी ने ३० डालर के कर्ज पर १०८० डालर तो अदा कर दिये हैं और फिर भी उसे ३० डालर के लिये परेशान किया जा रहा है।

किस्तों वाले ऋण की कीमतें अलग-अलग थीं यह प्रायः ११ से ४० प्रतिशत के बीच या कभी कभी ८० प्रतिशत तक भी थीं।

तनख्वाह खरीदने वाले का किस्सा तो और भी विचित्र था। वह तनख्वाह पर कुछ व्याज लेने का ढोंग किया करता था, किन्तु १९२६ में बसन्त में "रसलसेज फाउन्डेशन" द्वारा की गई जांच ने बताया कि इसकी दरें किसी भी हालत में २६० प्रतिशत से कम नहीं होती थीं और कभी कभी तो वे ३६०० प्रतिशत तक भी हो जाया करती थीं।

इस प्रकार की बुराइयों का प्रतिरोध करने में कानून बिलकुल शक्तिहीन तो नहीं है किन्तु फिर भी इसकी शक्ति सीमित अवश्य है। अनुभव ने यह बताया है कि जब कभी भी कानून अल्प ऋण के व्यवसाय को दबाने की चेष्टा करता है तो वह असफल ही हो जाता है। या दूसरे शब्दों में, जब कानून कर्जदारों की कर्ज लेने की सख्त जरूरत की ओर कोई ध्यान नहीं देता, तो यह प्रायः कर्ज की दरों को बढ़ाने में ही सहायक हो जाता है, क्योंकि जब कोई कानून कर्ज लेने की व्यवस्था को असंभव प्रतिबन्धों में बाँधने का प्रयास करता है तो कर्ज देने वाले और लेने वाले दोनों ही उसका उल्लंघन करेंगे और यह उल्लंघन प्रायः कर्ज देने वाला अपनी सुरक्षा के लिये कर्ज लेने वाले की कठिनाइयों पर लाद देगा। यदि कानून इसको अधिक नियमित बनाना चाहता है तो इसको प्रभावोत्पादक करने के लिये उसे कर्ज की दरें इतनी ऊँची रख देनी चाहियें कि कर्ज देने वाले को तो वे दरें आकर्षक जान पड़ें पर लेने वाले के लिये बहुत मंहगी पड़ जावें।

इसीलिये कानून की सहायता के लिये इस प्रकार की कुछ संस्थाओं का होना आवश्यक है जो जरूरतमंद और योग्य व्यक्तियों के लिये उचित दरों पर ऋण की व्यवस्था कर सकें। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर अमेरिका में "ऋण संघ" आरम्भ किये गये जिनमें सर्व प्रथम की स्थापना १९०९ में हुई थी।

ऋण संघ :

किस प्रकार आन्दोलन को आगे बढ़ाया जाय:—स्पष्ट है कि ऋण संघ आंदोलन को काफी लोकप्रिय हो जाना चाहिये था परन्तु याद रहे कि यह अपने आप ही नहीं बना है। इसको आरम्भ करने व

चलाने का श्रेय मुख्यतः तीन व्यक्तियों को है : एलफोन्जे डेस्जार्डिन्स, एडवर्ड फिले तथा राय० एफ० बर्जेन्ग्रेन।

ऋणसहकारिता के कार्य को यूरोप में वर्षों अध्ययन करने के पश्चात् एलफोन्जे डेस्जार्डिन्स में अमेरिका महाद्वीप में १९०० ई० में लेविस नामक स्थान पर (क्यूबेक प्रान्त, कनाडा) प्रथम ऋण सहकारी समिति (कैसे पापुलेर) स्थापित की। १९०९ में उसने मैनचेस्टर (हेम्पशायर) के फ्रेंच कैनेडियन लोगों को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में प्रथम समिति स्थापित करने में सहायता दी। १९०८ में पहला ऋण यूनियन कानून बनाने के लिये उसे बोस्टन, मेसेच्यूसेट्स में आमंत्रित किया।

बोस्टन के धनी एवं प्रगतिशील विचारों के नवयुवक एडवर्ड ए० फिले को यूरोप, भारत और जापान की ऋण समितियों को देखकर इनमें रुचि उत्पन्न हुई थी। वह इस बात पर अड़ गया कि वह लोगों के लिये धन का प्रबन्ध करेगा तथा ऋण को प्रजातांत्रिक ढंग पर ला कर छोड़ेगा। डेस्जार्डिन्स को बोस्टन लाने में वह सफल हो गया। उसने १९२१ में राय एफ० बर्जेन्ग्रेन की सहायता से क्रेडिट यूनियन नेशनल एक्सटेंशन ब्यूरो की स्थापना की और १४ वर्ष तक आर्थिक सहायता देकर इसे चलाया।

राय एफ० बर्जेन्ग्रेन आरम्भ से ही इस ब्यूरो का प्रबन्धमन्त्री था तथा इसके बाद १९३६ में क्रेडिट यूनियन नेशनल ऐसोसियेशन (क्यूबा) की स्थापना के उपरान्त वही इसका संचालक (डाइरेक्टर) बन गया।

क्रेडिट यूनियन नेशनल एक्सटेंशन ब्यूरो का पहला काम अमेरीका में प्रत्येक जगह उचित कानून द्वारा ऋण संघों की स्थापना करना था। इसलिये प्रभावहीन मौजूदा कानूनों को बदलने के लिये या नये कानूनों को बनाने के लिये प्रत्येक जगह आन्दोलन शुरू किये गये। नये और अच्छे कानूनों में से अधिकांश या तो ब्यूरो द्वारा आरम्भ किये गये थे या तैयार किये गये थे, और प्रायः सभी जगह इसके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर ही काम चलाया जाता है। अन्त में पूर्णतया उद्देश्य प्राप्ति १९३४ में हो गई जब कि एक संघीय कानून द्वारा अमरीका में

या इसके अधीनस्थ भागों के कोने कोने में संघ संस्थाओं को मान्यता दे दी गई है।

आरम्भ से ही १६२१ में जब कि केवल १६० ऋण संघ तथा मुश्किल से ६२,००० सदस्य थे ब्यूरो इस बात से सहमत हो गया था कि इसका अन्तिम उद्देश्य प्रत्येक राज्यों में संघों की एक लीग तथा एक राष्ट्रीय एसोसियेशन स्थापित करना है। ये दोनों मंजिलें अब तय कर ली गई हैं तथा १६३६ में स्थापित नेशनल एसोसियेशन में कनाडा के भी बहुत से प्रान्तों के ऋण संघ सम्मिलित हो गये हैं।

ब्यूरो के कार्यक्रम की अन्य स्थायी विशेषताओं में कार्यकर्ताओं को चुनकर उन्हें शिक्षित करना आदि भी सम्मिलित थे ताकि वे लोग प्रत्येक ऋण संघ व सारे आन्दोलन का काम भली भांति चला सकें।

ऋण संघ क्या हैं ?

यह रेफेसिन के सिद्धान्तों के आधार पर स्थापित बचत और कर्ज देने के लिये एसोसियेशन हैं।

इसके तीन कार्य हैं, पहला काम अपने सदस्यों को एक सुरक्षित, आसान और पूंजी लगाने का आकर्षक साधन देकर धन की बचत व संचय करने के लिये प्रोत्साहन देना, दूसरा सूदखोरी और कठिनाइयों को हटाकर सदस्यों को जायज़ कामों के लिये उचित दर पर कर्ज दिलवाने की व्यवस्था करना, व तीसरा सदस्यों को व्यापार तथा पूंजी के तरीकों में प्रशिक्षित करना, उनमें उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना तथा सहकारिता की कद्र बतलाना।

जमा पूंजी को लगाने का एक तरीका तो यह है कि सदस्यों की बचत के रुपये से चंदे तथा शेयर ले लिये जायें। इनकी मात्रा प्रायः कम ही होती है। (५ डालर से १० डालर तक) और इन्हें नकद धन देकर या साप्ताहिक और मासिक किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है। इसके अलावा ऋण संघ अपने सदस्यों के बचत के धन को जमा के रूप में भी लेता है।

यह अपने शेयरों पर लाभांश व डिपाजिट (जमा) पर ब्याज देता है। यह सोचा गया है कि पहले की दर ६ प्रतिशत से अधिक न हो तथा दूसरे की दर ४ से ५ प्रतिशत के बीच हो।

प्रायः सारे ऋण संघ के लिये राज्य और संघीय कानूनों द्वारा बकाया (बेलेन्स) पर ब्याज की दर १ प्रतिशत प्रति मास निर्धारित कर दी गई है और बहुत सी जगह तो ऋण संघों के लिये इससे भी कम दर पर धन लेना संभव हो गया है।

कर्ज के लिये दी गई दरख्वास्त में कर्ज लेने का कारण भी प्रकट किया जाना चाहिये। सदस्यों द्वारा चुनी गई एक ऋण समिति प्रार्थी को धन की आवश्यकता और प्रार्थी की हैसियत के बारे में जानकारी कर लेने के पश्चात् या तो दरख्वास्त को स्वीकार या अस्वीकार कर देती है। बहुत से ऋण संघ बिना किसी जमानत के ६० डालर तक का धन कर्ज पर दे देते हैं। जब जमानत की आवश्यकता होती है तो, या तो यह साथी सदस्य द्वारा दी हुई गारंटी होती है या कोई अचल सम्पत्ति की गिरवी या जीवन बीमा की पालिसी इत्यादि होनी चाहिये।

सामान्यतः ऋण समितियों का यह निर्णय ठीक ही था। यह इस बात से स्पष्ट होता है कि इन बहुत से सालों में भी अब तक कर्ज में कोई विशेष हानि नहीं हुई, और बहुत से ऋण संघों ने तो इस व्यवसाय में एक धेला भी नहीं खोया। इनका कारण यह बताया गया है कि जो आदमी मजदूर को कर्ज की स्वीकृति देने के लिये सबसे अधिक उपयुक्त है, वह भी उनका साथी एक ऐसा मजदूर ही है जो कारखाने या समाज में प्रतिदिन बराबर उसके निकट रहता और उससे पूरी पूरी जानकारी रखता है।

रेफेसिन सिद्धान्त पर चलने वाली ऋणसहकारी समिति (क्रेडिट कोआपरेटिव सोसाइटी) के साथ तुलना :

जैसा कि रेफेसिन सिद्धान्त पर चलने वाली ऋण सहकारी समितियों में होता है, ऋण संघ को भी विशिष्ट समुदायों के लोगों में ही स्थापित करना चाहिए। गांव के कुछ जिलों में इसके सदस्य किसान लोग हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त किसी कारखानों, फैक्टरी, मिल या रेल की सड़क के मज़दूर या किसी विभागीय स्टोर के कर्मचारी म्युनिसिपल राज्य या संघीय सरकार के कर्मचारी, किसी ट्रेड यूनियन के सदस्य या किसी चर्चा बैंक कर्मचारी इत्यादि इत्यादि सदस्य हो सकते हैं।

ग्रामीण ऋणदाता समितियों के विपरीत, यहां समिति का बड़ा होना कोई मायेने नहीं रखता, बशर्ते कि ऋण समिति के पास ऋण देने के लिए ऋण लेने वालों की उचित और ठीक ठीक सूचना हो। ऐसे भी ऋण संघ हैं जिनके कई कई हजार सदस्य हैं।

रेफेसिन सिद्धान्तों के अनुसार शेयर बहुत ही थोड़ी मात्रा के होते हैं और उनके ऊपर किये जाने वाले व्यय भी कम से कम होते हैं। रेफेसिन ऋणदाता सहकारी समितियों की भांति ऋण संघ भी कर्ज लेना तो सम्भव कर देता है परन्तु बिना छानबीन के नहीं। उनका उद्देश्य कर्जदारी को कम करना है, प्रोत्साहन देना नहीं। वे बड़ी सावधानी के साथ कर्ज देते हैं और इस सावधानी से केवल उनकी स्थिरता ही नहीं बनी रहती बल्कि उधार लेने वालों की आर्थिक और वित्तीय परिस्थितियां भी दृढ़ होती रहती हैं। फिर भी उन्होंने रेफेसिन के 'उत्पादक कर्ज' शब्द के अर्थ को थोड़ा बड़ा बना दिया है। उनके कर्ज 'निवारक' या 'रचनात्मक' होते हैं। कभी कभी यह कर्ज निर्वाहक भी होते हैं जिसका अर्थ है कि वे उधार लेने वाले के तात्कालिक और भावी लाभ के लिए हैं।

कुछ ऐसी भी बातें हैं जिनमें ऋण संघ रेफेसिन सिद्धान्तों से भिन्न होता है। प्रत्येक सदस्य की देयता उसके शेयरों तक ही सीमित है और बहुत से ऋण संघ (ग्राम संघों को निकाल कर) अपने अतिरिक्त धन के शेयरों के लाभांश के रूप में बाँट देते हैं।

परिणाम :

ऋण संघों की वृद्धि से दोनों बातों का पता चलता है कि अल्प ऋण लेने वालों की आवश्यकता कितनी सख्त है और संघ (यूनियन) इसको किस प्रकार पूरा करते हैं। १९४६ के अन्त में संघों की संख्या ७९६८ थी तथा सदस्यों की संख्या ३० लाख से भी ऊपर।

यह कार्य (आन्दोलन) आर्थिक संकोचन के भी दिनों में चलता रहा (१९२९) जबकि बहुत से व्यावसायिक बैंक बन्द हो रहे थे। १९२९ में ९७४ ऋण संघ थे जिनकी सदस्य संख्या २६४,९०० थी १९३४ में संघ २४५० थे और सदस्य संख्या ४२७,०७९ थी।

ऋण देने की कार्यवाही को १९४६ की दशा से आंका जा सकता है। इस वर्ष २८६,६६३,१६० डालर के १६,५४,६२८ कर्जे किए गए। मैसेच्यूसेट्स राज्य में ऋण संघ की कार्यवाही के पहले ११ वर्षों में आधे से अधिक साहूकार समाप्त हो गए और बचे हुए लोगों का व्यापार आधे से भी अधिक मारा गया।

मैसेच्यूसेट्स राज्य द्वारा बांटे गए एक पर्चे में लिखा है कि छोटे स्थानी क्षेत्र या ग्रुप में व्यक्तिगत आधार पर काम करके ऋण संघ को चाहिए कि वह अपने सदस्यों को संचय करने की ऐसी रीतियां बताए जो अन्य संचय करने की संस्थायें नहीं बता पातीं। इस बात में संदेह नहीं है कि वह ऐसा करने में और काफी बचत करने में सफल हो गए हैं। यह धन बचत करने वालों का है। यह इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि १९२१-१९४६ के बीच उनकी कुल पूंजी १०,०८४,८६१ डालर से ४६२,९७३,०१२ डालर हो गई। १९४६ में ही ५०० लाख डालर संचय किये गए थे।

कनाडा में ऋण संघ :

उत्तरी अमेरिका में ऋण संघ का आन्दोलन सर्वप्रथम कनाडा में आरम्भ हुआ (१९००)। यहां यह देहाती और शहरी दोनों क्षेत्रों में प्रचलित है। बहुत वर्ष तक तो ऋण संघ केवल क्यूबेक प्रान्त में ही मिलते थे परन्तु इसके उपरान्त उन्हें ओनटिरेयों (१९२२) तथा नोवो-स्कोशिया (१९३२) में भी स्थापित कर लिया गया। १९३९ तक सारे राज्यों ने ऋण संघों के रजिस्टर या आरम्भ करने के लिए कानून बना दिए तथा इसके पश्चात् प्रत्येक प्रान्त में उन्हें संघ या लीग के रूप में भी संगठित कर लिया गया। इनमें से अधिकांश संघ या लीग अमरीका में 'क्रेडिट यूनियन नेशनल ऐसोसिएशन' से सम्बन्धित हैं।

१९४६ में २४२२ ऋण संघ थे जिनकी सदस्य संख्या ६८७,६२२ थी तथा पूंजी १८७,३४०,४२२ पौंड थी। क्यूबेक के प्रान्त में जहां इस आन्दोलन को ४६ वर्ष हो गए थे ऋण संघों की संख्या अधिक थी (९७७)। वहां सदस्यों की संख्या (४८०,८१५) तथा पूंजी भी (१५९,-१३९,५२५) सब से अधिक थी। आरम्भ से ही इस प्रान्त के ऋण संघों ने २५०० लाख डालर से भी अधिक का कर्ज दिया है (जिसमें से

३०० लाख डालर तो १६४६ में ही दिया गया था) १६४७-४८ के वित्तीय वर्ष में ये संख्या इससे भी बढ़ गई, ऋण संघ १०४२, सदस्य ४,८६,८४६ तथा पूंजी १६३,३६२,२६ डालर।

१६४६ में २४२२ ऋण संघ थे जिनकी सदस्य संख्या ६८७,६२२ थी तथा पूँजी १८७,३४०,४२२ पौंड थी। क्यूबेक के प्रान्त में जहाँ इस आन्दोलन को ४६ वर्ष हो गये थे ऋण संघों की संख्या अधिक थी (६७७)। वहां सदस्यों की संख्या (४८०,८१५) तथा पूँजी भी (१५६,१३६,१२५) सबसे अधिक थी। आरम्भ से ही इस प्रान्त के ऋण संघों ने २५०० लाख डालर से भी अधिक का कर्ज दिया है (जिसमें से ३०० लाख डालर तो १६४६ में ही दिया गया था) १६४७-४८ के वित्तीयवर्ष में ये संख्या इससे बढ़ गई। ऋण संघ १०४२ सदस्य ४८६८४६ तथा पूँजी १६३,३६२,२६ डालर।

वैतनिक श्रमिकों के लिये अन्य देशों में बचत तथा ऋण देने वाली समितियाँ :

बहुधा यह कहा जाता है कि उधार खरीदने की प्रवृत्ति से एक तो अपने वेतन को स्वेच्छा से उपयोग में लेने की स्वतंत्रता जाती रहती है तथा साथ ही साथ व्यक्ति की प्रतिष्ठा को भी ठेस पहुंचती है।

उपभोक्ता सहकारी समितियों तथा उनकी केन्द्रीय संस्थाओं ने लोगों को इसीलिये नकद रुपये से चीजें खरीदने और ठीक तरीके से अपना धन बचाने की प्रार्थना कर एक वास्तविक शैक्षिक कार्य किया है।

बचत में वृद्धि, या तो ग्रेट ब्रिटेन की भांति सप्लीमेंटरी (पूरक) शेयर खरीद कर हुई है, या अधिकांश योरुप के देशों की भाँति उपभोक्ता सहकारी समितियों के स्टोरों में बचत बैंक की स्थापना करके। ऐसे देश का जहां धन बहुत ही कम होने के बाद भी बचत काफी मात्रा में हुई है, फिनिश सहकारी आन्दोलन ने प्रथम महायुद्ध के उपरान्त एक ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित किया है।

इस बचत के एकत्रित होने से, बहुत से देशों में उपभोक्ता सहकारी समितियों के बैंक तथा बैंक विभाग भी खुल गये हैं। कभी कभी यह बैंक या बैंक विभाग स्वीटज़रलैंड की भांति ट्रेड यूनियनों के सह-

योग से भी स्थापित किये गये हैं। ये बचत प्रायः सहकारी आन्दोलन में आर्थिक आवश्यकताओं को पूरी करने के लिये काम में ली गई है। इसका आशय यह है कि यह धन सामूहिक लाभ के लिये उन्हीं लोगों के काम आता है जिनका कि यह होता है।

किन्तु कनाडा और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के विपरीत, यह बचत सहकारी संस्थाओं के सदस्यों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये बहुत ही कम काम में ली गई है।

निःसन्देह इस दिशा में सबसे अधिक उन्नति आस्ट्रिया में हुई है। वहां उसके लिये दो तरीके काम में लिये गये हैं। पहले तो कुछ उपभोक्ता सहकारी समितियों ने साप्ताहिक बचत स्टाम्प बांटे इस प्रकार इन स्टाम्पों से जब एक निश्चित मात्रा में धन एकत्रित हो जाता है तो उस सदस्य के नाम उस सहकारी स्टोर में वह धनराशि जमा हो जाती है। एक प्रकार से इस उपाय के द्वारा बचत की धनराशि छोटी छोटी किस्तों में एकत्र कर ली जाती है ताकि भविष्य में चीजें नकद खरीदी जा सकें। इस प्रकार की दूसरी वास्तव में कुछ बहुत ही अच्छी बचत तथा ऋणदाता समितियां सहकारी नौकरों और श्रमिकों के बीच भी खोल दी गई हैं। सरकारी नौकरों को दिये गये ऋण के सम्बन्ध में प्रबन्धक लोग इस बात के लिये सहमत हो गये कि वे बचत और ऋण समितियों को, सम्बन्धित सरकारी नौकरों की तनख्वाह में से तय किया हुआ धन प्रति मास काट कर दे देंगे। श्रमिकों की बचत तथा ऋण सहकारी समितियों को प्रत्येक जिले में एकत्रित कर दिया गया और अन्त में इनका केन्द्रीय सहकारी बैंक (सेन्ट्रल कोआपरेटिव बैंक) से भी सम्बन्ध कर दिया गया है।

पोलैंड में सरकारी नौकरों में (रेलवे कर्मचारी, अध्यापक) उपभोक्ता ऋण सहकारी आन्दोलन को बढ़ावा दिया गया है और कुछ श्रमिकों में भी इस आन्दोलन को आरम्भ कर दिया गया है।

स्वीटजरलैंड के भी निर्वाह (प्रोवीडेंट) तथा पारस्परिक ऋण देने वाले साहकारी ग्रुपों का वर्णन कर देना असंगत नहीं होगा जिनमें से एक की स्थापना सहकारी अध्ययन केन्द्र द्वारा हुई।

यूगोस्लाविया में "फेडरेशन आफ प्राइवेट एम्प्लाइज़" ने १९२९ में उपभोक्ता ऋण देने वाली सहकारी समिति की स्थापना कर

दी है। इसके साधनों के रूप में सदस्यों के शेयर, तथा फेडरेशन और इसके सम्बन्धित यूनियन्स की जमा भी सम्मिलित थी।

परन्तु वास्तविक रूप में ऐसी समितियाँ योरुप के बाहर फिलस्तीन, भारत तथा अंग्रेजों के अधिकृत अफ्रीका, एशिया तथा अमेरिका के देशों में हैं जहां कनाडा तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के ऋण संघों से मिलती जुलती ऋण देने वाली समितियाँ वहाँ के वेतन पाने वाले श्रमिकों के लिए स्थापित की गई हैं।

गत महायुद्ध के आरम्भ में फिलस्तीन में इस प्रकार की सहकारी संस्थाओं के सदस्यों की संख्या २७,००० थी। उनकी स्थापना वहाँ रहने वाले लोगों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति को ध्यान में रखने के कारण तथा सहकारी संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय अर्थ निर्माण में दिये गये सहयोग के कारण हुई थी।

भारत में बचत तथा ऋण देने वाली सहकारी समितियाँ कपड़े के तथा अन्य कारखानों में शनैः शनैः फैल रही हैं। ये प्रायः मालिकों के सहयोग से ही कार्य करती हैं। मालिक उन्हें एक खजांची दे देता है। इसकी बचत के लिये कुछ रुपया श्रमिकों की तनख्वाह में से नियमित रूप से काट लिया जाता है। मज़दूर भी इस कटौती से सहमत होते हैं।

मलय राज संघ में चाय तथा रबर के बागीचों में काम करने वाले भारतीय श्रमिक तो बचत तथा ऋण देने वाली सहकारी संस्थाओं के कार्य से बहुत पहले से ही पूर्ण परिचित हैं, किन्तु साथ ही साथ अब ऐसी संस्थायें सरकारी नौकरों में भी आरम्भ हो गई हैं। जापानियों के आक्रमण के समय भारतीय श्रमिकों में ४०० से भी अधिक बचत तथा ऋण देने वाली सहकारी समितियाँ काम कर रही थीं, जिनके सदस्यों की संख्या ७०,००० थी।

श्री लंका में भी सरकारी नौकरों के तथा कर्मचारियों के लिये कुछ बचत और ऋण देने वाली समितियां काम करती हैं।

चीन की एक परम्परागत संस्था 'हुई' है जिसमें बचत तथा ऋण देने वाली समितियों की कुछ विशेषतायें होती हैं किन्तु कभी कभी यह अपने उच्च स्तर से गिरकर जूये में भी परिणित हो जाती हैं।

अफ्रीका की बचत तथा ऋण देने वाली समितियों का भी उल्लेख करना उचित है। ये नाइजेरिया में मुख्यरूप से सरकारी नौकरों में तथा कर्मचारियों में फेलो हुई हैं किन्तु एक मात्र उन्हीं में फैली हो ऐसी बात नहीं है। १६४५-४६ में उनकी संख्या २२४ थी। सदस्य संख्या १७१७ थी तथा कुल पूँजी १,५४०,२४ डालर थी। उसी वर्ष गोल्ड कोस्ट ने भी ४ सहकारी संस्थाओं के आरम्भ होने की घोषणा की, इनकी कुल सदस्य संख्या १७५ थी।

दूसरा अध्याय

खरीदने की समस्या

निर्धन या आर्थिक रूप से अल्प विकसित समाजों में बेचारे कृषकों, कारीगरों या श्रमिकों को अपनी वस्तुयें साधारणतः अनुकूल परिस्थितियो में ही खरीदनी पड़ती हैं।

कृषक अपने लिये बीज और घर गृहस्थ की आवश्यक सामग्रियां प्रायः साहूकार से लेता है। यह साहूकार या तो कोई सौदागर होता है या भू स्वामी जो लेन देन का व्यापार भी करता है। कारीगर लोग अपने लिये थोड़े थोड़े समय के लिये ही चीज़ें खरीदते हैं। इस प्रकार के लोगों में तांबे के काम करने वालों को तांबे की चद्दरें, लुहार को कोयला और लोहा, रंगरेज को अपना रंग और ईंधन, बढ़ई को लकड़ियां वगैरह की आवश्यकता हुआ करती है। जहां तक घर की चीजों का सम्बन्ध है ये लोग केवल अपनी तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ही चीज़ें खरीद सकते हैं।

यह खरीददारी होती बहुत ही कम मात्रा में। इसलिये उन लोगों के लिये यह वस्तुयें बहुत कीमती पड़ती हैं। काम में आने वाली वस्तुओं के लेने के लिये कभी उनका आधा दिन, कभी कभी पूरा दिन और कभी कभी तो डेढ़ डेढ़ दिन भी लग जाता है। इसमें केवल समय का नाश ही नहीं है वरन् धन का नाश भी है, चाहें वे लोग इसे अनुभव करते हों अथवा नहीं। इसमें दूसरी कठिनाइयां और खतरे भी हैं, जैसे कच्चे माल के गुण की परख के लिये (और खास तौर से जब वे उधार खरीद रहे हों) उनके पास कोई साधन ही नहीं है। इसी प्रकार जिस माल को काम में लेने से पहले कुछ दिन डाले रखना आवश्यक होता है वह संभव ही नहीं हो सकता। ऐसे लोगों में कैबि-

नेट (दराज) बनाने वाले लोग हैं। इनके लिये यह आवश्यक है कि वे अपने माल को काफी दिन तक एकत्र करके फिर उपयोग में लावें ताकि इसके गुण और मुल्य बढ़ सकें परन्तु ऐसा न कर सकने से वे अपने लाभ से वंचित ही रह जाते हैं। दूसरी ओर लकड़ी, ऊन और चमड़े का काम करने वाले हैं। इन्हें भी भावों के रात दिन के उतार चढ़ाव और अपने अज्ञान के कारण बहुत ऊंची कीमतें देनी पड़ती हैं।

तो यह प्रश्न उठता है कि अपना अपना सामान इकट्ठा क्यों नहीं ख़रीदते ? या तो वे इस प्रकार की बात सोचने की ओर ध्यान ही नहीं देते अथवा उनकी इधर रुचि नहीं होती। परन्तु वास्तविक कारण यह है कि वे लोग प्रायः निर्धन होते हैं। उनके पास खरीदने के लिये न बचाया हुआ धन होता है न उन्हें उधार मिलता है।

कुछ सम्भव उपाय (हल) :

जो चीज इन लोगों के लिये अलग अलग रहकर अप्राप्य होती है वही उन्हें इनके एक साथ संगठित हो जाने पर सरलता से उपलब्ध हो सकती है। बचत और उधार देने वाली समितियों के द्वारा वे लोग थोड़ी थोड़ी किन्तु नियमित बचत से एक छोटी धनराशि एकत्र कर सकते हैं जिसके आधार पर उन्हें थोड़ी धनरशि और भी उधार मिल सकती है। इसके अतिरिक्त ये समितियां अपने सदस्यों के लिये इकट्ठे सामान खरीदने का आर्डर भी दे सकती है, वे अपने सदस्यों के लिये चीजें भी खरीद सकती हैं, और यदि व्यापार बहुत बढ़ जावे तो ये क्रय समितियां भी आरम्भ कर सकती हैं।

ये क्रय ससितियां दो प्रकार की होती हैं : कृषि तथा व्यवसाय ससितियां जो कृषक और कारीगर को उनका कच्चा सामान और उपकरण खरीदने में सहायक होती हैं और उपभोक्ता समिति। उन भागों में जहां विशेषज्ञता पर जोर नहीं दिया जाता, जैसे देहाती इलाके वहां ऐसी भी सहकारी समितियां होती हैं जो दोनों के दोनों ही काम पूरा करती हैं।

यूरोप के अतिरिक्त कारीगर लोगों के लिये बनी हुई क्रय समितियां बहुत अधिक नहीं मिलतीं। किन्तु फिर भी भारत में इनकी संख्या पर्याप्त है और ये समृद्धिशाली भी हैं।

कृषि क्रय समितियां (जिनमें से कुछ अपने सदस्यों की उत्पादित वस्तुयें बेचने का भी काम करती हैं) केवल योरुप में ही अधिक संख्या में नहीं हैं बल्कि उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका (खास तौर से मिश्र और ट्यूनिशिया) और एशिया में भी हैं। जापान में १२००० से भी अधिक कृषि समितियां हैं। चीन में ३०००० के लगभग ग्राम सहकारी समितियां हैं जो चीजें वितरण करती हैं, इस प्रकार की समितियां और बहुउद्देशीय समितियां पिछले कुछ वर्षों से भारतवर्ष में बहुत शीघ्रता से फैल रही हैं। हाल ही के कुछ एक अपवादों को छोड़ दिया जाये तो आप देखेंगे कि बहुत से अच्छे स्तर की उपभोक्ता सहकारी समितियां अफ्रीका एशिया और प्रशान्त महासागरीय देशों में बहुत कम हैं।

श्री लंका, चीन और भारत इसके अपवाद हैं जहां गत महा-युद्ध में उपभोक्ता समितियां बड़ी तेजी से बड़ती चली गई हैं। इस समय श्री लंका में इनकी संख्या ३८ से एकाएक बढ़कर ४००० से भी ऊपर हो गई हैं। चीन में १६४४ में ४७८२ सहकारी समितियां उपभोक्ताओं की वस्तुएं विपरीत किया करती थीं और ३३६२८ अन्य समितियां थीं जो ऐसे ही तथा अन्य प्रकार के कार्य भी किया करती थीं। किन्तु १६३७ में चालू समितियों की ०.४ प्रतिशत संख्या ही काम किया करती थी। १६४६ में यह आंदोलन अधिक ज़ोर पकड़ गया और मौजूदा समितियों की १४ प्रतिशत समितियां रह गईं। उसी प्रकार भारतवर्ष में मद्रास प्रान्त में इनकी संख्या १६३६ में ८५ थी। फरवरी सन् १६४४ में यह संख्या १६३२ तक पहुँच गई। मैसूर में इनकी संख्या ७२ से ६२५ पर पहुंच गई। १६४३ में ४७७ बम्बई की उपभोक्ता समितियों तथा १६४४-४५ में उत्तरप्रदेश की १६७ समितियों में से अधिकांश युद्धकाल में ही बढ़ गई थीं।

उनकी यह आश्चर्यजनक प्रगति हमें बतलाती है कि इस प्रकार की सम्भावनाओं की आशा कुछ ही वर्ष पहले भी मुश्किल से ही की जाती होगी। किन्तु इनके विषय में कोई भी निर्णय अब भी बहुत सावधानी से ही दिया जाना चाहिए। ये केवल युद्धकालीन उपज ही नहीं हैं विशेष रूप से मद्रास और श्री लंका में तो ये युद्ध के एक नाटकीय समय पर उभर पाई थीं। बुद्धिमानीपूर्वक की गई सरकारी सहायता और धन की सहायता ने भी इनको जन-कल्याण के लिए उभारने

में काफी मदद पहुंचाई है। सबसे अधिक सहायता इन्हें पहले से उपस्थित काम करने वाली समितियों से मिली है। साथ ही इन्हें जनमत का पर्याप्त विश्वास और सहयोग भी मिला। अन्त में, सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार, सहकारी विभाग तथा सहकारिता के प्रचार, शिक्षा और संगठन में अनुभवी कर्मचारियों के सहयोग के कारण भी इन्हें काफी फायदा हुआ है। सामान्य रूप से अविकसित समाज में जहां ऋण देने वाली समितियां नहीं होतीं, उपभोक्ता समितियों को स्थापित करने में बहुत कठिनायां होती हैं, किन्तु ग्राम वितरक समितियों के मुकाबिले में उन्हें कठिनाइयां पार करने में सुगमता रहती है। यह आवश्यक है कि इन्हें सफल बनाने के लिए काफी धन एकत्र किया जावे, योग्य और ईमानदार प्रबन्धक ढूंढ़े जायं, और छोटे-छोटे ऐसे व्यवसायों के मुकाबला किया जाय जो दिन रात अपनी चीजें बेचने को तैयार रहते हैं, थोड़ा सा कमाते हैं तथा उससे भी थोड़े में जिन्दगी बसर करते हैं।

ऐसी परिस्थितियों में क्रय संघों का संगठन करना और उन्हें चलाना यही पहला काम होना चाहिए। क्योंकि आगे चलकर यही संघ उपभोक्ता समितियाँ बन जाती हैं।

क्रय संघः

प्रायः उपभोक्ता सहकारी समितियों की असफलता का कारण या तो गलत शुरुआत या इसके अध्यक्ष और सदस्यों द्वारा इसके सिद्धान्तों की अनभिज्ञता, या बहुत बड़े आर्थिक लाभों की आशा या प्रबन्ध व क्रय के अनुभव का अभाव अथवा लेखा जोखा नहीं रखना है।

क्रय संघ के उद्देश्य :

क्रय संघ अपने आप में कोई ध्येय नहीं है। वरन् यह एक बहुत ही दृढ़ उपभोक्ता समिति के स्थापन में प्रथम चरण है।

इसके मुख्य उद्देश्य हैं :

१. इसके सदस्यों को सहकारिता का अध्ययन करने का अवसर देना।

२. उन लोगों को सहकारिता के तरीकों से परिचित कराना।

३. वे लोग जो चीजें खरीदते हैं उनकी किस्मों को बढ़ाना।

४. थोक खरीद से बचाये हुए धन से बड़ी पूंजी तैयार करना।

क्रय और वितरण :

जिस दल का काम खरीद करने का है वह खरीदते समय बहुत निश्चित मांग पर ही कोई चीजें खरीदता है। नियमतः आरम्भिक दिनों में यह केवल निश्चित स्तर की उपभोक्ता वस्तुयें ही खरीदता है : जैसे कोयला, तेल, आटा, चावल, तथा सदस्यों की संख्या व आवश्यकता के आधार पर अन्य प्रकार का सामान। कभी कभी यह टीन में बन्द चीजें भी खरीदता है।

यदि सदस्य लोग अपनी मांग के लिये धन पहले ही दे देते हैं (जैसा कि उन लोगों से करने को कहा जाता है) तो यह संघ या तो बिना पूँजी के भी काम चला लेता है, या थोड़ी सी उधार ली हुई पूँजी से काम चला लेता है जिसे वह जल्दी ही वापिस तो कर देता है और चूँकि प्रत्येक वस्तु सदस्य की मांग पर ही खरीदी जाती है इसलिये प्रत्येक वस्तु के लिए ग्राहक पहले से ही होता है और उन्हें चीज़ों के बदले में कोई जोखिम नहीं उठाना पड़ता।

जहाँ सदस्य लोग अपनी मांग से पहले धन नहीं देते वहाँ उन्हें चीजें खरीदते ही तत्काल रुपया देना पड़ता है।

क्रय संघ अपनी चीजें या तो साधारणतया बाजार के मूल्य पर बेच सकता है या कुछ घटी हुई दरों पर। नियमतः संघ "मूल्य का युद्ध" शुरू नहीं करता, क्यों कि उस दशा में इसे व्यापारियों की शत्रुता मोल लेनी पड़ेगी और वे लोग इसके चीजें खरीदने में बाधा डाल देंगे। किसी भी दशा में क्रय संघ के लोगों को थोक और परचून रिटेल की कीमतों का लाभ तत्काल ही नहीं मिलना चाहिये। प्रत्येक सदस्य को कीमतों का थोड़ा सा अन्तर उनकी खरीद पर मिल सकेगा। जो धन उसे वापिस नहीं मिलेगा वह उसके खाते में जमा होता चला जावेगा और अन्त में वह भविष्य के लिये उपभोक्ता समिति के शेयरों में परिणित हो जायेगा।

इस प्रकार एक छोटे से व्यापार के चलाने के लिए आवश्यक पूँजी और प्रशिक्षण साथ साथ अनजाने में ही बढ़ता चला जाता है।

जब संघ (क्लब) इतना बड़ा हो जावे कि इसे एक दुकान और वैतनिक स्टाफ (कर्मचारियों) की आवश्यकता पड़े तो उस समय यही उचित है कि इसे एक यथार्थ उपभोक्ता समिति के रूप में परिणित कर दिया जाये।

संगठन :

इस समय तक तो क्रय संघ (क्लब) जिसे रजिस्टर करवाने की आवश्यकता नहीं पड़ती साधारणतया एक क्लब की भांति ही काम करता रहता है। सदस्यों के लिए फिर भी यह अच्छा है कि वे लोग मिल जुल कर कुछ साधारण से नियम बना लें जिनमें सहकारिता के नियमों का उल्लेख हो (एक आदमी एक मत) खरीद कर अनुपाततः धन वापिस करना इत्यादि।

इसमें वस्तुतः प्रबन्ध समिति तथा अंकेक्षक (आडिटर) तो होंगे ही किन्तु यदि एक शिक्षा समिति की स्थपना भी हो जाये तो वह और भी सुन्दर रहेगा। क्लब एक बचत कोष बनायेगा। यदि परिस्थितियाँ ऐसा करने का अवसर दे दें तो आरम्भ ही से यह कुछ पूँजी अलग रखता चला जा सकता है जिसके शेयर धीरे धीरे जमा करवा के प्राप्त किये जा सकते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ अमेरिका की एक नीग्रो उपभोक्ता समिति :

पृष्ठिभूमि:—इंडियाना में गैरी एक औद्योगिक शहर है। १६३२ के शीत ऋतु में इसकी सारी स्पात की मिलें बन्द हो गईं, १३ में से केवल एक बैंक खुला रहा, १ लाख निवासियों का पंचमांश तथा नीग्रो जनता का आधा भाग सहसा ही सहायता पर निर्भर हो गया।

कार्यवाही :

लगभग २० नीग्रो कुटुम्बों के प्रतिनिधि अपनी आर्थिक समस्या का हल मालूम करने के लिये रूजवेल्ट हाई स्कूल में मिले, स्कूल के प्रिंसीपल और बहुत से अध्यापक भी इसमें सम्मिलित हुये।

कुछ समय तक साप्ताहिक मीटिंगों में मिलने पर वह दल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि उन लोगों को एक मात्र सम्बल यही था कि वे लोग अपने आपको उपभोक्ताओं के रूप में संगठित कर लें। उनके

अध्यक्ष ने, जो एक हाई स्कूल का अध्यापक था, उपभोक्ता समिति का अध्ययन किया और जब वह एक उपभोक्ता कांग्रेस में गया तो वहाँ से कुछ चीजें लेकर लिख लाया। उसके वहाँ से लौटने पर उसने लगभग २४ डालर की पूँजी से एक सहकारी क्रयक्लब (संघ) आरम्भ कर दिया। धन पिछली मीटिंगों में इक्ट्ठा किया गया था किन्तु इतनी आसानी से नहीं क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने बचे हुए डालरों को इस नये विद्यषत में रखने को तैयार न था।

इस कार्य के लिये कोई एक सदस्य सप्ताह में एक बार आर्डर (मांग) इकट्ठे कर लेता था और फिर एक नीग्रो सौदागर उन्हें चीजें दे देता था। स्पष्ट है कि इस प्रकार के ढंग से कोई बड़ी बचत नहीं हो सकती थी।

जब वे लोग थोक पर चीजें खरीदने को तैयार हुये तो उन्हें ज्ञात हुआ कि थोक वाले तब तक उन्हें सौदा देने को तैयार नहीं थे जब तक की उन लोगों के पास एक स्टोर न हो। इसलिये सब फर्नीचर एक स्टोर से किराये पर ले लिया गया और क्रय क्लब "नीग्रो कोआपरेटिव स्टोर्स एसोसियेशन" के नाम से रजिस्टर कर लिया गया और इस प्रकार एक सर्वाधिकार सम्पन्न उपभोक्ता समिति आरम्भ हो गई।

१९३३ के बसंत और ग्रीष्म में स्टोर निरन्तर संघर्ष करता रहा लेकिन अमले की कमी के कारण, तथा पूंजी और अनुभव की कमी से व्यापार थोड़ा ही रहा अर्थात् लगभग २०० पौंड प्रति सप्ताह।

अपनी परम्परा के अनुकूल इस दल ने एक शिक्षा समिति स्थापित कर दी, जिसने गेरी स्कूल के प्रौढ़ शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर की सहायता से योजना बनाकर संध्या को सहकारी अर्थशास्त्र की कक्षायें आरम्भ कर दीं। कक्षा जल्दी से संध्या के स्कूलों की सबसे बड़ी कक्षा हो गई। और इस कक्षा ने इस संगठन में भी काफी अभिवृद्धि कर दी। एक सहकारी स्त्री संघ (गिल्ड) की भी स्थापना हुई। १९३४ की बसन्त में इसने एक पत्र भी छापा जिसका नाम "ए० फाइव इयर प्लान फोर लिफ्टिंग दी सोशल एन्ड इकोनोमिक स्टेट आफ दी नीग्रो इन गेरी" (गेरी के नीग्रो लोगों का सामाजिक और आर्थिक स्तर ऊंचा करने की पंचवर्षीय योजना) रखा गया। इस आयोजनाओं के द्वारा पुराने स्टोर के स्थान में अगस्त के माह में एक आधुनिक पंसारी का स्टोर और

गोश्त की मंडी भी शुरू की गई। नवम्बर में एक ऋण देने वाले संघ की भी स्थापना की गई। दूसरा स्टोर खोलने के लिये भी धन एकत्रित करने का प्रयास किया गया। उत्साह ऐसा था कि नवयुवक भी आइसक्रीम और मिठाई कीं दुकानें खोलकर सहकारिता का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे।

१६३५ तक ऋण देने वाले संघ के पास १०० सदस्य हो गये और उसके कोष में सो डालर जमा हो गये। उपभोक्ता समिति की सदस्यता ४०० तक पहुंच गई और उसका व्यापार ३५००० पौंड तक। वह कोआपरेटिव लीग आफ दी यूनाइटेड स्टेट्स आफ अमरीका की एक शाखा, (सेंट्रल स्टेटस कोआपरेटिव लीग) से सम्बन्धित हो गया।

श्री लंका में उपभोक्ता समितियां :

जब श्री लंका में यह "महान प्रयास" आरम्भ हुआ उस ससय वहां उपभोक्ता समिति अभी मुश्किल से चल पाई थी। अप्रैल १६४२ के अन्त तक केवल ३८ समितियां थीं जिनसें १५,६७५ सदस्य थे। ये समितियां चाय के बगीचे में काम करने वाले श्रमिकों के लिये थीं। अतः ये विशेष परिस्थितियों में चलाई जा रही थीं। इनकी अर्थ व्यवस्था और प्रबन्ध के लिये मालिकों द्वारा बहुत स्थायी और प्रभावशाली सहायता दी जा रही थी। वास्तव में स्वतन्त्र उपभोक्ता समितियों को स्थापित करने के प्रयास देहातों और शहरों दोनों ही जगह विफल हो गये।

भयंकर खाद्य समस्या :

अक्टूबर १६४२ में मलाया द्वीपसमूह और ब्रह्मा पर जापानी सेनाओं का अधिकार हो गया और हवाई हमलों के कारण इन देशों के भारत के साथ व्यापारिक सम्बन्ध समाप्त हो गये। इस प्रकार द्वीप बाहर की खाद्य और वस्त्र सप्लाई से वंचित हो गया। सरकार द्वारा किये गये आपत्तिकालीन उपाय भी भविष्य की सप्लाई की गारंटी देने में विफल रहे। चीजें बाजार से धीरे धीरे गायब होती चली गईं जिसके फलस्वरूप चारों ओर भयंकर अकाल, मूल्यों में भारी वृद्धि, भय और चोर बाजारी का डर फैल गया।

ऐसे ही समय में यहां उपभोक्ता सहकारी समिति को स्थापित करने का विचार उदय हुआ। इसमें बहुत सी अभूतपूर्व परिस्थितियों को सम्मिश्रण हुआ। जनता ने अगुआ बनकर सरकार से शीघ्र ही उपभोक्ता समिति बनाने के लिये सहायता करने को कहा। सरकार ने भी तत्काल उचित ढंग से आवश्यक सहायता दी, इसने प्रचार और संगठन के लिये अतिरिक्त खर्चा भी दिया निर्धन जिलों की उपभोक्ता समितियों के लिये प्रारंभिक आर्थिक सहायता भी दी, प्रत्येक सहकारी समिति की सप्लाई करने की गारंटी दी तथा कुछ अप्राप्य वस्तुओं का ठेका भी दिया।

इन सहकारी समितियों के लिये सप्लाई का प्रबन्ध करने के लिये यह आवश्यक हो गया कि कोई केन्द्रीय वितरण समिति हो। अतः जनवरी १६४३ के अन्त में कोआपरेटिव होलसेल डिस्ट्रीब्युशन (थोक वितरण) की स्थापना हुई। यह एक जनता की संस्था थी जिसका प्रबन्ध सहकारी विभाग का कमिश्नर करता था।

किन्तु सबसे कठिन और आवश्यक कार्य तो ऐसे देश में सहकारी समितियों की स्थापना करना व चलाना था जहां पहले कभी इस प्रकार की समितियां नाम की भी नहीं थीं। सरकार ने सहकारिता, के प्रचार, शिक्षा और संगठन के लिये एक बहुत बड़ा आन्दोलन चलाया जो १८ महीने तक चला। सहकारी विभाग के सारे कर्मचारियों को इसमें कुछ न कुछ सहयोग देने को बुलाया गया। आन्दोलन आरम्भ होने के समय (अक्टूबर १६४२) में ऊंचे पदों के अलावा इसके मुख्य अधिकारियों में ३३ इंसपेक्टर और ५५ सबइन्सेपेक्टर थे, जिनका मुख्य काम लेखा जोखा देखना तथा सहकारी संस्थाओं का निरीक्षण करना था। यह अमला बहुत ही अपर्याप्त था इसलिये यह आवश्यक हो गया कि नया अमला भर्ती किया जाय और उन्हें जल्दी जल्दी २ सप्ताह का आरम्भिक प्रशिक्षण दिया जावे। अप्रैल १६४३ तक सबइंसपेक्टरों की संख्या १२५ हो गई। अप्रैल १६४५ में ६०६ हो गई तथा इंस्पेक्टरों की संख्या ८८ हो गई।

उसी प्रकार सहकारिता के लिये प्रचार और शिक्षा के कार्य को भी केन्द्रित किया गया और बढ़ाया गया। अक्टूबर १६४३ में इस काम के लिये एक विशेष विभाग भी खोला गया। इसका कार्य काम में लगे हुये

इंसपेक्टर व सबइंसपेक्टरों को नियमित और उचित प्रशिक्षण देना, नये भर्ती किये हुये लोगों तथा ऊंचे पदों पर बैठे लोगों को प्रशिक्षण देना, दूसरे विभाग के अधिकारियों तथा जनता के लिये पाठ्यक्रम चलाना और परीक्षाओं का आयोजन करना था।

एक सहकारी विद्यालय की भी स्थापना हुई। यह आवास विद्यालय था जहां सहकारिता, सहकारी विधि, अकाउंटेंसी (लेखा जोखा) और अंकेक्ष राजनैतिक, अर्थशास्त्र, आर्थिक इतिहास, आर्थिक भूगोल, (श्री लंका का संदर्भ देते हुये) तथा कृषि और सामान्य विधि निर्माण के सम्बन्ध में कुछ बुनियादी शिक्षा दी जाती थी। अप्रैल १९५४ के अन्त तक जब स्कूल को चलते १९ महीने हो गये उस समय तक स्कूल ने ७ नये इंस्पेक्टर, और ३७९ नये सब इंस्पेक्टरों को प्रशिक्षित किया।

उसी समय में प्रादेशिक आधार पर प्रचार और शिक्षा का कार्य भी चलाया जा रहा था। १९४४-४५ के वित्तीय वर्ष में सहयोग विभाग के विभागीय ब्यूरो ने मुख्यतया समिति के सदस्यों के लिये १९५ अल्पकालिक पाठ्यक्रम चलाये।

परिणाम :

आन्दोलन आरम्भ करने के ६ महीने के उपरान्त ही उपभोक्ता समितियों की संख्या ८४५ तथा सदस्यों की संख्या २२५८०० हो गई। (अप्रैल १९४३ से अक्टूबर १९४३ तक सहकारी समितियों की संख्या १६०० हो गई। अप्रैल १९४४ तक यह संख्या ३६२७ व सदस्यों की संख्या ८२६९१४ हो गई। अप्रैल १९४५ तक ४००० से ऊपर समितियां थीं व सदस्य संख्या १० लाख से ऊपर थी। ये सदस्य ४० लाख व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसका आशय यह है कि उपभोक्ता समितियां उस समय की आवश्यकता का दो तिहाई माल सप्लाई कर रही थीं।

अप्रैल १९४४ तक आन्दोलन का कार्य समाप्त हो गया और इसे दृढ़ करने का प्रमुख कार्य आरम्भ किया गया। यद्यपि प्रयोग खाद्य वितरण, मूल्य तथा उचित वितरण की समस्या का समाधान करने में सफल हुआ था किन्तु फिर भी इसने कुछ नई समस्याओं को जन्म दिया। पहले तो, इस प्रकार बनी हुई सहकारी समितियां प्रशासन की

दृष्टि से बहुत आदर्श नहीं थीं। इनके सुधार के लिये बहुत सा प्रबन्ध, सफाई करना व शिक्षा बाकी थी दूसरे सहकारिता के विभाग ने यह बात पूरी तरह जान ली थी कि परिस्थितियां एक बार फिर सामान्य होने पर ये समितियां ठीक ठीक काम नहीं चला सकेंगी। उसके लिये कुछ सामयिक उपाय करने पड़ेंगे जिसमें सारी योजना को सफल बनाने के लिये कुछ बलिदान की आवश्यकता होगी।

तीसरा अध्याय

कृषकों, लकड़हारों तथा मछुओं की समस्यायें

पशुपालन :

फ्रेंच अधिकृत मोराक्को में भेड़ों का सार्वजनिक बाड़ा— संक्षिप्त में वर्णन किया गया निम्नांकित प्रयोग मेकनेज के दक्षिण में एल हजेक के जिले में किया गया था। उचित रूप से देखा जाय तो ये संस्थायें, जिनका वर्णन किया है सहकारी संस्थायें नहीं हैं। लेकिन ये हैं काफी दिलचस्प। अपने आप में भी काफी दिलचस्प हैं, और इस कारण से भी कि ये विकास के एक स्तर का प्रतिनिधित्व करती हैं तथा यह बतलाती हैं कि किस प्रकार पूँजीपति युग से पहले की पारस्परिक सहायता करने की परम्परा आधुनिक ढंग की सहकारी समितियों के रूप में भी परिणत की जा सकती हैं।

समस्या :

प्रश्न यह था कि उस प्रदेश में जहाँ फसल बिलकुल पैदा नहीं की जा सकती थी वहाँ भेड़ पालन के द्वारा स्थानीय लोगों को निर्धनता के चंगुल से किस प्रकार बचाया जा सकता है ? यह आवश्यक था कि स्थानीय भेड़ों की किस्म को या तो धीरे धीरे सुधारा जाये या उनके स्थान में बिलकुल नई लाई जायें क्योंकि वे भेड़ें निर्यात के योग्य नहीं थीं। चरागाहों को फिर से बनाया जाये या रक्षा की जाये, और लोगों को सहमत किया जाय कि वे लोग काफी तादाद में चारा संचय करें। इसके अतिरिक्त भेड़ों को पालने के तरीकों में भी सुधार किया जाय जैसे शरणालय बनाकर, भेड़ों के गृह बनाकर, टीके

लगवाकर, रद्दी भेड़ों की प्रजनन शक्ति समाप्त करके इत्यादि इत्यादि तरीकों से।

ला तिमेजगिदा :

फ्रेंच प्रशासन के इस ओर कदम उठाने के उपरान्त जिले के सिविल कंट्रोलर ने यह प्रयोग आरम्भ किया और समस्या को सुलझाने के नये तरीके आरम्भ किये। उसने कुछ दलों के भागों को मिलाकर सामूहिक प्रयास का एक ऐसा आयोजन आरम्भ किया जिसमें प्रत्येक को कुछ न कुछ जिम्मेदारी लेनी पड़ती थी। इसमें सम्पत्ति सब लोगों के अधिकार में होती थी और प्रबन्ध के लिये भी सभी लोग उत्तरदायी होते थे, तथा लाभ में से आपस में बांट लिया करते थे।

इस प्रयोग की सफलता की निश्चितता के लिये जिससे कि आर्थिक और शैक्षिक का दुहरा उद्देश्य सध सके यह आवश्यक था कि यह सिद्धान्त सम्बन्धित लोगों द्वारा समझ लिया जाय और स्वीकार कर लिया जाये। "यह आवश्यक था कि इस प्रकार की संस्था का निर्माण किया जाये जिसकी जड़ें बर्बर लोगों की स्थानीय आदतों में हों और वास्तव में ऐसी संस्था "तिमेजगिदा" (तम्बू की शक्ल की मस्जिद) यहाँ पहले ही मौजूद थी।"

प्रत्येक "दुआर" (एक सामाजिक इकाई, तम्बुओं का एक गाँव) में एक तम्बू होता है जो मस्जिद, विद्यालय तथा अध्यापक (फकीह) के रहने का सम्मिलित रूप से काम देता है। तम्बू का खर्च और अध्यापक की तनख्वाह सामूहिक पूँजी (मस्जिद की सम्पति) में से काट ली जाती है। इस सामूहिक सम्पत्ति में न केवल तम्बू बल्कि भेड़, बकरी व पशुओं के झुन्ड भी शामिल होते हैं। यह संस्था समय के प्रवाह के साथ २ विकसित हुई है यद्यपि इसका आरम्भ धार्मिक कार्य के लिए हुआ था। किन्तु मस्जिद की सम्पत्ति से "दुआर" के सारे सार्वजनिक खर्च अदा किये जाते थे तथा दान के कार्य भी उसी में से किये जाते हैं (जैसे अपरिचित व व्यथित व्यक्तियों की सहायता करना)। इसके अतिरिक्त "दुआर" में अन्य अनेकों पारस्परिक सहायता के कार्य भी होते थे। यह काम प्रायः जानवरों को उधार देकर किया जाता था।

इस प्रकार यह पुरानी प्रथा आधुनिक ऋण देने वाली सहकारी समिति से बहुत कुछ मिलती जुलती थी।

स्पष्ट है कि इस रूप में यहाँ पहले से ही एक ऐसी संस्था मौजूद थी जिसे परम्पराओं की प्रतिष्ठा और स्थिरता प्राप्त थी और जिसके द्वारा सामूहिक सम्पत्ति का निर्माण हुआ था (जो चली थी), जिसका प्रबन्ध सामूहिक ढंग से होता था और जिसका उपयोग भी सामूहिक कार्यों के लिए ही होता था।

जिम्मेवारी :

"सार्वजनिक भेड़ों के बाड़ों की स्थापना इसी आदर्श पर हुई थी किन्तु उन्हें संगठित दूसरे ढंग पर किया गया है। इसकी सामाजिक इकाई "दुआर" उस समुदाय का एक छोटा सा भाग है। भेड़ों के बाड़े "एक समुदाय के तिमेजगिदा" हो गये।

इस प्रकार की जिम्मेवारी का क्या रूप होता है ? उदाहरण के लिये पहले 'भेड़ों का बाड़ा' जिसकी स्थापना ६ मई १६३५ को हुई, लिया जा सकता है और इसके वर्णन से अन्य के विषय में भी कुछ जाना जा सकता है।

जिस "समुदाय" के बारे में हम बात कर रहे हैं उसके पास केवल ४००० फ्रैंक की पूँजी अच्छे किस्म के मैंने खरीदने के काम में ले ली गई। उसी समय काम करने वाले लोगों को भी आयोजित किया गया ताकि ५० मीटर लम्बा ५ मीटर चौड़ा लोहे की चद्दरों से ढका एक बाड़ा बनाया जा सके।

समीप ही का एक भू भाग जो कृषि योग्य था और जिसमें सिंचाई की सुविधा भी उपलब्ध थी पत्थर वगैरह हटाकर साफ कर दिया गया, और पहली चरागाह बनाने के लिये लगभग ७ हैक्टर (एक नाप) क्षेत्र जोत दिया गया। इसके बाद एक भाग जो पैदा करने के लिये, एक दूसरा जंगली ओट पैदा करने के लिये तथा तीसरा मक्का पैदा करने के लिये साफ किया गया। इस उपाय से यह आशा हो गई कि शुष्क मौसम में पूरा हरा चारा मिल सकेगा।

सिंचाई के लिए जल की व्यवस्था तीन झरनों से की गई जिनमें से एक २००० मीटर दूर था। इस कार्य लोगों के अपने उत्साह से ही हुआ था।

इसलिये इस जिम्मेवारी में यह लाभ था कि सम्बन्धित लोगों से अपने आप सहायता प्राप्त हुई। जो लोग धन दे सकते थे उनसे धन के रूप में तथा शेष से श्रम के रूप में। यद्यपि परिश्रम कभी कभी बहुत ही कठोर होता था फिर भी लोग प्रसन्नता से यह किया करते थे।

दूसरे एक और इसी प्रकार के भेड़ों के बाड़े का वर्णन करते हुए मि० बोनीफेस ने कहा है, "चरागाह का खेत एक बहुत ही चट्टानी जमीन पर" तथा बहुत ही भारी श्रम से बनाया गया था, जिसे निर्माण करने का कार्य उन लोगों ने प्रसन्नता से किया। बहुत भारी भारी चट्टानें पृथ्वी के गर्भ से निकाल कर हाथ से ही बाहर फेंक दी गई (बारूद से चट्टानें उड़ाने का कार्य केवल जहाँ आवश्यक था वहीं किया गया)। इस सब काम का फल यह हुआ कि चट्टानी भाग के मध्य दो हैक्टर लम्बा चौड़ा खेत बिलकुल साफ किया गया और सिंचाई की सुविधा से युक्त मैदान में परिवर्तित कर दिया गया जहाँ अब चारा पैदा किया जा सकता था।

एक दूसरे, भेड़ों के बाड़े का वर्णन करते हुए वह लिखता है "काम ५ दिन में पूरा कर दिया गया यद्यपि यह बहुत कठिन हो गया था क्योंकि उस जगह पर्याप्त जल नहीं मिल सकता था, और यह बड़े बड़े बर्तनों द्वारा हाथ से इतनी दूर से लाया जाता था।"

इस सारे काम का प्रबन्ध जिसमें भेड़ों के बाड़े, मकान, भेड़ों के रेवड़, फसलें, कृषि के औजार तथा लगान आदि शामिल हैं, एक प्रबन्धक बोर्ड के हाथ में है।' वैसे तो इस बोर्ड की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वहां पहले ही "जैमा" या लोकप्रिय सभा थी जो गण के झगड़ों का निबटारा करती थी। "जैमा" लेखा जोखा देखती है, तथा कार्य की सामान्य नीति पर वाद विवाद करती है और नये नये निश्चय करती है।

१९३५ में इन सार्वजनिक भेड़ों के बाड़े में से एक का निर्माण हो चुका था और शेष के बारे में या तो शुरू करने का विचार किया

जा रहा था या उन्हें बताना शुरू किया जा रहा था। क्योंकि "जिलों में वहां की स्थानीय निवासियों की यह तीव्र इच्छा है कि जहां कहीं इनकी स्थापना नहीं हुई है वहां ये स्थापित कर दिये जायें।"

जैसा कि इनके संस्थापक ने सोचा था, ये सार्वजनिक भेड़ों के बाड़े केवल धन पैदा करने के लिये नहीं बनाये गये थे किन्तु इसलिये आरम्भ किये गये थे कि वे सहकारी समितियों का स्थान भी ग्रहण कर सकें। दूसरे शब्दों में सामूहिक स्वयं सहायता की आदत व परम्परा डाल देना और नई शैलियों को लोकप्रिय बनाने में माध्यम का काम देना, सामूहिक कृषि के नये तरीके, भेड़ों को नरिया करना, निशान लगाना, भेड़ों का ऊन उतारना इत्यादि काम भी सन्मुख रखे थे। वे नवयुवकों को शिक्षित करने का भी कार्य करते थे। अलहजीब के "बर-बर" प्राइमरी स्कूल के विद्यार्थियों को समीपस्थ भेड़ों के बाड़े में ले जाया जाता था, ताकि वे कृषि के ढंग सीख सकें और यह बात भी सीख सकें कि इस सारे काम को किस प्रकार से संगठित किया गया था।

न्यू गिनी में सहकारी कृत्रिम वन :

इस प्रयोग के पहले भाग के विषय में रैवरेन्ड ए० विलएंट ने अपने एक पत्र में जो "कोआपरेटिव न्यूज" में जो सिडनी में पहली नवम्बर १९४८ को छपा, वर्णन किया है।

सुफल :

अगस्त १९४६ में ३००-४०० व्यक्तियों की एक मीटिंग ने यह निश्चय किया कि गांवों से घिरे हुये गोना के मिशन को फिर से बनाया जाये। जिससे आगे बढ़ कर, बड़े-बड़े नारियल कोको, रुई और काफी के बन बनेंगे।

दो हजार पौंड से भी अधिक का धन लाया गया और उसे गांव गांव में पहुँचा दिया गया। ३०० पौंड के कुल्हाड़े, फावड़े और कुदालियां खरीदी गईं। ८ स्थानीय सहकारी कृत्रिम भवन स्थापित किये गये जिनको अब मिलाकर "गोना डिस्ट्रिक्ट क्रिश्चियन कोआपरेटीज़" नाम का संघ बना दिया गया।

दो कृत्रिम बनों को गण के भू स्वामी से भूमि मिली जिसे कि सरदार के बच्चों ने दे दी थी।

प्रत्येक दशा में जंगली झाड़ियों को हटाकर उनके स्थान पर चावल, मटर और स्थानीय खाद्य सामग्री, कहवा और थोड़ी सी भूमि पर कोको, रबर और रुई भी प्रायोगिक रूप में बोई गई। इनमें से दो कृत्रिम बनों में इतना पर्याप्त चावल पैदा हो जाता है कि वे अपने सारे गांव वालों को आसानी से खिला सकते हैं। साथ ही साथ और भी बहुत सी खाद्य सामग्री तैयार की गई है। दूसरी फसलें बीज की कमी के कारण इतनी अच्छी नहीं हो पाई हैं। लेकिन ऐसी आशा है कि थोड़े ही वर्षों में कहवा और कोको की अच्छी फसल मिलने लगेगी। यदि शीघ्र ही धान कूटने की एक मशीन मिल जाये तो कोर्ट मोर्सबेक के सहकारी कार्यकर्ताओं के साथ शीघ्र ही व्यापार भी शुरू कर दिया जायेगा।

एक स्थानीय चुनी हुई समिति और अध्यक्ष द्वारा कुछ उपभोक्ता समितियां तथा एक समाज केन्द्र भी (चाय के दुकानों के साथ) चलाया जा रहा है।

शिक्षण, प्रशिक्षण और पर्यवेक्षण:

डिपार्टमैंट ऑफ पब्लिक सर्विसेज़ एण्ड नेटिव अफेयर्स (जन सेवा और स्थानीय मामलों का विभाग) का एक विशेष अधिकारी सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार का काम करता है। उसके विभाग के छः प्रशिक्षित आदमी जिन्होंने खाते रखने और सहकारिता के पाठ्यक्रम का अध्ययन किया है अब इन्सपेक्टर के रूप में उसकी सहायता करते हैं। इसकी पत्नी, स्त्रियों की एक कक्षा को शिल्प उद्योग में भविष्य के विकास के लिये प्रशिक्षण कर रही है।

फादर विलएंट नाम के पादरी प्रति सप्ताह एक सहकारी नेतागीरी की कक्षा चलाते हैं। यहां कक्षाओं के लिये उन्हीं स्त्रियों व पुरुषों को विद्यार्थी के रूप में चुना जाता है जिन्होंने शिक्षा का एक निश्चित स्तर प्राप्त कर लिया है और जो कृत्रिम बनों के अच्छे कार्यकर्ता हैं। यहां मुख्यतया निम्नांकित विषय पढ़ाये जाते हैं: सहकारिता का इतिहास और संगठन, विभिन्न देशों में सहकारिता, सहकारी कृत्रिम बन और गांव का स्थानीय अर्थ व्यवस्था में योग, सहकारिता, गांव के जीवन को स्थिर और विकास करने में सहायक बातें, किस प्रकार एक सभा का

आयोजन किया जाये ? उसकी लिखित कार्यवाहियां लिखी जायें ? थोड़ी सी अंग्रेजी और सामान्य ज्ञान, स्वास्थ्य इत्यादि ।

सहकारिता का निर्माण:

ग्रोनी देशी नेत्ज की अंगूर पैदा करने वालों की सहकारी समिति (यूगोस्लाविया):—जेग्रेब के समीप ही स्थित ग्रोनी देशी नेत्ज के अंगूर पैदा करने वाले लोगों ने १९२९ में यह सहकारी संस्था कायम की है। इसकी प्रसिद्धि का कारण इसका दीर्घकालीन जीवन नहीं है तथा जब गत महायुद्ध के कुछ वर्ष पूर्व यह आंकड़े एकत्रित किये गये थे तो उस समय इसका विस्तार भी इसे प्रसिद्ध बनाने योग्य नहीं था। इसमें ५० के लगभग सदस्य थे और इसके तहखाने का आयतन भी केवल २००० हैक्टोलिटर ही था। इसका महत्व इसमें है कि अपनी नवीनता और छोटे आकार के कारण एक बहुत सीधा सा उदाहरण प्रस्तुत किया। दूसरे यह यूगोस्लाविया के कृषकों के अपने प्रवृत्तिगत सहकारिता के विचार को व्यक्त करने का भी एक विशेष तरीका बन गया था।

यद्यपि जैग्रेब इसके बिलकुल समीप है किन्तु फिर भी यहाँ की सहकारिता बाहरी प्रचार के फलस्वरूप न होकर सम्बन्धित लोगों के प्रयास का ही फल है। यह प्रयास उन्हीं लोगों के प्रयत्न का फल है जिनके पास १।७ हैक्टर से लगाकर २ हैक्टर तक के क्षेत्रफल के अंगूरों के छोटे छोटे बगीचे हैं। चूंकि इन लोगों ने एक वर्ष पहले ही ऋण देने वाली समिति स्थापित कर ली थी और इन्हें भविष्य में आर्थिक संकट की आशंका थी इसलिए इन लोगों ने निश्चय कर लिया था कि वे अपने अन्य कार्यों के साथ साथ ही शराब बनायेंगे, इकट्ठी भी करेंगे और बेचेंगे।

इस प्रयास के अतिरिक्त एक और भी विशेष बात है जो प्रायः यूगोस्लाविया के सहकारी कार्यकर्ताओं में पाई जाती है। यह बात उनका वह तरीका है जिसके द्वारा सहकारिता का काम किया जाता है। सदस्य लोगों ने अपने आप मिलकर ही वह इमारत तैयार की जिसमें अंगूरों को कुचलने की मशीन और बड़े बड़े शराब रखने के बर्तन थे। इस काम की कीमत आंके जाने पर एक लाख साठ हजार दिनार तक

पहुँची, जिसको सदस्यों में शेयरों के रूप में विभाजित कर दिया है। समिति की बाक़ी पूँजी नकद चन्दे के रूप में इकट्ठी की गई और प्रत्येक आधा हैक्टर अंगूर के बाग़ के मालिक को लगभग दो हज़ार दिनार की दर से धन देना पड़ा। समिति के कार्य को ठीक से चलाने के लिये प्रत्येक सदस्य ने अपने आपको, दी हुई रकम से दस गुने धन तक के लिये, वचन बद्ध कर लिया था।

इन साधनों के अतिरिक्त कृषि मंत्रालय और बैंक आफ ज़ैग्रेब ने भी आर्थिक सहायता दी। साथ ही इसे सेंट्रल यूनियन आफ कोशियन कोआपरेटिवज़ से भी कर्ज़ मिला। यह नियम कि सदस्य लोग समिति को उससे मिलने वाली सेवा के अनुपात में ही चंदा दें इस समिति के हर काम में झलकता है। यह झलक इसके आरम्भ में भी दिखाई देती थी और तब भी जब कि पूंजी को एकत्र किया गया था और फिर इसके दैनिक कार्य काल में भी इसका मात्र वैतनिक सदस्य प्रमुख तहखाने का मालिक था। शेष कार्य सारे सदस्य मिलकर आपस में ही कर लिया करते थे। प्रत्येक सदस्य को उसके उत्पादन की प्रमुखता के अनुपात में एक निश्चित कार्य कुछ समय के लिये करना पड़ता था।

इस सहकारी संस्था का मुख्य कार्य अपने सदस्यों के लाभ के लिये शराब बनाना और बेचना था। उन लोगों को अपनी फसल के एवज़ में धन तभी मिल पाता था जब कि माल की बिक्री हो जाती थी। सबसे पहले उन सदस्यों को धन दिया जाता था जिनको इसकी अत्यावश्यकता थी। अंगूर की शराब को समितियां अपने सदस्यों को अंगूर के बाग़ के लिये आवश्यक सामान और आवश्यक उपकरण भी देती थीं। यह कार्य आंशिक रूप में स्थानीय ऋणदाता समिति द्वारा अपने ऊपर से लिया गया था।

लकड़हारे :

ऐटलस में देवदारू की लकड़ी काटने वालों की सहकारी समिति
(फ्रांस अधिकृत मोरक्को)

सन् १६३२ में हुए एक प्रयोग का यह संक्षिप्त वर्णन है।

समस्या :

मोराक्को के बड़े शहरों में बढ़ई द्वारा काम में लिये जाने वाले बड़े बड़े देवदारू के तख्ते ऐटलस पर्वत में (मुख्य रूप से "अजरू" और

"ट्नफाइट" में) प्रायः जून से सितम्बर तक काटे जाते हैं। इस काम में लगे रहने वाले लकड़हारों को इस समय के लिये अपना घर छोड़कर पहाड़ों में जाना पड़ता है। इसलिये उन लोगों को यह आवश्यकता होती है कि अपने घर वालों के लिये, अपने प्रवास काल के लिये कुछ न कुछ प्रबन्ध कर जायें ताकि उनके आने तक वे लोग अपनी गुजर कर सकें। इसके अतिरिक्त इन लकड़हारों को अपनी गुजर के लिये भी कुछ न कुछ धन चाहिये। इन लोगों को अपनी आवश्यक वस्तुयें प्रायः किसी लकड़ी के व्यापारी से मिल जाती हैं किन्तु इसके एवज में वह सारे जंगल को खरीद लेता है जिसमें कि उसके कर्जदार लकड़हारे लकड़ी गिराने जाते हैं।

यह कर्जदारी, और इसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाली पराधीनता और साथ ही साथ पहले से ही लकड़ी बेच देने का दायित्व इन लोगों की अपने भविष्य सुधारने की आशाओं के बिल्कुल विपरीत था। चाहे लकड़हारे कितनी ही अधिक लकड़ी काटें अथवा कितने ही अच्छे वृक्ष काट कर और उनसे अच्छे तख्ते बनाने की शैली को उपयोग में लावें (इन तख्तों को कुल्हाड़ी से वर्गाकार बनाना पड़ता है, जिसमें काफी समय और धन राशि का नाश होता था और विशेष कर उन वृक्षों के साथ जिनकी औसतन लम्बाई ३० मीटर थी और जिनकी परिधि १।५ या दो मीटर के लगभग होती थी) तख्ते जोड़ने वाले व्यक्ति फिर भी तख्तों के विषय में सदैव शिकायत ही करते रहते थे और कहा करते थे कि हमेशा उन्हें जब कभी भी ये तख्ते मिलते हैं वे सकड़े और पतले होते हैं और उपयोग के लिये उपयुक्त नहीं होते।

अतएव लकड़ी काटने वाले और तख्ते जोड़ने वाले दोनों ही के हित के लिये ऐसा हल सोचा गया कि जिसके द्वारा ये लोग साहूकारों के चंगुल से मुक्त हो जावें और अपने परिश्रम से उत्पादित वस्तु को स्वयं रख भी सकें और बाजार में उसे स्वयं ही बेच भी सकें।

ट्नफाइट सहकारी संस्था :

इसका हल बराबर लोगों के सामाजिक ढांचे पर ही आधारित था। इसमें प्रत्येक सामूहिक कार्य "जैपा" (विधान सभा) द्वारा किया जाता है। इसमें अनिश्चित संख्या के कुछ लोग रहते हैं जिन्हें सामूहिक रूप से चुना जाता है। प्रथम सहकारी संस्था की स्थापना "जैपा" के इन्हीं सिद्धान्तों पर की गई।

यह पहली सहकारी संस्था मार्च १६३८ में डिपार्टमेंट आफ नेटिव अफेयर्स (देशवासियों के मामलात वाले विभाग) के अधिकारी के प्रयासों के फलस्वरूप ट्रूनफाइट में स्थापित हुई। अफसर ने अपने आप में से अफसरी की बू हटा दी और लकड़हारों के साथ बराबर का व्यवहार रखकर वह उन्हीं में मिल गया और अन्त में बहुत ही ढंग से उनके साथ घुल मिलकर उनसे सहकारिता का एक नया सूत्र निकाल ही लिया।

सहकारी संस्था ने १४० देवदारु की लकड़ी काटने वालों को संगठित कर लिया और उन्हें चार पांच के दल में बांट लिया। पहले प्रवर्तक की सहायता से और तत्पश्चात् प्रशासन की सहायता से सहकारी संस्था को बैंक से अपने कार्य के लिये आवश्यक धन भी मिल गया। प्रत्येक दल अपने लाभ के लिये जंगल में काम करता था। "जैपा" तख्तों को इकट्ठा करके सीधे के सीधे बेच दिया करता था। अतएव मध्यजन (मिडिल मैन) की भी आवश्यकता नहीं रहती थी।

शीघ्र ही उस प्रदेश की अन्य सहकारी संस्थाओं के सहयोग से उसे उसी आदर्श पर स्थापित हुई थी, विक्रय का कार्य आरम्भ हो गया। उसी वर्ष मोराक्को में भी १३ सहकारी संस्थाओं की स्थापना हुई और फोरस्ट्री डिपार्टमेंट (वन विभाग) ने उन्हें २०० टेढ़ी काटने वाली आरियां दीं ताकि उत्तम कार्य संभव हो सके।

परिणाम :

कार्य आरम्भ होने के दूसरे महीने से ही सुपरिणाम भी आरम्भ हो गये। लकड़ी काटने वालों ने, यह जानकर कि उनका हित उनके उत्पादन में ही है, तख्तों की किस्म सुधारना आरम्भ कर दिया। इससे तख्ते जोड़ने वालों को भी संतुष्टि मिली और इसका परिणाम यह निकला कि मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि हो गई। औसतन ४ मीटर लम्बा तख्ता जिसका कि मूल्य गतवर्ष कठिनाई से साढ़े सात से बारह फ्रेंक था, इस समय मंडी में बीस पच्चीस फ्रेंक में मिलने लगा और कुछ अच्छी किस्म के तख्तों का मूल्य तो ३० से ३५ फ्रेंक तक हो गया। एक सहकारी समिति ने लकड़ी गिराने के काम के लिये ३५००० फ्रेंक उधार लिये थे, और एक महीने के काम के उपरान्त ही यह इस हालत में हो

गई थी कि अपने कर्ज़ का एक तिहाई हिस्सा चुका दिया और साथ ही साथ १२,००० फ्रैंक की बचत भी कर ली।

पुनर्वनारोपण:

वृक्ष लगाने के लिये फ्रांसीसी स्कूल सहकारिता

"यदि सभ्यता से पूर्व वन होते हैं, तो उसके उपरान्त मरु होगा।"

जो पीढ़ी वृक्ष लगाती है प्रायः उसे अपने इस श्रम से लाभ उठाते नहीं देखा गया, किन्तु यदि पुनः वनारोपण को पारस्परिक सहायता का कार्य समझ कर पीढ़ी दर पीढ़ी चलाया जावे तो यह सम्भव हो जाता है कि इसकी भावी संतति की रुचि इसमें जाग्रत की जा सके क्योंकि उन लोगों को इस परिश्रम से प्रत्यक्ष लाभ मिलता है।

१९४८ से आगे फ्रांस के एक एन नामक प्रांत में विकसित स्कूल सहकारिता विभाग की वन, चरागाह और फल उत्पन्न करने वाली समिति ने इसका एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

इनमें से पहले (वन) की स्थापना एक स्कूल के अध्यापक द्वारा की गई थी। इस आन्दोलन को शीघ्र ही एक ओर तो विद्वत् समाज, स्थानीय अधिकारी 'सोसाइटी ऑफ दी लवर्स' (वृक्षों के चाहने वालों का समाज) से नैतिक और आर्थिक सहायता मिलनी आरम्भ हो गयी तथा दूसरी ओर उसे फ्रांस के वन विभाग (एडमिनिस्ट्रेशन डि० आक्स एट फोरेस्ट्स) का तकनीकी सहयोग भी उपलब्ध हुआ। नवयुवक सहकारी कार्यकर्ता अपने-अपने कम्यून्स (ज़िलों) के लोगों को अपने पक्ष में करने में शीघ्र ही सफल हो गये, और इस प्रकार उन लोगों से अंशदान (कन्ट्रीब्यूशन) प्राप्त किया। उसकी सहायता से उन कामों के लिए खर्च देना सम्भव हो गया (जैसे भूमि तोड़ना, गाड़ी का व्यय, वृक्ष उखाड़ना) और बिना व्यय किये छोटे बच्चों के साधारण श्रम की भांति किये जाने से सम्भव नहीं हो सकते थे।

प्रत्येक स्कूल की इस प्रकार की सहकारी संस्था का प्रबन्ध एक संरक्षक समिति द्वारा होता है जिसमें प्राइमरी स्कूलों के इंस्पेक्टर, वन विभाग के इंस्पेक्टर तथा कम्यून (ज़िले) का मेयर भी सम्मिलित होता है।

स्कूल की वन सहकारी समितियों ने पुनवनारोपण के कार्य को भी बहुत आश्चर्यजनक ढंग से अपने हाथ में लिया है। वे लोग ऐसे स्थानों पर वृक्ष लगाते हैं जो चरागाह के लिये उपयुक्त नहीं हैं। इसके अतिरिक्त जो स्थान चरागाह के उपयुक्त हैं उन्हें भी सुधार कर उनसे उत्पादन बढ़ाने का प्रयास करते हैं। १९०८ में सहकारी समितियों ने एक संघ (फेडरेशन) बनाया जिसमें 'दी लवर्स आफ दी डिपार्टमेंट दी ऐन' को भी मिला लिया। १९३१ तक इस संघ की कुल सदस्य संख्या प्रौढ़ और बालकों समेत २६०० हो गई। ये लोग ५६ सहकारी समितियों से लिये गये थे। संघ ने प्रचार कार्य किया, नई सहकारी संस्थाओं की स्थापना में सहायता की, मौजूदा संस्थाओं को तकनीकी (टेक्निकल) सहायता दी, अनुदान (ग्रांट्स) तथा ऋण दिये, अर्थ साहाय्य प्राप्त किये, तथा सदस्यों के आर्डरस (मांगों) को एकत्रित किया ताकि सप्लाई करने वालों से उनके लिये एक मोटी सी कटौती मिल सके। एक फल की रोपणी (नर्सरी) सहित चार संघीय रोपणियां (नर्सरीज) भी स्थापित की गईं ताकि सदस्यों को मुफ्त में पौधे मिल सकें।

अपने संस्थापन के समय से १९३१ तक स्कूल सहकारी समितियों ने ५,२९०,६२२ गोंद के वृक्ष लगाकर विभाग की १५५० हैक्टर भूमि को कृषि योग्य बना दिया, चरागाह के लिये ८५ हैक्टर भूमि सुधार ली ६२,२९० सेब, नाशपाती तथा सौन्दर्यबर्धक वृक्ष लगाये, और बहुत सी वाटिकायें फिर से स्थापित की जो कि लुप्त प्रायः हो रही थीं। उन लोगों ने हानिकारक कीड़ों को समाप्त करके तथा लाभदायक पक्षियों के लिये प्रजनन स्थल और रक्षितालय बनाने के कार्य में भी क्रियात्मक भाग लिया।

लकड़हारे : कुल सामान्य सूचनायें :

वन सहकारी संस्थायें उन्ही देशों में अधिक विकसित हुई हैं जहां बहुत अधिक वन हैं या जहां की अर्थव्यवस्था में वनों का बहुत बड़ा योग है, जैसे जर्मनी, पोलैंड, स्विटजरलैंड, और विशेष रूप से बल्गेरिया, कनाडा, जेकोस्लोवाकिया, फिनलैंड, रूमानिया, स्वीडन, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा रूस।

सामान्यता ये सहकारी समितियां छोटे या मध्य स्तर के मालियों के हित के लिये वन में उचित मात्रा में वस्तुयें पाने के लिये (कभी-कभी

पुनर्वनारोपण के लिये भी) तथा मिलजुल कर इमारतों की तथा जलाने की लकड़ी बेचने के लिये बनायी जाती थी। बल्गेरिया, कनाडा, रूमानिया तथा रूस में तो वृक्ष गिराने तथा लकड़ियां (इमारत की) तैयार करने के काम के लिये भी श्रम और उत्पादक समितियां बनाई गई हैं।

आई० एल० ओ० ने इन समिमियों पर आंकड़े एकत्रित कर लिये हैं जिनमें से कुछ 'कोआपरेटिव इन्फरमेशन' (सहकारी सूचना) में छपे भी हैं।

बल्गेरिया :

भू स्वामियों की इन समितियों के अतिरिक्त, महायुद्ध से पूर्व बल्गेरिया में ६४ समितियां लकड़हारों के लिये भी थीं जिनकी सदस्य संख्या ७५६० थी और जिन्हें सहकारी कृषि बैंकों का आर्थिक सहयोग प्राप्त न था। १६३५ में बेची हुई वस्तुओं (मुख्यतया शहतीर और रेल के तख्ते) का मूल्य अब २ करोड़ २० लाख लेवास (सिक्का) तक पहुंच गया था। समितियों ने १६३५ में अपने सदस्यों के लिये १ करोड़ १० लाख लेवास (सिक्का) की खाद्य सामग्री, तम्बाकू, औज़ार इत्यादि भी खरीदे।

कनाडा :

उसी प्रकार की समस्याओं ने पिछले दस वर्षों से, विशेष करके क्यूबेक प्रान्त के, लोगों को भी विवश किया है कि वे भी अपने प्रान्त में सहकारी संगठन का प्रयास चालू करें।

यह समस्या आर्थिक और मानवीय दोनों ही प्रकार की है। बड़ी-बड़ी कम्पनियों (बहुदा विदेशी) की समानुदान देने की प्रथा देश के एक प्रमुख प्राकृतिक साधन को नष्ट करती जा रही थीं। आर्थिक व्यवस्था के फलस्वरूप सामाजिक बुराइयां भी आरम्भ हो गई : समानुदानग्राही (कंसेशनेयर्स) लोगों ने मध्यजन और ठेकेदारों को ऐसे अधिकार दे दिये थे जिनसे कि समानुदाग्राही लोगों की लाभ की इच्छा का असर बेचारे लकड़हारों के जीवन स्तर और मजदूरी पर बिल्कुल उल्टा होता था। फलस्वरूप लकड़हारों में भयंकर असंतोष और अस्थिरता थी (जिनकी संख्या क्यूबेक में ही ६०,००० थी) इसीलिये या तो वे लोग एक स्थान से दूसरे स्थान को जाया करते थे या पूर्णतया देशान्तर ही कर लिया

करते थे। उदाहरण के लिये गेस्ये प्रदेश से गत ५० वर्षों में आज की कुल जन संख्या से भी अधिक लोग देशान्तर कर चुके थे।

इन खराबियों को हटाने के लिये सहकारी खेमे (चेन्टियर्स कोआ-परेटिब्स) बनाये गये। मध्यजनों को समाप्त करके तथा उत्पादन में वृद्धि करके इन्होंने लकड़हारों को उत्तम पारिश्रमिक तथा रहने और कार्य करने के अच्छे स्तर प्रदान किये हैं। बल्गेरिया की भांति यहां भी संस्थाओं का स्वरूप या तो श्रम सहकारिता की भांति है या उत्पादन सह-कारिता की भांति।

चूंकि लकड़हारे प्रायः अपना कार्य गांव से दूर किया करते हैं इसलिए यह सहकारी संस्था उपभोक्ता सहकारी समिति की भांति भी काम करती है। श्रमिक लोग मिलजुल कर सामूहिक रूप से जंगल में अपने आवास बना लेते हैं तथा वहीं अपने लिये भोजन तथा अन्य वस्तुओं का भी प्रबन्ध कर लेते हैं। एक हाल ही की योजना के अन्तर्गत तो एक पूरा का पूरा सहकारी उपनिवेश ही बन गया है, जिसमें गिर्जाघर, स्कूल, चिकित्सा तथा ऋणदाता समितियां तक मौजूद हैं।

पहले सहकारी कैम्प (१९३८) की स्थापना के उपरान्त अब संख्या में काफी तेजी से वृद्धि हो रही है। १९४५ में इन संस्थाओं में से कुछ को मुख्यतया से गेस्पेसी की १७ 'फोरेस्ट्री कोआपरेटिव एसोसि-एशन आफ क्यूबेक' में रख दिया। इसके उद्देश्य सार्वजनिक हितों की रक्षा करना, उत्पादित वस्तुओं के विक्रय या औज़ारों के क्रय में सहायता करना तथा ऋण उपलब्ध करना है।

रूमानिया :

रूमानिया की वन सहकारी समितियां छोटे-छोटे मालिकों में कभी भी दृढ़ता से स्थापित नहीं हो पाई थीं। उनमें से कुछ तो मैदान के रहने वाले आदमियों द्वारा स्थापित केवल सप्लाई मात्र करने वाली समितियां थीं जिनका कार्य समीप के छोटे जंगलों से अच्छी इमारती लकड़ी प्राप्त करना था। परन्तु अधिकतर सहकारी समितियां घने वनों में रहने वाले मज़दूरों द्वारा बनाई गई थीं जिनका काम अतिरिक्त कार्य निश्चित आय के साधनों का निश्चय करना था। राज्य ने भी इन संगठनों को प्रोत्साहित किया क्योंकि ये बेरोज़गारी के दिनों में लाभ-दायक थे और लकड़ी के कार्य में विदेशी लोगों का विरोध करते थे।

पहली सहकारी संस्था केवल २८ सदस्यों को लेकर १९०५ में बनाई गई । १९१० तक सहकारी संस्थायें ८९ हो गई थी और जिनकी सदस्य संख्या ४५९३ तक पहुँच गई। कृषि सुधार के उपरान्त बहुत से नये क़ानून बन जाने से इनकी बढ़ोतरी और भी आसान हो गई और विशेष कर १५ नवम्बर १९१८ के कानून के कारण जिसने सहकारी समितियों को किसी भी राज्यकीय वन से लकड़ी खरीदने की आज्ञा दे दी थी। १९३५ तक सहकारी समितियां की संख्या २५० हो गई सदस्य संख्या २८,००० हो गई और वार्षिक लेन देन ११९० लाख 'ली' का हो गया।

इनका आकार, कार्य और महत्व, श्रम और उत्पादन के प्रकार के अनुसार ही था। कुछ तो केवल वृक्ष गिराने और साधारण तरीके से वृक्ष काटने तक का ही कार्य करती थीं, दूसरी लकड़ी का सारा काम स्वयं करती थीं (या तो छोटे व्यवसाय के रूप में जैसे, टोकरे इत्यादि बनाना, या बड़े व्यवसाय के रूप में, जैसे बढ़ई, तख्ते जोड़ने वाले, पहिये बनाने वाले आदि जिनकी अपनी नैरो गेज रेलें तक थीं और अन्य भी बहुत सा सामान था) और कुछ केवल निर्यात का ही काम करती थीं।

इन सब सहकारी समितियों को रूमानिया के केन्द्रीय सहकारी संगठन से सहायता मिलती थी। राज्य उन्हें प्राथमिकता देता था, आर्थिक सहायता देता था तथा वन प्रशासन से भी उन्हें तकनीकी सहायता मिलती थी।

रूस :

१९३२ में स्थापित "आल रशियन यूनियन आफ फोरेस्ट्री कोआपरेटिवज एन्ड वुड वर्कर्स कोआपरेटिव्ज एक बहुत प्रबल और पेचीदा संस्था है। इसमें वनों में काम करने वाली श्रम सहकारी समितियां भी हैं, तथा साथ ही साथ दस्तकारी सहकारी समितियां भी हैं, जो वन उत्पादन से सरेस, वन अल्कोहल (शराब) इत्यादि इत्यादि तैयार करती हैं।

महायुद्ध से पूर्व १९३८ में, संघ में ३९०५ सहकारी संस्थायें थीं जिनके सदस्यों की संख्या ३७०६२० थी व लेन देन १६३०५ करोड़ रूबल का था।

संघ तथा उसकी स्थानीय संघीय शाखायें भी इस बात का पूरा पूरा ध्यान रखती थीं कि सहकारी आन्दोलन में भाग लेने वालों को साधारण व तकनीकी शिक्षा दी जावे। केवल सन् १६३५ में ही पुस्तकालय, कोर्सेज, पाठ्यक्रम, व्याख्यान, क्लब तथा सिनेमा इत्यादि की योजना में १ करोड़ ६ लाख रुपये व्यय किए गए।

रूस के स्थानीय मछुओं की सहकारी संस्था

(फ्रांसीसियों का अधिकृत मोरक्को)

रूस के स्थानीय मछुओं की सहकारी संस्थायें इसमें रुचि रखने वाले लोगों के प्रयास का फल न होकर अगादिर जिले के नेटिव अफेयर्स (स्थानीय मामलों) के कमिश्नर के प्रयास का फल थीं।

समस्या :

प्रति वर्ष जब फसल खराब हो जाती है तो रूस भी अकाल के डर से आक्रान्त हो जाता है। शासन के सामने सदैव यही समस्या बनी रहती है कि लोगों के लिए लगान और खाद्य पदार्थों के साधन किस प्रकार जुटाये जायें ? सौभाग्य से समुद्र तट पर मछलियों की अधिकता है इसके फलस्वरूप मछली पकड़ने के कार्य ने दो समस्याओं का हल निकाल दिया है। पहला यह कि इसने आबादी के कुछ भाग को गुजारे का साधन जुटा दिया, तथा साथ ही साथ आवश्यकता के समय के लिए खाद्य पदार्थ भी एकत्रित कर दिया। जिस समय यह प्रयोग आरम्भ किया गया था उस समय यह उद्यम लुप्त प्रायः सा हो रहा था। मछलियाँ पकड़ने की नावें समुद्र में काम देने योग्य न थीं और प्रायः काम में भी नहीं लाई जाती थीं। मछलियों की कीमत, मछुओं के रहने के खर्च, नाव व यन्त्रों के सुधार के खर्च व विभिन्न विकारों के अनुपात में आय भी पर्याप्त नहीं होती थी।

सहकारी समुदाय :

मछुओं को नव जीवन देने के लिए, उनकी नावों की मरम्मत तथा उन्हें साधन सम्पन्न करने के लिये, तथा उन लोगों को मछलियों के लिए उचित और एक सा मूल्य दिलवाने के लिए, यह आवश्यक था कि उन लोगों को एक दूसरे के निकट लाया जावे।

समुदाय उन सब प्रौढ़ लोगों के लिए खुला हुआ था जो मछली पकड़ने के कार्य के लिए शारीरिक रूप से स्वस्थ थे व सम्बन्धित बस्ती में रहते थे और जिन्होंने :

यदि वह छह से आठ तक मछुओं व मछली पकड़ने की नाव का स्वामी हो तो २५ फ्रेंक के ४ से छः तक के शेयर (हिस्से) प्राप्त कर लिये हों।

यदि वह ऐसी नाव का स्वामी हो जिसमें २ से ६ तक मछुए हों तो २५ फ्रेंक के २ से ३ तक शेयर प्राप्त कर लिये हों।

यदि वह पतवार लेने वाला हो तो, २५ फ्रेंक के १ से २ तक शेयर प्राप्त कर लिए हों।

मछुओं की कोई भी संगठित संस्था इस समुदाय की सदस्य हो सकती थी किन्तु इसे ६ से अधिक शेयर नहीं मिल सकते थे।

इस समुदाय में मई १९३५ में ४०० सदस्य थे जिनमें ५० नाव मालिक भी सम्मिलित थे।

समुदाय का शासन (देखभाल का कार्य) जनरल एसेम्बली द्वारा संयुक्त सदस्यो में से चुने हुए ९ सदस्यों के एक बोर्ड द्वारा होता है। प्रत्येक बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स के सदस्य अवैतनिक रूप से कार्य करते हैं। प्रत्येक डाइरेक्टर के पास कम से कम २ शेयर होते हैं जिससे कि उसके शासन सम्बन्धी कार्यों की गारन्टी हो सके। बोर्ड के सदस्यों की नियुक्ति तीन वर्ष के लिए होती है। बोर्ड के एक तिहाई सदस्यों का चुनाव प्रति वर्ष होता है। तथा बोर्ड के सदस्य नियुक्ति के लिए फिर खड़े हो सकते हैं।

सहकारिता :

सरकार से ११,२०० फ्रेंक की आरम्भिक पूंजी लगाकर ३० नवम्बर १९३४ को कार्य आरम्भ किया गया। पहले भुगतान के लिए और खास तौर से मोटर लारी खरीदने के लिए मरचेंट मैरीन सर्विस नामक संस्था से इसको ३५००० फ्रेंक की ग्रांट (धन सहायता) मिली, आफिस और स्टोर की इमारतों का निर्माण 'सर्विस डि डोमेन्स' ने किया।

उपरोक्त सुविधाओं व सहायताओं के कारण सहकारी संस्था तत्काल ही अपने विभिन्न कार्यों को चलाने की स्थिति में हो गई।

अपने सदस्यों को जो इसी से अपनी आवश्यक वस्तुयें खरीदने के लिये बाध्य होते हैं, यह जाल, लाइने, रस्से, फंदे, पतवार, बाहरी कीलें इत्यादि देती हैं। यह स्वयं भी नावें बनवा कर उसी मूल्य पर सदस्यों को दे सकती हैं तथा रूस के मछुओं को जो इसके सदस्य नहीं होते १० प्रतिशत अधिक मूल्य लेकर ये वस्तुयें दे सकती हैं।

लेकिन इसके एवज में इसके सदस्यों को अपने कुटुम्ब के लोगों को खिलाने के लिए आवश्यक मछलियों के अतिरिक्त, सब मछलियां सहकारी संस्था को देनी पड़ती हैं।

परिणाम :

समुदाय ने मछली के उद्यम को आवश्यक बढ़ोतरी प्रदान की है। प्रथम वित्तीय वर्ष (१९३५) में मछुओं ने ११८८ टन मछलियाँ पकड़ कर ३३५,००० फ्रैंक पाये, १९३७ तक मछलियों के पकड़ने के कार्य में पर्याप्त वृद्धि हो गई (१५८८ टन) तथा मछुओं का पारिश्रमिक तो लगभग दूने तक पहुंच गया (६१३,००० फ्रैंक)।

इस प्रकार जिस उद्देश्य के लिए इसकी स्थापना की गई थी वह पूर्ण हो गया है, भोजन के नए साधन उत्पन्न हो गए, और चूंकि फरवरी १९३६ तक सारे स्थानीय मछुए इसके सदस्य हो गए थे इसलिए ४०० के लगभग कुटुम्ब फिर से काम पर लग गए।

इस प्रयोग से सफलता आशा से भी अधिक मिली, और इसीलिए यह आवश्यक हो गया कि पकड़ी हुई मछलियों में से कुछ हिस्सा सुरक्षित रख लिया जाये।

डेढ़ महीने के अन्दर अन्दर सहकारी संस्था द्वारा बनवाए ९० मीटर लम्बे, ५ मीटर चौड़े तथा ७ मीटर ऊंचे, ईंटों से निर्मित सुखाने के तालाब के कारण भारी तादाद में मछलियों को नमक लगाकर रखना संभव हो गया। नमक लगाकर सुखाने का तरीका स्थानीय ढंग पर ही चलाया गया है, किन्तु उससे १ साल तक मछलियां सुरक्षित रखने की गारन्टी हो गई है और काम में लाने के वक्त शीघ्रातिशीघ्र उनका नमक हटाना भी सम्भव हो गया है।

सहकारी संस्था के पास नमक लगाकर उबाली हुई मछलियों के लिये दो भट्टे हैं। उबली, नमक लगी व सुखाई हुई मछलियों को रखने के लिए एक स्टोर है, और इनको बेचने के लिए एक दुकान (स्टाल) है।

सरकारी संस्था ने प्रोटेक्टोरेट (संरक्षक सरकार) द्वारा दिये गये सारे कर्ज को १९३७ तक ही वापिस कर दिया।

अन्य देशों में मछुए :

यदि आर्थिक व सामाजिक रूप से देखा जाय तो मजदूरी न करने वाले मछुओं व किसानों की मूल समस्या बहुत अंश तक एक ही सी प्रतीत होती है। किसानों की तरह मछुओं को भी कर्ज व उत्पादन के साधनों की आवश्यकता बनी रहती है, साथ ही साथ उत्पादित वस्तुओं के लिये उचित मूल्य व स्थिर बाजार या मंडी की भी आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त उन्हें इस बात के लिये भी धन की आवश्यकता होती है कि वे अपने घर वालों का बीमा करवा लें, और अपने व्यवसाय से उत्पन्न विशेष प्रकार के जोखिमों के विरुद्ध भी बीमा करवा सकें।

विभिन्न सरकारी संस्थाओं के रूप (किस्में) :

मछुए लोग अपनी इन बहुत सी आवश्यकताओं को मितव्ययता से व अपनी स्वतन्त्रता के अनुकूल परिस्थितियों में संभालने के लिये, मंडी के साथ सीधा सम्पर्क बनाने व स्थापित करने का प्रयास करते हैं। इन मंडियों में पूंजी की मंडियां, अपने व्यवसाय की वस्तुयें प्राप्त करने की मंडियां, अपनी मछलियां बेचने की मंडियां, इत्यादि हैं। विक्रय के सम्बन्ध में सुरक्षित स्थान (कोल्ड स्टोरेज) सुरक्षित रखने वाली फैक्टरियों इत्यादि का होना भी बहुत आवश्यक हैं।

जब वे लोग यह देखते हैं कि इस कार्य के लिये उनके व्यक्तिगत प्रयास निष्फल हैं, तो ये मछुए भी उसी प्रकार की सहकारिता का आश्रय लेते हैं जो किसानों में प्रचलित है, जिसमें रुपया उधार देने वाली सहकारी संस्थायें, सप्लाई सहकारी संस्थायें, विक्रय सहकारी संस्थायें, बीमा सहकारी संस्थायें आदि होती हैं।

अधिकांश देशों में रुपया उधार देने वाली व सप्लाई सहकारी संस्थायें (मछली मारने के यन्त्र, फंदा और कभी-कभी नाव बनाना भी) हाल ही के वर्षों में आरम्भ की गई हैं। विक्रय समितियों में भी बहुत वृद्धि हुई है और कुछ तो बहुत ही उन्नत हो गई हैं। बहुधा एक ही समिति से काम करती है। या तो वे काम वह शुरू से ही अपनी ज़िम्मेदारी में लेती है, या बाद में अपनी आरम्भ की हुई जिम्मेदारियों में वृद्धि करके। फिर भी अधिकांश ऋणदाता समितियां उधार रुपया देने का ही कार्य करती हैं। वे मुख्यतः बेल्जियम, कनाडा, फ्रांस, भारत, मारिशस व न्यूफाउडलैंड में मिलती हैं। हांगकांग की केन्द्रीय समिति (मछुओं की समिति) शायद इस नियम पर अपवाद है, किन्तु यह ऋण देने के कार्य को अपनी ओर से नहीं करती वरन् यह तो सरकार-द्वारा दिये गये रुपये को मछुओं तक पहुंचाने में केवल एक मध्यस्थ मात्र का कार्य करती है।

वितरण समितियाँ जो अपने सदस्यों को वस्तुयें व सेवायें (कभी-कभी जिसमें वर्कयार्ड भी शामिल है) प्रदान करती हैं यह सब उनके व्यवसाय व जिम्मेदारी के अन्तर्गत होता है। यह समितियां निम्नांकित देशों में पाई जाती हैं, बेल्जियम, ब्राज़ील, कनाडा, डेनमार्क, आयरलैंड, फ्रांस, ब्रिटिशगायना, आइसलैंड, जापान, न्यूफाउंडलैंड, नार्वे, पोलैंड, स्वीडन और अमेरिका।

बहुधा यह भी होता है कि वे ही या कुछ और समितियां अपने सदस्यों के घर वालों के उपयोग के लिये या जिस समय वे समुद्र पर व्यस्त होते हैं, खाद्य पदार्थ देती हैं। ऐसी समितियां कनाडा, फ्रांस, हांगकांग तथा आइसलैंड में प्रचलित हैं।

डेनमार्क, आइसलैन्ड नार्वे, तथा रूस में मछुओं की कुछ समितियों के पास अपनी निजी नावें भी हैं।

बहुत से देशों में जिनमें मछुओं की संख्या अधिक है, उन लोगों को मछलियों के विक्रय तथा कभी-कभी मछलियों को सुरक्षित रखने के कार्य के लिये भी समितियों के प्रबन्ध से परिचित होना पड़ता है ऐसे देशों में, आस्ट्रेलिया, ब्राज़ील, कनाडा, डेनमार्क, फिनलेंड, फ्रांस; इंग्लैंड, हांगकांग, आइसलैंड, इटली, जापान, नार्वे, नीदरलैंड्स, न्यूफांउडलैंड, पोलैंड, स्वीडन, अमेरिका व रूस आदि सम्मिलित हैं।

बेलजियम, कनाडा, स्पेन, तथा इंग्लैंड में विशेष समितियां आपसी समझौते पर मछुओं व उनकी नावों का बीमा करती हैं।

कभी-कभी विशेष रूप से, उस समय जब कि, मछुओं का समाज कुछ बिखरा हुआ सा रहता है। ऐसी अवस्था में सहकारिता उन लोगों के गृहस्थ जीवन में भी प्रवेश कर जाती है और अनेक आर्थिक कार्यों के अतिरिक्त और दूसरे कार्य भी उन लोगों के लिए कर देती है जैसे स्कूल की स्थापना करना व चलाना, पैंशन फंड का नियन्त्रण, दवादारू के लाभ का फंड इत्यादि।

गृह युद्ध से पूर्व विशेष रूप से यही बात थी और सम्भव है अब भी स्पेन की "पोजी टोस" मेरीहीमांस के साथ यही बात हो, जिसे सरकार से पुष्कल सहायता प्राप्त हुई है। हांगकांग में भी फिशेरीज़ कोआपरेटिव ने मछुओं व उनके कुटुम्बों की शिक्षा व कल्याण के लिये एक फंड खोल लिया है। भारत में भी मछुओं की ऋण दाता समितियाँ अपने सदस्यों की चिकित्सा की सुविधा के लिये उचित व्यवस्था करती हैं।

मुख्य देश :

मछुओं की सहकारी समितियों की प्रमुखता और उनकी प्रगति की सीमा प्रत्येक देश में वहां की मछली के उद्यम की प्रमुखता तथा अन्य सहकारी समितियों द्वारा प्राप्त प्रगति की सीमा के आधार पर भिन्न-भिन्न होती हैं।

यह आन्दोलन सर्वप्रथम यूरोप में प्रारम्भ हुआ। डेनमार्क और आयरलैंड में क्रमशः १० प्रतिशत व ३० प्रतिशत से भी अधिक व्यक्ति सहकारिता के आधार पर संयोजित किये गये हैं। आइसलैंड में सहकार आन्दोलन मछुओं को मंडी के सम्पर्क में लाने वाली, जिसमें निर्यात मंडी भी सम्मिलित है, प्रत्येक शाखा में दृढ़ता से जड़ पकड़ गया है। १९४६ में इटली में २६० मछुओं की सहकारी समितियां थीं। नार्वे और स्वीडन की केन्द्रीय मछुआ सहकारी समितियां उन्नति की उच्च सीमा पर पहुंच गई हैं और देश के मछली उद्योग में प्रमुख स्थान प्राप्त कर चुकी हैं।

१९४५ में रूस मछुओं की ४२६ सहकारी समितियां थीं जिनके सदस्यों की संख्या ५५०,००० थी।

हाल ही के वर्षों में उत्तरी अमरीका में, और विशेष रूप से कनाडा, अमरीका व न्यूफाउन्डलैंड में, मछुओं की समितियों ने मंडी में एक प्रमुख स्थान प्राप्त कर लिया है। एशिया भी इस प्रगति की दौड़ में पीछे नहीं रहा है, विशेष रूप से श्रीलंका, भारत और इनसे भी अधिक जापान है जहां प्रथम महायुद्ध के उपरांत के आंकड़ों से पता लगता है कि वहां ४५९,५२९ सदस्यों की ३६४७ मछुआ समितियाँ चल रही हैं।

निम्न देशों में मछुओं की समितियां प्रगति के पर्याप्त उच्च स्तर तक पहुँच गई हैं जहां से या तो वे नैतिक कार्यों, (प्रचार, शिक्षा संयोजन इत्यादि) के लिये या आर्थिक कार्यों (वितरण और विक्रय) के लिये संघीय रूप में बद्ध हो सकें। ब्राज़ील, कनाडा, श्रीलंका, स्पेन, फिनलैंड, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन, हांगकांग, इटली, जापान, पोलैंड, स्वीडन, रूस, नार्वे की भाँति आयरलैंड में भी वहाँ के मछुआ लोग बड़ी-बड़ी राष्ट्रीय सहकारी समितियों से जो केन्द्रीभूत सी हैं, सम्बन्धित हैं।

सहकारी सहायता।

सरकार प्रायः निम्नांकित एक या अधिक तरीकों से मछुओं की सहकारी समितियाँ की सहायता करती है :

१. उधार देकर या उसकी गारंटी देकर,
२. समितियों के संयोजन में सहायता देकर, या उपस्थित समितियों को आर्थिक सहायता देकर,
३. ब्रिटिश गायना की तरह, मछुओं को उनके काम में आने वाली वस्तुयें देकर, या श्रीलंका की तरह उनकी मछलियां खरीद कर,
४. पोलैंड में सरकार मछुओं की मौजूदा समितियों को 'मिश्रित केन्द्रीय संघ' की अर्थ व्यवस्था द्वारा धन व अन्य सहायता देकर कार्य चलाने में मदद करती है जिसका कार्य मछली उद्यम के हर अंग संचालन का है।

चौथा अध्याय

उद्योग धन्धों के मज़दूरों, घरेलू नौकरों तथा दस्तकारों की समस्यायें

सहकारी समितियों का कार्य और उनके मुख्य रूप :

अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता की रक्षा व उसकी पुनर्प्राप्ति के लिए तथा अपनी आर्थिक व सांस्कृतिक दशा सुधारने के लिए छोटे कारीगर व घरेलू उत्पादक भी उसी प्रकार के सहकारिता के तरीके काम में लाते हैं जैसे कि खेतों पर काम करने वाले किसान।

मुख्य रूप :

छोटे कारीगर तथा घरेलू उत्पादक लोग भी सहकारिता के आधार पर अपने आपको संयोजित कर सकते हैं ताकि कच्चा माल, औज़ार व शक्ति जिनकी उन्हें आवश्यकता होती है प्राप्त करने के लिये उन्हें आवश्यक उधार की सुविधा मिल सके, या अपनी उत्पादित वस्तुओं का सर्वोत्तम परिस्थितियों में विक्रय किया जा सके।

एक ही ग्रामीण समाज में एक ही व्यवसाय (लुहार, पहिए बनाने वाले, सुनार और कभी कभी कुम्हार) में लगे रहने वाले कारीगर लोग इतने अधिक नहीं होते कि वे अपनी सहकारी संस्था कायम करके उसे मितव्ययता से चला सकें। इस प्रकार की समिति के लिये बहुत से गांवों की आवश्यकता पड़ेगी। किन्तु दूसरी ओर यह भी संभव है कि कुछ घरेलू उद्योगों (बुनाई, कुम्हारगीरी इत्यादि) के लिए उसी गांव में एक या एक से अधिक छोटी छोटी सहकारी समितियां स्थापित की जा सकें, या केन्द्रों पर जो भौगोलिक, आर्थिक या

अन्य किसी विशेषता के कारण महत्ता पा गए हैं और जहाँ बहुत से लोगों को छोटे-छोटे स्वतन्त्र कारखानों में काम मिल सकता है उन समितियों को कारीगरों के लिए स्थापित किया जा सके।

उद्योगों में जहां कारीगरों को काम करने के लिए रख कर उन्हें कुटीर उद्योग के ढंगों पर ही काम करने दिया जाता है वहां मज़दूरों की उत्पादक सहकारी समिति सबसे आदर्श स्थिति प्रदान करती है, किन्तु इसको ठीक-ठीक अपनाने में यह सबसे कठिन है क्योंकि इसमें केवल एक पहलू सम्बन्धित मज़दूरों को उत्पादन और लाभ ही उनके हाथ में देने का नहीं है बल्कि उन्हें पूंजी इसके लिए भी एकत्रित करनी पड़ती है और उत्पादन का नियन्त्रण करना पड़ता है। इसमें वस्तुयें भी प्राप्त करनी पड़ती हैं और उत्पादित वस्तुओं के लिए मण्डी भी तलाश करनी पड़ती है।

मज़दूरों की उत्पादक सरकारी समितियों व कारीगरों की सहकारी समितियों में उसी प्रकार का अन्तर है जैसा कि कृषि की समितियों व ग्रामीण वितरण समिति या विक्रय समितियों में।

श्रम समितियां, जो सबसे कम पेचीदा होती हैं, वे अपने आपको उन्हीं कार्यों तक सीमित रखती हैं जिनके लिए उन्होंने लिखित में ज़िम्मा ले लिया है। प्रायः वे किसी कारखाने में काम करने वाले लोग ही होते हैं जो यदि आवश्यकता पड़े तो मालिक के औज़ारों को उपयोग में ले लेते हैं और इस प्रकार बिना पूंजी के भी काम चला लेते हैं। ये प्रायः उस प्रकार के व्यवसाय में पाए जाते हैं जहां कुशल या अकुशल कार्य बहुत कम या बिना धन के, एक समूह के द्वारा किया जाता है। (इमारत बनाने, सड़क व बांध बनाने, खान उद्योग, लकड़हारों व बंदरगाह के मज़दूरों का कार्य इत्यादि इसी प्रकार के होते हैं) परन्तु सदैव ही ऐसा नहीं होता उद्योगों की शाखाओं में भी ऐसे लोग पाये जाते हैं जहां विभिन्न वर्कशाप को जो वैसे तो एक दूसरे से स्वतन्त्र होती हैं परन्तु जो सहकारिता के आधार पर संयोजित की हुई इकाइयों में परिवर्तित की जा सकती हैं। इसका उद्देश्य यही है कि इस प्रकार सम्पर्क में आए हुए मज़दूरों को संयोजित किया जावे और उस कार्य को वे आपस में वितरित कर लें। साथ ही साथ स्वेच्छा से स्वीकार किए गए नियमों द्वारा कार्य का मूल्य भी आपस में वितरित कर लें। काय का यह मूल्य

मालिक और उनके प्रतिनिधि द्वारा तय होता है। सहकारी समितियों का उद्देश्य इसलिए मज़दूरों को उप ठेकेदारों या काम दिलाने वालों तथा फोरमैन के अत्याचारों से मुक्त कर देता है।

मध्यीय रूप :

सिद्धांत के रूप में श्रम सहकारी समितियां, मज़दूरों की उत्पादक समितियों तथा कारीगरों की सहकारी समितियों का अन्तर सरलता से समझा जा सकता है। लेकिन व्यवहार में हम देखते हैं कि ऊपर से सरल दीखने वाला यह रूप वास्तव में सरल न होकर बहुत पेचीदा होता है। साधारणतया सरल से पेचीदा रूप एक ही कार्य के आरम्भिक व अन्तिम रूप होते हैं। उदाहरण के लिए एक श्रम समिति कुछ औज़ार लेना चाहती है, अब चूंकि इन औज़ारों के लिए अधिक पूंजी चाहिए, अतः शनैः शनैः वह मज़दूरों की उत्पादक समितियों में परिवर्तित होने लग जाती हैं। उसी प्रकार कारीगर लोग अपनी-अपनी निजी वर्कशाप में काम करते हुए भी कुछ काम एक संयुक्त वर्कशाप में भी कर सकते हैं जिसमें उन्होंने मिलकर कुछ मशीनें व शक्ति लगा रखी हैं। अब यदि ये सदस्य लोग वर्कशाप में एक दूसरे के सम्पर्क में अधिकाधिक आने लगें या मिल जुल कर कच्चा माल खरीदें, या आर्डर्स को मोटे-मोटे तौर पर बांट लें या उस आर्डर को मिलजुल कर पूरा कर लें तो कारीगरों की इस समिति का रूप मज़दूरों की यह उत्पादक समिति के रूप से अधिकाधिक मिलता चला जावेगा।

इसी कारण से छोटे उद्योगों के उत्पादकों की इस द्रवता ने जिससे कि वे आवश्यकता के अनुसार अपने आपके स्वरूप को ढाल लेते हैं यदि उन्हें औद्योगिक समिति का नाम दे दिया जाय तो यह उचित ही है। अन्तिम महायुद्ध के उपरान्त युगोस्लाविया में देखे हुए उदाहरणों से आगे चलकर हम इस बात को स्पष्ट करेंगे।

सहकारी समितियों और उद्योगों का आधुनिकीकरण :

औद्योगिक समितियां, फार्म समितियों की भांति केवल अपने सदस्यों की तात्कालिक धन्धे सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति ही नहीं

करतीं, वरन् वे तकनीकी उन्नति के साधन भी हैं, तथा उत्तरदायित्व व स्वतन्त्रता के उपभोग में प्रशिक्षित करने वाले विद्यालय भी।

उन देशों में जहां औद्योगिक उत्पादन में आधुनिकीकरण या उन्नति आरम्भ हो गई है या हो रही है; इन समितियों को ऐसा काम करना पड़ता है, जो यद्यपि है तो नया, किन्तु फिर भी उनकी विशेषताओं से पूरा पूरा मेल खाता है। चीन में यही सरकारी घोषणाओं द्वारा बताई गई है। अप्रैल १९४८ में भारतीय संसद ने औद्योगीकरण का ऐसा ही कार्यक्रम अपनाया है जो इस झुकाव की प्रवृत्ति को अनावृत्त करता है। यह औद्योगिक उन्नति के नए मार्गों को जन्म देगा किन्तु ये मार्ग औद्योगिक क्रान्ति द्वारा प्रदर्शित किए व १८ वीं सदी के उपरान्त इस पर थोपे जाने वाले मार्गों से भिन्न होंगे। अतः पश्चिमी देशों की तरह बड़े-बड़े कारखानों व केवल उन्हीं द्वारा तैयार होने वाली वस्तुओं के निर्माण के लिये तो उचित व्यवस्था होगी ही, किन्तु साथ ही छोटे-छोटे उद्योगों, घरेलू उद्योगों व दस्तकारियों को भी आधुनिक साधनों द्वारा चलाया जावेगा इससे न तो मजदूरों को अपने प्राकृतिक वातावरण से अलग होना पड़ेगा और न धन व शक्ति को अलाभकारी रूप में एक जगह एकत्रित करना पड़ेगा।

अब हमारे सामने यह समस्या आती है कि उत्पादन की छोटी-छोटी इकाईयों में किस प्रकार पारस्परिक सामंजस्य स्थापित किया जावे तथा बड़े उद्योगों व आर्थिक व्यवस्था के साथ उन्हें किस प्रकार मिलाया जावे?

इस दुहरे सामंजस्य को जानने के लिये हमें विभिन्न प्रकार की औद्योगिक समितियों व उनके संयुक्त रूपों की उन्नति में विश्वास रखना पड़ेगा। यह एक ऐसी विधि प्रतीत होती है जिससे इन छोटी-छोटी इकाईयों को बिना नष्ट किये हुये अथवा सत्ताहीन किये हुये इन्हें एक माला में बांधा जा सकेगा तथा साथ-साथ केन्द्रीयकरण से उत्पन्न होने वाली आर्थिक व तकनीकी सुविधाओं से भी उन्हें सम्पन्न किया जा सकेगा।

इस पुस्तक में अन्य अध्यायों में दिये गये चीन, भारत, इंडोनेशिया व फ्रांस के उदाहरणों से चतुर आदमी वह सूत्र मालूम कर

सकेंगे जिससे इस प्रकार का केन्द्रीयकरण भी सम्भव हो सके और बड़े-बड़े कारखानों के साथ सम्पर्क भी स्थापित हो सके।

प्राथमिक समितियों के कुछ उदाहरण

स्ट्रेजिसे में जुलाहों की सहकारी समितियां :

यूगोस्लाविया में महायुद्ध से कुछ ही पहले इस समिति के १५० सदस्य थे। १६२७ में यह क्रेन्ज (स्लोवेनिया) के समीप स्ट्रेजिसे में स्थापित की गई थी। इसका कार्य एक ऐसे समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना था जो कृषि व इससे बिल्कुल असंबंधित उद्योग जैसे चलनियों के लिए बालों का कपड़ा बनाना, इत्यादि पर निर्भर रहती थीं। यह उत्पादन घरों में छोटे-छोटे हाथ के करघों पर होता था। काम में आने वाली प्रमुख वस्तु (घोड़े के बाल) साइबेरिया व दक्षिणी अमरीका से आते थे। विभिन्न स्तर की चलनियां बहुत से उद्योगों में काम में आती हैं, (खास तौर से आटे की मील, शराब के कारखाने, तथा रासायनिक उत्पादन में) और ये मुख्य रूप से फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, नीदरलैंड्स, ट्यूनिशिया, अलजेरिया व दक्षिणी अमरीका को भेजी जाती थी। यह उद्योग या तो स्थानीय ही फिर भी वस्तुओं के प्राप्त करने व बेचने के लिए इसे विदेशी मंडियों पर निर्भर रहना पड़ता था। यह स्पष्ट था कि प्रत्येक छोटे छोटे उत्पादक इतनी दूरी के व जटिल व्यापारिक संबंधों का निर्वाह नहीं कर सकते थे। मंडी में होने वाले परिवर्तनों को देखना, तथा कस्टम के बदलते रहने वाले नियमों के साथ धकाव करना भी कठिन था। उत्पादकों को अब एक ऐसे मध्यस्थ की आवश्यकता थी जो उनके और माल देने वालों के बीच कड़ी का काम दे सके। किन्तु ऐसी परिस्थिति में मध्यस्थ के स्वयं मालिक बन जाने का डर भी सदैव बना रहता था। अपनी स्वतन्त्रता व समृद्धि को बनाए रखने के लिए उन्होंने मध्यस्थ के सारे कार्य एक सहकारी समिति को सौंप दिए। इसका पहला काम ३०,००० किलों (एक सिक्का) का कच्चा पदार्थ प्रतिवर्ष देते रहना था फिर इसने बाल साफ करने व तैयार करने का काम आरंभ किया। यहां भी मजदूर लोग इस समिति के ही सदस्य होते थे। अंत में तैयार समिति ने चलनियों के बेचने की निश्चलता कर दी। चलनियां घरों में तैयार की जाती थीं, और उन्हें एक संयुक्त समिति, एक निश्चित मूल्य पर खरीद लेती थी, यह

समिति उनके विक्रय व जोखिम के लिए भी स्वयं ही उत्तरदायी होती थी।

अतिरिक्त लाभ को दो वर्ष सदस्यों में नहीं बांटा जाता था बल्कि सदस्यों के ही लाभ के लिए प्रोवीडेंट फंड (निर्वाह काम) में जमा कर दिया जाता था।

इसी प्रकार तिनकों के टोप (स्ट्रोहैट) बनाने के लिए एक छोटी सी घरेलू उत्पादकों की सहकारी समिति भी शीघ्र ही ठीक उन्हीं परिस्थितियों में दूसरे स्थान पर आरंभ की गई।

कैबिनेट बनाने वालों की समिति सैंट विद यूगोस्लोवाकिया :

जुबिलजनी के समीप सैंट विद एक ऐसे प्रदेश में बसा है जो फर्नीचर तैयार करने में प्रसिद्ध है और जहां से बहुत सा माल बाहर भी भेजा जाता है।

मंडी की मांग की वजह से औजारों में तथा तकनीक 'टेकनीक' में कुछ परिवर्तन व सुधार किये गये हैं। और आंशिक रूप में फैक्टरी के उत्पादन में भी वृद्धि हो गई है। फैक्टरियों के मुकाबले में खड़ा रहने के लिये छोटे कारीगर प्रबन्धकों को भी अपने उत्पादन के तरीकों में सुधार लाना पड़ा है।

कुछ कारीगर समूहों में संगठित हो गये ताकि वे उन मशीनों को जिनको उनमें से कोई सा भी आदमी अकेला नहीं खरीद सकता था खरीद सकें व उपयोग में ले सकें। इस उद्देश्य पूर्ति के लिये उन्होंने १६१६ में एक सहकारी समिति प्रारम्भ की। सदस्य लोग एक मिली हुई वर्कशाप में मशीन लगाकर काम करते थे। लेकिन वस्तुओं का उत्पादन व विक्रय वे लोग अलग-अलग करते थे। अपनी आवश्यकतानुसार वे मशीनों को काम में लेते थे तथा शक्ति व टूट फूट के लिये उचित किराया देते थे। प्रारम्भ में उसमें कम ही सदस्य थे। (दिसम्बर १६३४ में जब यह आरंभ हुई उस समय इसमें ६ सदस्य थे) उन्होंने स्वयं ही सदस्यों की संख्या सीमित कर रखी थी ताकि प्रत्येक सदस्य मशीन तक सुगमता से पहुँच सकें। इस प्रकार की सहकारी समितियों के सदस्यों की संख्या निर्धारित करने के लिए यही एक प्रमुख कारण प्रतीत होता है। ग्रामीण उधार देने वाली समितियों के सदस्यों की संख्या

निर्धारण का एक दूसरा कारण भी इसी प्रकार का है। इसके उचित प्रकार से कार्य संचालन के लिए तथा सुरक्षा और सुविधा के विचार से इसमें थोड़े से सदस्य होने चाहिए जो एक दूसरे को भली प्रकार जानते हों, और एक दूसरे का इतना विश्वास करते हों कि समाज के पूरे ऋण को उतारने के लिए कोई भी सदस्य अपनी संपूर्ण संपत्ति लगाने को तैयार हो।

सैंट विद की सहकारी समिति के केबिनट बनाने वालों में भी इसी प्रकार की दृढ़ता व पारस्परिक विश्वास की आवश्यकता थी। प्रत्येक सदस्य कुल पूंजी में थोड़ा ही धन (एक शेयर का मूल्य १००० दिनार) दे सकता था और चूंकि वे सदस्यों कि संख्या बढ़ा कर अधिक धन प्राप्त नहीं कर सकते थे इसलिए उस धन से खरीदना कठिन ही था। अब उन लोगों के लिए एक ही चांस था वह था कर्ज लेना, और यह केवल मिश्रित व असीमित देयता स्वीकार करने से ही हो सकता था जिससे कि वे ऋणदाता से १५०,००० दिनार का ऋण ले सकें।

लोहे व कीलों की उद्योग की समिति क्रोपा (युगोस्लोवाकिया):

लिखित प्रमाण पत्रों के आधार पर क्रापाँ एक ऐसा औद्योगिक ग्राम है जिसने लोहे के कार्य में गत ४०० वर्षों से, विशेषता प्राप्त कर रखी है, (और संभव है यह प्रसिद्धि इससे भी अधिक दिनों में हो)। इसकी पहली लोहे और कील उद्योग समिति ने व्यावसायिक प्रबन्धकों को भी मात दे दी और इस प्रकार उस प्रदेश के लिए चले आ रहे बहुत प्राचीन उद्योग की रक्षा बहुत उत्तम रीति से करनी है।

इस सहकारी समिति की एक मनोरंजक विशेषता इसकी अनुकूलता थी। इसके पास सस्ते मूल्य के न केवल बहुत प्राचीन प्रकार के औज़ार थे वरन् बहुत ही आधुनिक व मनोनुकूल कार्य देने वाले औज़ार भी थे। अपने औज़ारों का कुछ भाग यह स्वयं भी बनाती थी औज़ार बनाने का कार्य इसके सदस्यों की आवश्यकता व उनके मस्तिष्क की उर्वरता के कारण ही संभव होता था। अपने ग्राहकों व मांग की घटौतरी घट बढ़ के अनुसार यह मशीन के उत्पादन से हाथ के उत्पादन की व हाथ से मशीन उत्पादन की ओर भी सरलता से मुड़ जा सकती थी।

साथ ही देखा गया है कि यूगोस्लाविया की छोटी से छोटी सहकारी समिति भी लोगों की सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है अतः इस समिति ने भी ऐसा ही करने का प्रयास किया। समिति एक मासिक पत्रिका प्रकाशित करती थी जिसमें आर्थिक, तकनीकी व सामाजिक समस्यायें, इतिहास तथा स्थानीय घटनाओं का विस्तृत विवरण हुआ करता था। 'समिति गृह' में समिति ने अपने सदस्यों के लिये एक वाचनालय व पुस्तकालय भी खोल रखा था, तथा कुछ पाठ्य क्रमों का भी प्रबन्ध कर रखा था। गृह का निर्माण भी उपभोक्ता के साथ एक बहुत सुन्दर भाषण गृह व (मनोरंजन) गृह भी थे। एक स्थानीय अजायबघर भी इसमें अवस्थित था।

तरजोक का 'रुनो' चमड़े की सहकारी समिति :

जब १६२४ में इसे एक प्रमुख चमड़े के उद्योग केन्द्र पर स्थापित किया गया उस समय इसमें केवल १० सदस्य थे। इसके अपर्याप्त धन को ऋणदाता समिति से लिए गए ऋण द्वारा बढ़ा लिया गया।

१० वर्ष पश्चात् सदस्यों की संख्या १२४ हो गई। इन सदस्यों में कुछ चमड़ा कमाने वाले थे शेष अच्छे जूते बनाने वाले। अपने निर्माण में व उद्देश्य में यह एक समिति होकर भी वास्तव में दो समितियों का प्रतिनिधित्व करती थी : मजदूर उत्पादक समिति के रूप में चमड़ा कमाने वालों को काम देती थी, और कारीगर समिति के रूप में जूते बनाने वालों को चमड़ा देती थी।

यहाँ अनुशासन पारस्परिक सहायता ही थी अतः वर्कशाप में फोरमैन की भी आवश्यकता नहीं थी। मज़दूर लोग समान स्तर पर एक दूसरे की योग्यता व शक्ति से परिचित हो जाते हैं और उस आधार पर ही उनमें काम बाँट दिया जाता है। जहां तक बड़ों का सम्बन्ध था वे अपने आप उचित काम छांट लिया करते थे। यह प्रतीत होता था कि व्यक्तिगत व सामूहिक उत्पादन में बहुत वृद्धि हो गयी थी। समिति के सदस्य को व योग्य मजदूर सदस्य को एक ही वेतन मिलता था। किन्तु यह पारिश्रमिक देश भर में उस कारपोरेशन के सदस्यों को मिलने वाला अधिकतम पारिश्रमिक था।

१६३१ से प्रतिदिन काम करने के घन्टे केवल ६ रह गए हैं। इन आदर्श काम करने की परिस्थितियों के होते हुए भी क्रय करने वाले सदस्यों को चमड़ा उतने कम मूल्य पर बेचा जाता था जितना संभव हो सकता था। आरम्भ से ही 'रुनो' ने चमड़े के व्यापारियों को १० प्रतिशत मूल्य घटाने पर बाध्य कर दिया। रुनो कुछ प्रकार की कीलें, क्रोपा कील उत्पादक समिति से लिया करती थी।

अतिरिक्त लाभ को प्रति वर्ष सदस्यों में बाँट नहीं दिया जाता था बल्कि समिति में ही लगा दिया जाता था ताकि औज़ारों में वृद्धि व अन्य सुधार किए जा सकें।

यह भी लिखा हुआ था कि यदि समिति का परिसमायन किया जावे तो धन (परिसम्पदा) को वितरण नहीं किया जावेगा बल्कि जन हितार्थ कार्यों में लिया जावेगा।

सम्मिलितीकरण के कुछ उदाहरण

चीनियों की औद्योगिक समितियाँ :

यद्यपि इसकी प्रगति में विपरीत परिस्थितियों के कारण कुछ बाधा पड़ गई है, और वर्तमान परिस्थितियों में भविष्य के लिए कुछ कहा जा सके यह भी कठिन है किन्तु फिर भी चीनी औद्योगिक समिति द्वारा चलाए गए इस प्रयोग की ओर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। इसका कारण इसकी गत वर्षों की प्रगति व शैली तथा साथ ही साथ इसकी शक्ति व विचार धारायें भी हैं, जो अब लोगों के समक्ष आ गयी हैं।

आरम्भिक व तात्कालिक उद्देश्य :

यह आन्दोलन चीनी जापानी युद्ध के फलस्वरूप प्रारम्भ में हुआ था। सारा देश आधुनिक उद्योगों से वंचित हो गया था, क्योंकि बड़े कारखाने तो केवल समुद्रतटीय ५, ६ शहरों में ही थे। उस समय यह भी असम्भव था कि कल-कारखानों की वस्तुयें विदेश से आयात की जा सकें और इसके अलावा ६ करोड़ शरणार्थियों को नौकरी की भी सख्त आवश्यकता थी।

शरणार्थियों को उत्पादन के काम में फिर से लगाया जा सके, उन्हें रोजगार दिलाया जा सके, और कारखानों के स्थान पर कोई दूसरा

प्रबन्ध किया जा सके जो उपभोग की वस्तुयें उत्पन्न कर सकें इन सभी बातों के लिये कुछ न कुछतो करना ही था। धन की कमी, मशीन बनाने वाले बड़े कारखानों की कमी तथा आधुनिक यातायात के साधनों की कमी के कारण यह सब काम सहल काम नहीं था।

अन्त में इसके लिये जो हल सोचा गया उसने इन समस्त परिस्थितियों को ध्यान में रखा। सैनिक आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा। छोटी-छोटी विकेन्द्रित इकाइयाँ स्थापित की गई ताकि बमबारी से भी उन्हें बचाया जा सके। योजना में छोटी सहकारी समितियों की बहुत सी चलती फिरती वर्कशाप खोली गई और इस प्रकार संयोजित की गई थीं कि विभिन्न ज़िलों की मुख्य आवश्यकताओं को निबटा सकें और सीमित मंडी तक ही काम फैला रहे।

दीर्घकालिक उद्देश्य :

यद्यपि इन औद्योगिक सहकारी समितियों को शीघ्र उन्नत करना था किन्तु फिर भी प्रमुख कार्यकर्ताओं के दिमाग में योजना यह थी कि भविष्य में विकेन्द्रीयकरण और सहकारी उद्योग का आन्दोलन चल सके। उन लोगों ने चीन की औद्योगिकरण की आवश्यकता को अनुभव किया किन्तु वे इस बात पर विश्वास नहीं करते थे कि यह औद्योगीकरण आवश्यक रूप से पूर्णतया पश्चिम की भांति ही हो। इस आन्दोलन के प्राण इसके संस्थापक महोदय रेवी अली ने १६४४ में लिखा यदि हम शंघाई की तरह की छोटी फैक्टरियों को देश के अन्दर छोटे-छोटे गांव व झोंपड़ों तक फैलाना चाहें तो हमारे पास मैनेजर नहीं कि वे सब जगह निरीक्षण के लिये जा सकें।

अतएव इसका एकमात्र हल यही था कि मज़दूर अपने आप प्रबन्ध करने वाली सहकारी समिति में सम्मिलित हो सकें जो मिश्रित क्रम और वितरण के लिये आपस में संगठित हो सकें। और वेतन पर कुशल तकनीकी (टेकनीकल) निर्देशन भी प्राप्त कर सकें। प्रत्येक स्थान पर लोग यह अनुभव करने जा रहे हैं कि बड़े कारखानों के छोटे कारखानों का होना आवश्यक है। भुखमरी के स्तर के समीप पलने वाले लोगों के लिये बड़े कल कारखानों की वस्तुयें हवाई जहाज़, रेल ऐंजिन या जहाज़ खरीदना कठिन है। जैसे-जैसे यातायात की सुविधा बढ़ती है, बिजली की शक्ति देश को अपने तारों से आच्छादित करती जा

रही है, तो चीन का यह विचार कि देश छोटे उद्योगों से भरा हो, जो सहकारी कोष हों, धीरे-धीरे मूर्तिमान होता चला जावेगा और बड़े बड़े गंदे चालों के केन्द्र में कल-कारखानों का होना व उनका रोग व अप्राकृतिक जीवन को जन्म देना भूत की बातें हो जावेंगी।

युद्धकाल में उन्नति :

अगस्त १६३८ में औद्योगिक सहकारी समितियां स्थापित करने व उन्हें परामर्श देने के लिये चीनी औद्योगिक सहकारी संघ स्थापित किया गया।

स्वरूप (ढांचा) :

जब सात या इससे अधिक आदमी एक औद्योगिक सहकारी समिति स्थापना करना चाहते हैं तो वे अपनी बस्ती के सी० आई० सी० के डिपो को अपनी योजना व बजट देकर वे उसे अध्ययय व छानबीन के लिये पेश करते हैं। योजना के स्वीकार कर लिये जाने पर डिपो नई सोसाइटी को एक सहकारी समिति की तरह संयोजिक व रजिस्टर करती है और समस्त सम्भव आर्थिक तकनीकी सहायता देती है। डिपो या तो सी० आई० सी० के फंड में से इसे ऋण दे देता है या ऋण के लिये इसे किसी बैंक से परिचय करा देता है, ऐसी दशा में डिपो को स्वयं गारंटी देनी पड़ती है। डिपो समिति को सामान्य निरीक्षण, निर्देशन व राय दे सकता है।

व्यक्तिगत सहकारी समितियों को प्रोत्साहन दिया गया कि अपने आपको वे एक संघ के रूप में आयोजित कर लें, और अपने लिये सी० आई० सी० के क्षेत्रीय हेड क्वार्टर्स की सहायता से क्रय वितरण की व्यवस्था कर सकें शैक्षिक और जन-कल्याणकारी कार्य भी कर सकें।

जिले के संघों ने विद्यालय, अस्पताल, नाटक समाज और स्पोर्ट क्लब भी स्थापित किये हैं। अब डिपो के स्थान में उन्होंने ही ऋण एकत्रित करना ब समितियों को वितरण करना प्रारम्भ कर दिया है। वे कार्यवाहियों को संयोजित करने का भी काम करते हैं तथा सहकारी उत्पादन में योजनायें बनाने का भी काम करते हैं।

जिलों के इन संघों के अलावा तीन प्रदेशीय संघ भी स्थापित किये गये :

विस्तार :

दिसम्बर १९३८ में ६९ समितियों व १९४९ सदस्यों से आन्दोलन की प्रगति बढ़कर जून १९४२ में १५९० समितियों व २२६८० सदस्यों तक पहुँच गई।

उद्योगों की किस्में :

१९४४ में औद्योगिक समिति का औसतन उत्पादन ७४,७९१,३७७ चीनी डालर तक पहुँच गया। लगभग २५० विभिन्न किस्मों की चीजें बनाई गईं जैसे कम्बल, तौलिये, सूती कपड़े, रेशमी माल, होज़ियरी, चमड़े का सामान, आटा, साबुन, बत्तियां, चिकित्सा की वस्तुयें, कागज़, पौटरी, बैटरियों के लिये शीशे की सूखी सैल, नाबें, माचिस, टूथपेस्ट, छापे के कारखाने, टेक्सटाइल के लिये करघे, सिगरेटें, बनावटी अंग इत्यादि। सहकारी इकाइयां खान के कामों में जैसे, कोयला, लोहा, गोल्ड बूलफेयाइट तथा एसबसटस और तथा अन्य कार्यवाहियों में भी व्यस्त थी जैसे छपाई, आयल प्रेस, पावर प्लांट्स, फाऊंड्री तथा यातायात की व्यवस्था में। सबसे अधिक सदस्य कपड़ा बुनने (टेक्सटाइल) के थे (३९.६ प्रतिशत कुल का) उनसे कम (२०.२ प्रतिशत) रासायनिक (कैमिकल) के, इनमें का (९.१ प्रतिशत) खान समितियों में थे। अकेले टेक्साटाईल ने ही २५ लाख कम्बल १९४२ के अन्त तक सेना को पहुंचाये बताये।

समितियों में आपसी सम्बन्ध :

चीनी औद्योगिक सहकारी समिति का एक मनोरंजक पहलू उद्योग-धंधों को बांधने व आपसी सहयोग की भावना को बढ़ावा देना रहा है। जहां तक सम्भव हो सकता है कच्चा माल, अब बनी चीजें तथा मशीनें सीधे सहकारी समितियों से निकलती हैं और जिन समितियों को आवश्यकता होती है उनके पास भेज दी जाती है। उदाहरणार्थ नौसादर बनाने वाली समिति चूना बनाने वाली को माल देती है, और चूने वाली कागज़ व चमड़े वाली समिति को देती है। उसी प्रकार तेल निकालने वाली कम्पनी लकड़ी में नक्काशी करने वाली व

निर्माण करने वाली समितियों को देती है। एकता की किस्तृत विचार-धारा के बढ़ावे के लिये इसका काफी महत्व है।

तकनीकी उन्नति :

औद्योगिक समितियां की कार्यवाही दस्तकारी उद्योग की प्रथाओं पर ही निर्माण की नकल करके या निर्माण करके, इस कार्य के लिये मशीनों को आयात करके, उन्नत करने का प्रयास किया गया है। उदाहरण के लिये करघे के उद्योग में लकड़ी के गेयर के स्थान पर लोहे के गेयर ने सारे दिन के कार्य को एक घंटे का काम बना दिया है। उसी प्रकार चरखों स्पिनिंग ह्वील में किये गये तनिक से सुधार से, जिस किसी ने यह मुफ्त का सुधार अपनाया चौगुना सूत काता जाने लगा।

शिक्षा और प्रशिक्षण :

इस आन्दोलन ने सामान्य और तकनीकी (टेक्नीकल) दोनों ही प्रकार की शिक्षा के महत्व को आंक लिया है। बच्चों के लिये भी प्रारम्भिक पाठ्यक्रम बनाये जाते हैं। ये बच्चे बहुधा स्वयं स्कूल समितियों में संयोजित किये हुये थे। इनके अलावा तकनीकियों और नेताओं के प्रशिक्षिण के लिये भी स्कूल थे। एक ही समय में ६ स्कूल थे जिनमें १२ से १८ वर्ष की संस्थाओं के चुने हुये लड़कों को २ से ४ साल तक के पाठ्यक्रमों में प्रवेश दिया जाता था। १९४६ के अन्तिम छः महीनों में एक नया कार्यक्रम शुरू किया गया। पांच बड़े शहरों में समिति और संघ के सदस्यों व अधिकारियों का प्रशिक्षण देने के लिये २ सप्ताह से १ महीने तक के पाठ्यक्रम को प्रारम्भ किये गये। कुछ होनहार लड़कों को तकनीकी अनुभव प्राप्त करने के लिये छात्रवृत्तियां भी दी गई हैं।

सहकारी मदद :

औद्योगिक सहकारी समितियों को सरकार से कर्ज और दूसरी सहायता भी मिली है, सरकार से तकनीकी अन्वेषणों की भी सहायता मिली है और माल तथा आर्डर प्राप्त करने की सुविधा भी मिली है।

समय-समय पर सरकार के नियन्त्रण व हस्तक्षेप की मात्रा के सम्बन्ध में कुछ कठिनाई रही है। आन्दोलन के नेताओं को इस बात से थोड़ी चिन्ता भी हुई कि कहीं यह शासन का एक विभाग ही न बन जाये।

विदेशी व चीनी कमेटियों, तथा आस्ट्रेलिया, ग्रेट ब्रिटेन, हांग-कांग, फिलीपाइनस व अमरीका के प्रमुख व्यक्तियों ने आन्दोलन को धन, औज़ार व तकनीक जानने वाले व्यक्ति देककर काफी सहायता की है।

कठिनाइयां :

रेवी एली के शब्दों में "समस्त सी० आई० सी० के प्रयासों में जिन कठिनाइयों का सामना किया गया है वे बहुत अधिक हैं।" ये वे कठिनाइयां नहीं हैं जो इस प्रकार के कार्य में किसी भीं देश में उत्पन्न हो जाती हैं, वरन् यह चीन की अपनी विशेष कठिनाइयां हैं। उस चीन की जो महायुद्ध में व्यस्थ हो इन कठिनाइयों में आवश्यक वस्तुओं को इकट्ठी करना युद्ध की अग्रम पंक्ति से चीज़ों को हटाना और इसलिये सहकारी समितियों को भी हटाना, वर्कशाप व डिपो पर हुई बमबारी इत्यादि सम्मिलित हैं। दूसरी विशेष खराबी थी मूल्यों की वृद्धि इसने बहुत सी सहकारी समितियों को समाप्त कर दिया और खास तौर से उनको जो संघ बद्ध नहीं थीं। संघ समितियों को उचित मूल्य पर कच्चा माल प्राप्त करने व समितियों की उत्पादित वस्तुओं को बेचने में काफी सहायता करता था। किन्तु अकेली समिति इस धन वृद्धि (इनफलेशन) के चक्कर में से निकल-कर पर्याप्त कच्चा माल नहीं खरीद सकती थी। अतः कुछ समितियां स्वयं के दोष के भी समाप्त हो गईं।

संकट काल :

लड़ाई की समाप्ति ने भी किसी प्रकार से हानि की पूर्ति नहीं की बल्कि इसने पुरानी कठिनाईयो के साथ कुछ नई कठिनाइयां और उत्पन्न कर दीं। गिरी हुई मंडी की दशा, अधिक खर्च पर वस्तु उत्पादन, तथा समितियों के शरणार्थ रह गई थी, और सदस्यों की संख्या रह गई थी केवल ३५८०। इनमें मुख्य १०२ बुनने और

टेक्सटाइल उद्योगों की समितियां, २८ धातुओं के कारखाने (मेटल वर्कस) इनके अलावा अब भी १८ ज़िला संघ कार्य कर रहे थे।

फरवरी १९४६ में प्रमुख सदस्यों की एक कांफ्रेंस हुई जिसमें यह निश्चय किया गया कि एक सी० आई० सी० आयोजना समिति बनाई जावे। निकट भविष्य के लिए (सामान्य नीति) आंदोलन को दृढ़ करने की होनी चाहिए, और उपलब्ध होने वाली मंडियां व साधनों के आधार पर उप शहरों, सीमावर्ती प्रदेशों तथा ग्रामीण ज़िलों में औद्योगिक सरकारी समितियों को उन्नत किया जाय। यह कार्य मौजूदा कार्य समितियों में से दृढ़ व कुशल समितियों व धन्धों को शक्ति प्रदान करके भी किया जा सकता था तथा पुरानी अच्छी समितियों को फिर से बसा करके भी किया जा सकता था जिन्हें शत्रुता के कारण खाली करना या भंग करना पड़ा था।

१९४८ के आरम्भ में प्राप्त अन्तिम संख्या से यह ज्ञात हुआ है कि समितियों की संख्या में थोड़ी सी बढ़ोतरी हुई है पर संख्या ३१२ है।

इसलिए इस प्रयोग को चलाया जा रहा है। सी० आई० सी० आंदोलन ने युद्ध में जो कुछ सहायता प्रदान की है व सरकारी क्षेत्रों में भी बहुत मान्यता प्राप्त कर चुकी है, और उन लोगों ने जिन्होंने इसे समीप से देखा है बताया है कि इसने इस प्रकार की एक संस्था का निर्माण किया है जो आगे चलकर चीनी औद्योगीकरण में एक दृढ़ स्तम्भ का काम करेगी।

मद्रास करघा जुलाहों को प्रांतीय सहकारी समाज :

(दि मद्रास हैंडलूम वीवर्स प्रोविंसियल कोऑपरेटिव सोसाइटी)

कृषि के उपरान्त भारत में सबसे बड़ा धन्धा हाथ करघा उद्योग है। यद्यपि यह देश की खपत का एक मात्र २५ प्रतिशत कपड़ा ही तैयार करती है किन्तु फिर भी मिल मज़दूरों के ८५ प्रतिशत भाग को यह नौकरी देती है।

फैक्टरी के मज़दूरों को यदि छोड़ भी दें तो, जुलाहों को हम तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं : स्वतन्त्र जुलाहे, ठेके पर काम करने वाले जो किसी सौदागर (जो बहुधा सूद पर रुपया देने वाला भी होता है) के लिए ठेके पर काम करते हैं (यद्यपि वे काम अपने घर

ही करते हैं तथा सूत, औज़ार इत्यादि भी उन्हीं के होते हैं) तथा बाहर का काम करने वाले जो किसी मध्यस्थ आदमी के लिए उसी के दिए हुए कच्चे माल पर बंधी हुई दरों पर काम करते हैं।

अन्तिम महायुद्ध के १० वर्ष पहले से जुलाहों की दशा निरन्तर गिरती चली जा रही है। इस सबका कारण है, अस्थिर काम, मध्यस्थ आदमी द्वारा लिया जाने वाला नफे का भाग और भयङ्कर ऋण ग्रस्तता (कभी-कभी मितव्ययता की प्रवृत्ति न होने से बढ़ जाती है।)

सहकारी समिति बनाने के कुछ प्रयास किये गये थे, उनका मुख्य कार्य जुलाहों को ऋण दिलाना होता था (अब कभी कभी ये कच्चा माल औज़ार इत्यदि भी देने लगी हैं।) इनमें अधिकांश समितियां वैसे ही शक्तिहीन थीं, और फिर संघ बद्ध न होने के कारण तो केन्द्रीय समिति से न तो ये अपनी आर्थिक आवश्यकता ही पूर्ण करवा सकती थी और न व्यापारिक कार्यक्रम।

सहकारिता ने १६३५ तक नहीं के बराबर ही काम किया था इसी वर्ष में भारत सरकार ने करघा उद्योग को पुनर्जीवित करने के लिए प्रांतीय सरकारों को आर्थिक सहायता दी।

महायुद्ध के समय में और इसकी समाप्ति के उपरान्त करघों से उत्पादित वस्तुओं की बहुत बड़ी मांगें देखकर सरकार को इसके उत्पादन की वृद्धि करने के लिए कुछ विशेष तरीके अपनाने पड़े। और आज तो केन्द्रीय सरकार की यह निश्चित नीति हो गई है कि औद्योगीकरण के कार्य क्रम में दस्तकारी व कुटीर धंधों को उनके संयोजन, व आधुनिककरण में पूर्ण सहायता दी जावे।

मद्रास से लिए गए एक उदाहरण द्वारा यह स्पष्ट हो जावेगा कि किस प्रकार गत १० वर्षों में सरकारी व सहकारी समितियों के मिश्रित प्रयास ने करघा उद्योग को पुनर्जीवन दिया है।

"मद्रास हाथ करघा बुनकरी की प्रान्तीय सहकारी समिति"

(दी मद्रास हैंडलूम वीवर्स प्रोविन्शियल कोऑपरेटिव सोसासइटी) में मुख्य रूप से सहकारिता में बंधे हुए जुलाहे लोग ही थे, किन्तु अब सहकारी बैंक, फर्म तथा व्यक्तियों को भी इसमें सम्मिलित कर लिया है।

१६३५ में इस समिति को प्रांतीय सरकार द्वारा आर्थिक सहायता दी गई तथा इसे करघा उद्योग को सहायता देने का कार्य सौंपा गया। इस योजना के अंतर्गत अलग-अलग जुलाहों की सहकारी समितियों को संयोजित करना, शीघ्र बाज़ार में बिक सके ऐसे नमूने और डिज़ाइनों वाली अच्छी चीजें बनवाना, और उन लोगों द्वारा तैयार चीज़ों को बिकवाने का प्रबन्ध करना भी सम्मिलित था।

पुनर्गठन :

युद्ध काल में प्रांतीय समितियों की सेवाओं से संतुष्ट होकर तथा जुलाहों की कठिनाइयों को देखकर प्रान्तीय सरकार ने १६४३ के प्रारम्भ में इसकी सहायता की ताकि वह अपने आपको पुनर्गठित कर सके और अपने कार्य क्षेत्र को बढ़ा सके। बोर्ड से परामर्श लेकर सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार ने एक अनुभवी मैंनेजिंग डाइरेक्टर (प्रबन्ध संचालक) की नियुक्ति कर दी। प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) या इससे सम्बन्धित समितियों की सूत की आवश्यकता सरकारी आवश्यकता समझ कर प्रोविन्शियल टेक्सटाइल कमिश्नर को पूरी करनी पड़ती थी और अब भी करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त मद्रास (प्रान्तीय सहकारी) (प्रोविन्शियल कोआपरेटिव) बैंक द्वारा प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) को दिये गये कर्ज़ की भी गारंटी की। अब वह अपना व्यापार इसी धन के साथ चला रही है।

आजकल की कार्यवाहियां :

इस नये प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) ने अपने आपको जुलाहों की समिति के लिये आर्थिक केन्द्र मान कर अपने कार्य क्षेत्र को बढ़ा दिया है। ४६ बड़े शहरों में इसके एम्पोरियमस (प्रदर्शन के स्थान) का जाल रहा है। यह ६ बुनने के केन्द्र, ५ रंग फैक्ट्रियां, २ प्रयोगात्मक फैक्ट्रियां व एक रंगने की फैक्ट्री चला रही है।

सूत का वितरण :

प्राथमिक समितियों की ओर से प्रान्तीय समिति को सरकार की सहायता से एक महीने पहले भेज दी जाती है। फिर प्रान्तीय समिति

सारी चीज़ों को सहकारी संस्थाओं के रजिस्ट्रार के द्वारा यह सूत प्राथमिक सहकारी संस्थाओं को उनकी खड्डियों के अनुपात से दे दिया जाता। ये प्राथमिक समितियों को इस सूत को इस शर्त पर जुलाहों को देती हैं कि ये अपनी सारी तैयार की हुई चीज़ उचित पारिश्रमक पर समिति को वापिस दे देंगे। इनके पारिश्रमिक की दरें समय-समय पर मंडी की स्थिति के अनुसार निर्धारित की जाती हैं।

सामहिक बुने जाने वाले केन्द्रों में सूत वितरण (वस्त्र उत्पादन इत्यादि) की व्यवस्था सीधे प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) द्वारा की जाती है।

रंगीन सूत का वितरण :

प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) द्वारा संचालित पांच फैकट्रियां रंग की सहकारी समितियों को रंगीन सूत वितरण करने के लिये स्थापित की गई हैं। उन सब फैक्ट्रियों का सामहिक उत्पादन (१६४५-४६ में २१६,६२५ पौंड) भी मांग की पूर्ति के लिये कम है। अतः प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) और भी फैक्ट्रियां स्थापित करने का विचार कर रही है। उस समय तक के लिये बहुत सी प्राथमिक जुलाहों की सहकारी समितियां अपना-अपना सूत प्राइवेट आदमियों से रंगवा लेती हैं। स्थानीय डिप्टी रजिस्ट्रार सहकारी समिति विभाग के सीधे निरीक्षण में एक पेनल स्थापित किया गया था जो यह देखता था कि रंग पक्के हैं और गारंटी के हैं।

सोडे के हाईड्रोसल्फाइट का वितरण :

इस रासायनिक की अप्राप्यता तथा अधिक मूल्य देखकर टेक्सटाइल कमिश्नर ने १ अप्रैल १६४४ से प्रान्तीय समिति को सारे प्रान्त के लिये इसका एक मात्र वितरक मान लिया। प्रान्तीय समिति ने यह रासायनिक १६४४-४५ में १२४ टन तथा १६४५-४६ में १८६ टन बांटा।

सामूहिक बुनने के केन्द्र :

१६४५-४६ में उनके पास कुल मिलाकर २७८७ खड्डियां थीं। अब उनको मज़दूरों की उत्पादक सहकारी समितियों में परिवर्तित करने का विचार किया जा रहा है।

प्रयोगात्मक फैक्ट्रियां :

प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) द्वारा चलाई गई तीन प्रयोगात्मक फैक्ट्रियों में आधुनिकतम प्रकार की खड्डियां तथा सूत मरोड़ने वाली मशीनें हैं। गांव के जुलाहों को नई किस्मों की बुनाई की प्रशिक्षण दी जाती है और उन लोगों को प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) के समय में प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शयल सोसाइटी) द्वारा आर्थिक सहायता भी दी जाती है।

औज़ारों को सुधारने के लिये आर्थिक सहायता :

जुलाहों की प्राथमिक समितियों को हर महीने अधिक से अधिक ६० रुपया की आर्थिक सहायता दी जाती है इसको व्यय करने के लिये उन्हें निर्देश दिये जाते हैं कि वे 'फ्री शटल' के स्थान पर 'फ्लायंग-शटल' काम में ले लें। इन तरीकों से तथा अन्य प्रबन्धों द्वारा यह आशा की जाती है कि करघों से बनी वस्तुयें धीरे-धीरे एक ही स्तर पर आ जावेंगी।

मंडी :

नये डिजाइनों को प्रोत्साहन देने के लिये हर ज़िले में प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) द्वारा एक कुशल डिज़ाइनर रखा जाता है। प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) प्राथमिक समितियों द्वारा तैयार किये हुये माल का ५० प्रतिशत खरीद लेती है और फिर इसे अपने ४९ एम्पोरियमों द्वारा खुदरा बेच देती हैं। गांव के ज़िलों में यह सामान उपभोक्ता समितियों द्वारा बेचा जाता है।

प्राथमिक समितियों को उत्पादन का व्यय तथा ६$\frac{३}{४}$ प्रतिशत अतिरिक्त रुपया मिलता है। खुदरा कीमत में (यातायात का व्यय, पैकिंग व्यय इत्यादि शामिल होता है) उत्पादन व्यय तथा १८ प्रतिशत अतिरिक्त मिल जाता है।

प्रगति :

निम्न आंकड़ों से १९३५-३६ से लगाकर १९४२-४३ प्रान्तीय समिति (प्रोविन्शियल सोसाइटी) के पुनर्गठन का वर्ष तथा १९४५-४६ ई० की प्रगति स्पष्ट हो जाती है।

	१६३५-३६	१६४२-४३	१६४५-४६
सम्बधित जुलाहों की समितियां	४३	२२७	३३६
सदस्य संख्या	१५३८	३६,४४१	५०,६६२
खड्डियां जिन पर काम होता है	२४५३	१८,४४३	२६,८१६
जुलाहों की समिति की कुल बिक्री रु०	१००,१७४	६,५८३,१७७	३४,४१४,५२२

इण्डोनिशिया के एक कुटीर उद्योग का सहकारी संगठन :

पैसेफिक रिलेशन्स की आठवीं कान्फ्रेन्स को प्रेषित किये गये एक अध्ययन का जो "नीदरलैंड्स में औद्योगिक विकास" नामक पत्र ने दिया है इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं कि किस प्रकार सहकारिता द्वारा व्यवस्थित कुटीर धंधों को उन्नत किया जा सकता है ? और किस प्रकार धंधों में लगे हुए व्यक्ति अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता कायम रख सकते हैं ? और जीवन स्तर ऊंचा उठा सकते हैं। कुटीर धंधों से वहाँ अभिप्रायः ही उस उत्पादन से लिया जाता है जो कृषक लोग अपने फालतू समय में साधारण हाथ के औज़ारों से तैयार कर सकते हों, और जिनसे वे अपनी आमदनी बढ़ा सकते हों। छोटे स्तर के उद्योग से आशय ऐसे उत्पादन से लिया जाता है जहां ५० से कम ही मज़दूर साधारण से हाथ के औज़ारों से चीजें तैयार करते हों व कोई खास मशीन काम में न ली जाती हो। इसके अतिरिक्त जिस भी ढंग से उत्पादन होता है उसे फैक्टरी उद्योग कहते हैं।

शैली में सुधार :

कुटीर और छोटे उद्योग धंधों की आवश्यकता पूरी करने के लिये जिनमें कई लाख मज़दूरों को रोटी मिलती है सरकार ने एक वृहद शिक्षा सेना स्थापित की थी। इसमें बहुत से सुझाव के दफ्तर थे, बहुत से तकनीकी और आर्थिक शिक्षक भी थे और कुछ व्यावसायिक अध्यापकों में से चुने गये थे और इण्डोनेशिया के व्यवसायों की परिस्थिति के अनुसार इन लोगों को विशेष प्रशिक्षण दिया गया था। ये लोग एक दो सहायकों के व साधारण से औज़ारों के साथ हज़ारों वर्कशाप देखते फिरते हैं और वहां से ऊंचे अफसर से लगाकर साधारण नौसिखिये तक को अच्छे औज़ारों का उपयोग व नई शैलियां बताते हैं। क्योंकि ये स्वयं भी

काम करने वाले मज़दूर होते हैं, अतः वे यह भी बताते हैं कि सामान को उचित ढंग से कैसे काम में लेना चाहिये ? कैसे इसका मूल्य पर असर पड़ेगा ? इसके अलावा कीमतों के उतार चढ़ाव के बारे में भी उन्हें सूचना देते हैं, और उन्हें यह भी सिखाते हैं कि कच्चे माल की किस्म कैसे परखी जावे ? इन आदमियों ने सिखाने वालों के साथ काम करके (जो सामान्य काम किया करते थे) मध्यस्थ आदमी या 'बकोअल' को हटाकर सहकारी समितियां स्थापित कर दी हैं।

बकोअल :

कुटीर उद्योगों की बनाई हुई अधिकांश चीज़ों को या तो घर के लोग गांव में बेच देते हैं, या कुछ को सौदागर (व्यापारी) लोग खरीद ले जाते हैं और आगे बेच देते हैं, या कभी-कभी विदेश भी भेज देते हैं। कच्चा माल बहुधा एक मध्यस्थ द्वारा उन्हें दे दिया जाता है और वह उन्हें बनाई हुई चीज़ के बदले कुछ मज़दूरी देता है।

चूंकी एक 'बकोअल' या मध्यस्थ आदमी कच्चे माल का नियन्त्रण करता है, दस्तकार और मज़दूर में काम बांटता है, उनकी आवश्यकता ज्ञात करता है और उन्हें रुपया उधार देता है, इसलिये वह उन सबको अपने ऊपर आश्रित रखता है और स्वयं शक्तिशाली हो जाती है। कुछ उदाहरणों में तो बकोअल फरनीचर उद्योग में कमाये हुये पैसे का ५० प्रतिशत से ६० प्रतिशत तक भाग हड़प लेता है।

सोकाबोऐमी ज़िले में सहकारिता का प्रयोग :

पश्चिमी जावा के एक छोटे से कस्बे सोकाबोऐमी के चारों ओर इस शताब्दी के आरम्भ में एक बहुत महत्वपूर्ण कुटीर उद्योग आरम्भ हुआ। इसमें स्थानीय उपयोग के लिये कृषि के औज़ार बनाये जाते थे। दूसरे एक और भी छोटा उद्योग प्रारम्भ हुआ जिसमें छुरी कांटे आदि की चीज़ें बनती थीं। छोटे उद्योग में ४ से १० आदमी मिलकर लोहा पीटकर छुरी की पत्तियां बनाते थे और सींग, हड्डी, लकड़ी कछुवे वगैरह से बने हत्थे दूसरी कुटीर उद्योग में बनाये जाते थे। फिर दोनों को मिलाकर छुरियां बना ली जाती थीं और स्थानीय बाज़ार में ही उन्हें बेच दिया जाता था।

१६३५ और १६३६ के बीच उपभोक्ता लोगों ने ऐसा प्रगट किया कि वे लोग और भी सुन्दर ढंग की चीज़ें चाहते हैं। इस विचार ने

धीरे-धीरे उद्योगों में काम करने वाले लोगों को प्रोत्साहित कर दिया इसके उपरान्त तो उनमें इन्डोनेशिया में रूढ़िगत पारस्परिक सहायता की भावना भी जाग उठी। वहाँ की भाषा में व्यक्ति के साथ सहयोग को 'सम्बारया सम्पार सिवाम्बार' कहते हैं। समाज के साथ सहयोग को 'रोयेलेंथग सेनोपेरकेगें' कहते हैं। दो वर्ष के अन्दर ही भ्रमण करने वाले व्यावसायिक अध्यापकों व तकनीन सिखाने वालों (टेकनी-कल इंस्ट्रकटर्स) की सहायता से बहुत सी छोटी छोटी दुकानें सहकारिता के लिये तत्पर हो गई और शीघ्र ही १२०० कार्यकर्ताओं ने मिलकर एक सहकारिता संघ बना डाला और इसे व्यावसायिक केन्द्र (इन्ड-स्ट्रियल सेंट्रल) कहते हैं। इस व्यावसायिक केन्द्र (इन्डस्ट्रियल सेन्ट्रल) ने अपने सारे सदस्यों के लाभ के लिए एक प्लांट (कारखाना) स्थापित किया। इसमें अन्य छोटी छोटी वर्कशाप से अच्छे अच्छे कार्यकर्ता बुला लिये गए थे, पॉलिश करने वा छेद करने के अलावा अन्य-अच्छे अच्छे औजार भी इसमें लगा दिये गये थे।

छोटे-छोटे कारखानों के लोग जो इससे सम्बन्धित थे कुटीर उद्योगों में तैयार वस्तुओं की एक निश्चित मात्रा जैसे लोहे की पत्तियों व हत्थे जो ले आते थे। ये लोग प्रति सप्ताह करीब-करीब तैयार शुदा चीजें (सैंट्रल) केन्द्र द्वारा दिये गये कच्चे माल व नमूनों पर तैयार करते थे और फिर एक उचित मूल्य पर (जो सदस्यों द्वारा तय किया जाता था) केन्द्र को ही वापिस कर दिया करते थे। जिस समय ये चीजें सैन्ट्रल (केन्द्र) को लौटाई जाती थीं उस समय उनका ध्यान से निरीक्षण किया जाता था और खराब बनी चीजों को वर्कशाप को फिर से सुधार कर बनाने के लिये, जोड़कर व पैक करके बेच दिया जाता था। लाभ में से वर्कशापों को भी, जितना सामान वे देती थी उसके अनुपात से बांट दिया जाता था। किन्तु केन्द्र (सैन्ट्रल) की चुनी हुई प्रबन्ध समिति को धन व्यय करने का अधिकार होता था। सिद्धान्त रूप से यह निश्चय हो गया था कि लाभ का कुछ भाग संबं-धित छोटे उद्योग गृहों के लिए औजार लाने में खर्च किया जावेगा।

सहकारिता का इस व्यवस्था में हमें एक नए प्रकार का उद्योग दृष्टि गोचर होता है जिसके द्वारा सहकारिता और संघ व्यवसाय के आदर्श को मिश्रित करके इन्डोनेशिया निवासियों ने कुटीर उद्योग,

छोटे उद्योग व फैक्ट्री उद्योग को मिला दिया और बड़ी फैक्ट्री जैसा ही एक व्यवसाय प्रारम्भ कर दिया।

अन्य द्रष्टांत :

इसी प्रकार की सहकारिता व संघ व्यवस्था हमें अन्य छोटे उद्योगों में भी मिलती है। जैसे बुनने का उद्योग जिसमें कातना व बुनना तो छोटे उद्योग द्वारा होता है, धोना, सीना इत्यादि काम अन्य कुटीर उद्योगों में होता है। इसी प्रकार रंगाई उद्योग है, फरनीचर उद्योग में भी सारे हिस्सों के बनाने का काम तो छोटे कारखानों को दिया जाता है और शेष काम फिनिशिंग व बिक्री इत्यादि का सैंट्रल (केन्द्र) द्वारा होता है। इसी प्रकार का बर्तनों का उद्योग है जिसमें ढालने व पकाने का काम तो होता है छोटे उद्योग द्वारा और चमकाना, बांधना व जहाज़ द्वारा भेजने का काम होता है केन्द्र द्वारा ?

परिणाम :

चूंकि यह तरीका वहां की जनता की मनोवृत्ति के अनुकूल है अतः इसके परिणाम स्वरूप बहुत से छोटे उद्योग शुरू हो गये हैं। केन्द्र की स्थापना के कारण, जिनका निर्देशन गांव के सबसे अच्छे दस्तकार व अध्यापकों द्वारा होता है बहुत सी सामाजिक व तकनीकी बुराइयां भी लुप्त हो गई हैं। छोटे उद्योगों के लोग सोचते हैं कि जिस प्रकार उनकी जिम्मेदारी गांव के प्रति है उसी प्रकार क्रेन्द्र के प्रति भी है और इसीलिए वे सदैव अच्छा सामान तैयार करके उचित समय पर पहुंचा देते हैं। उनकी आर्थिक दशा भी सुधर गई है। कुटीर धंधे जब बाकोअल (मध्यस्थ) द्वारा नियंत्रित किये जाते थे, उस समय मज़दूरी बहुत थोड़ी थी और ऐसा प्रतीत होता था कि फालतू समय के काम में मिली मजदूरी के बराबर सी है, किन्तु जब से वे केन्द्र के सहयोग में आए हैं मजदूरी तो यद्यपि बहुत अधिक नहीं हुई लेकिन फिर भी यह उस स्तर पर अवश्य है जिस पर कि कृषि की कमाई होती।

कृषि का सामान बनाने वाली सहकारी संस्थायें, बेलग्राड, फ्रान्स :

यह प्रयोग १९४६ में ही आरम्भ किया गया है। इसलिये इसे शुरू हुये इतना अधिक समय तो नहीं हुआ है कि इसके परिणाम के

सम्बन्ध में कुछ कहा जा सके किन्तु इसमें बहुत अच्छे सुझाव हैं अतः इसी भी लेना आवश्यक ही है।

"दी बैलग्रेड कोआपरेटिव फॉर कंसट्रक्शन ऑफ एग्रीकलचरल मैटीरियल" नामक संस्था बिखरी हुई छोटी-छोटी स्वतन्त्र वर्कशापों के सहकार से बना हुआ है, जो कि आर्थिक रूप से भी इसी बड़े उद्योग के साथ सम्बन्धित है। इससे हमें उस प्रकार के औद्योगिक उत्पादन का स्मरण हो आता है जिसे "फ्रैड्रिक लि प्ले" ने "सामूहिक फैक्ट्री" कहा है। और जिसे हम इससे भी अच्छा नाम "विकेन्द्रित फैक्ट्री दे सकते हैं। या जैसा कि चार्ल्स गाइड ने बताया है "बिखरी हुई फैक्ट्री" यह सहकारिता का ही वह रूप है जिसमें मुख्य काम लाभ कमाना ही नहीं सेवा करना भी है।

अपने-अपने घर पर काम करने वाले सामूहिक फैक्ट्री के लोग वही होते हैं जो मंडियों से अपना सम्पर्क खो चुके हैं और जिन्हें सम्पर्क को फिर से ठेकेदारों के द्वारा प्राप्त करना बहुत खर्चीला होता है। लेकिन पहिये बनाने वाले और गाड़ियां बनाने वाले कारीगर लोग जो अब छोटे उद्योगपति हैं उन्होंने अपने आपको उस दुर्भाग्य से बचाने के लिये बेलग्रेड सहकारी समिति में शामिल कर लिया है। अब उन्होंने अपने आपको उस उद्योग का मालिक बना लिया है जो उन्हें बाजार के सम्पर्क में लाता है। अब वे इसके दास नहीं रहे हैं।

सहकारी समिति का उद्देश्य :

ठीक प्रकार से देखा जाय तो जो चीज़ उन्होंने प्राप्त कर ली है उनका अन्तिम लक्ष्य भी वही था किन्तु फिर भी सोसाइटी के सदस्य उद्देश्य मान कर नहीं चले थे। जब उन्होंने काम आरम्भ किया उस समय उनके लिये प्रेरक शक्ति थी काम करने की लगन ऊँचे उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं। उस समय उन लोगों को गाड़ी वगैरा के बनाने में जिन चीज़ों की आवश्वकता थी वे नहीं मिल पाती थीं और वे ही वस्तुयें किसानों के लिये अत्यावश्यक थीं। अतः वे लोग एक दूसरे के साथ मिलकर एक गुट में बंध गये ताकि सरकारी वितरण से अच्छी चीजें ले सकें और साथ ही साथ जनरल कॉनफेडरेशन ऑफ एग्रीकलचर से सम्पर्क स्थापित करके उससे कृषि के लिये निश्चित किये हुये कोटे में से कुछ कच्चा माल ले सकें।

फिर जैसा कि बहुता हुआ करता है ज्यों ही उन्होंने एक बार यह काम आरम्भ किया त्यों ही उन लोगों को सब लोगों की नई-नई आवश्यकताएं मालूम होती चली गईं, और इसलिये उन्होंने इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये एक संयुक्त ग्रुप बना लिया। यदि इसकी बाह्य रूप रेखा को देखा जावे तो ज्ञात होगा कि समस्या वही पहले वाली ही बनी हुई है। यह समस्या पहले भी यहीं थी और अब भी वहीं। इसमें दो बातें सम्मिलित हैं:

(अ) लोगों को औद्योगिक उत्पादकों की भांति का पूरा रोज़गार मिल सके।

(ब) कृषिक लोग, सर्वोत्तम परिस्थितियों में आवश्यक यातायात के साधन मुहय्या कर सकें।

निर्माण:

३० नवम्बर १६४८ को सहकारी समिति के पास दक्षिण पूर्व के बहुत से विभागों के ५० के लगभग सदस्य थे। इसके सदस्य केवल कारीगर लोग या छोटे उद्योगपति हो सकते थे वह उद्योगपति जिसके पास २० मज़दूर काम करते हों इसका सदस्य नहीं हो सकता था हां यदि उसकी विशेष इच्छा हो तो बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स की अनुमति से वह समिति के लिये उप ठेकेदार का काम कर सकते हैं।

जहां तक इस संघ के विभागों का प्रश्न है वे वही हैं जो अन्य सहकारी संस्थाओं में हुआ करते हैं जैसे अधिराट (सोवरेन) जनरल ऐसेम्बली, एक बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स (संचालन करने वाला बोर्ड) एक बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स तथा मैनेजमेंट (प्रबन्ध)।

हां, यहां इसकी एक विशेषता बतलाना आवश्यक है। जनरल कॉनफैडरेशन ऑफ एग्रीकलचर के दो व्यक्ति बोर्ड ऑफ डाइरेक्टर्स में बैठते हैं जिनमें से एक मज़दूर संघ के हितों का प्रतिनिधित्व करता है दूसरा सामान्य सहकारी हितों का, इन लोगों को परामर्श देने का अधिकार होता है।

समिति के पास उत्पादन के लिये १५००० वर्ग मीटर में फैली हुई वर्कशाप है जिसमें ८०० मशीनों के औज़ार और २०० मज़दूर लगे हुए हैं और अब भी आसानी से दुगने आदमी व मशीनें और भी

लगाई जा सकती हैं। वर्कशाप मिलाकर १५० के लगभग गाड़ियां प्रति माह तैयार कर सकती है।

यह समिति अपने सदस्यों के हितों के लिये वही काम करती हैं जो 'सामूहिक फैक्ट्री' में एक ठेकेदार को करना पड़ता है, और इसीलिए यह बहुत सरल है और थोड़े से ही दफ्तरों से काम चल जाता है। इस काम में कच्चे माल के लिए केन्द्र से आर्डर भेजना, अनुसंधान व निरीक्षण और प्रबन्ध करना भी सम्मिलित है।

सहकारी समिति का काम करने का ढंग :

इसमें भी काम "सामूहिक फैक्ट्री" की भांति होता है। सामूहिक फैक्ट्री में वहाँ के सदस्यों को यह करना पड़ता है कि कच्चा माल तो वे प्रबन्धक या सोसाइटी से खरीदते हैं किन्तु माल के लिये वे अपनी आवश्यकताओं और अनुमान के अनुसार आर्डर प्राप्त करके प्रबन्धक के पास भेज देते हैं। प्रबन्धक उसे सूची में चढ़ा लेता है और उसमें यह दर्ज कर लेता है कि किस सदस्य ने कितना और किस प्रकार का माल माँगा है। फिर वह सूची सप्लायर (माल भेजने वाले) के पास भेज दी जाती है जो अपने पिछले समझौते के अनुसार माल की थोक कीमत व लाने जाने के खर्च को काट कर माल उस सदस्य के पास भेज देता है।

जैसा कि "सामूहिक फैक्ट्री" में होता है प्रत्येक सदस्य अपनी वर्कशाप में अपने औज़ारों के साथ ही काम करता है वह अपनी इच्छा के अनुसार काम कर सकता है, किन्तु सामूहिक फैक्ट्री के विपरीत यदि वह चाहे तो ग्राहक से सीधा सम्पर्क भी स्थापित कर सकता है, अपने आप ऑर्डर भी ले सकता है, और उन्हें पूरा करके माल सीधा अपने ग्राहक को दे भी सकता है। अनुसन्धान कार्यालय द्वारा बनाई गई योजना के अनुसार वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार चीज़ें तैयार कर सकता है। हाँ प्रबन्धक व अनुसन्धान कार्यालय का यह काम अवश्य है कि जिस प्रकार की चीज़ें बनवाने की उनकी योजना हो उसी प्रकार की चीज़ें तैयार कर लें। यह काम सहकारी समिति के सदस्यों के सहयोग से होता है क्योंकि वे लोग इन चीज़ों के उपभोक्ताओं के सीधे सम्पर्क में रहते हैं और इसलिए वे इन चीज़ों को तैयार करने के नये

तरीकों को भी काम में ला सकते हैं और जो सामान इसके तैयार करने में लेते हैं उसकी किस्म व गुणों के बारे में भी नये सुझाव दे सकते हैं।

अनुसन्धान कार्यालय की योजना को जनरल एसेम्बली के अनुमोदन के उपरांत ही पूरा किया जा सकता है। इससे बहुधा औद्योगिक उत्पादन के साथ-साथ चीज़ों को एक स्तर का बनाने का प्रयत्न भी किया जाता है। इस प्रकार यदि कोई सदस्य पूरी गाड़ी बनाना चाहे तो वह बना सकता है और यदि इसका कोई हिस्सा बनाना चाहे तो वह भी बना सकता है। जिन वर्कशापों में सबसे अच्छी मशीनें और और काम करने वाले होते हैं व अन्य वर्कशापों द्वारा बनाये गये विभिन्न हिस्सों को जोड़ने के काम में विशेषता हासिल करती है। यदि इन वर्कशापों में से कोई इसके उत्पादन में मशीन या काम करने के कार्यालय को अपना निवेदन भेज देती है जो कि उस निवेदन पर इसके पास एक तकनीकी सलाहकार भेज देती है।

जो कारीगर एक पूरी गाड़ी तैयार करता है, सहकारी समिति द्वारा वह उसे निर्धारित मूल्य पर अपने ग्राहक को बेच सकता है वह इसके लिये कीमत वसूल कर लेता है (⅓ जिस समय ऑर्डर दिया जावे और शेष जब चीज़ तैयार हो कर ग्राहक को मिल जावे) जिसमें से कुछ भाग सहयोग समिति काट लेती है। इस कटौती की दर प्रति वर्ष जनरल एसेम्बली द्वारा निर्धारित होती है। १९४८ में यह ५ प्रतिशत थी। हाँ उन वर्कशापों के लिए जो जोड़ने का काम करती हैं यह तरीका थोड़ा अधिक जटिल हो जाता है। प्रत्येक कारीगर को जिसने गाड़ी बनाने का कोई काम किया है उसे प्रत्येक इकाई पर निश्चित किया हुआ मूल्य दे दिया जाता है।

भौगोलिक रूप से चूंकि ये समितियाँ दूर-दूर फैली हुई होती हैं इसलिये ये वर्कशाप किसानों को अधिक दूर घुमाने फिराने की तकलीफ न देकर वहीं उन चीज़ों का सुधार कर सकती हैं।

पांचवां अध्याय

स्वास्थ्य और शरीर विज्ञान

यूगोस्लाविया की स्वास्थ्य समितियां

प्रारम्भ :

१९१४-१८ के महायुद्ध के उपरान्त 'सर्विअन चाइल्ड वेलफेयर एसोसियेशन ऑफ अमरीका' के प्रतिनिधि (डाक्टर रीडर) सर्विया के एक डाक्टर (डाक्टर जी० काज़िक) और जनरल फेडरेशन ऑफ कोआपरेटिव यूनियन्स के सेक्रेटरी (फादर एम आहोस्का) के सफल सहयोग से यूगोस्लाविया में स्वास्थ्य सहयोग आन्दोलन का आरम्भ हुआ।

समस्या :

१९१२ के आंकड़ों के अनुसार यूगोस्लाविया के ६२ प्रतिशत घर अंधेरे, सीले और खचाखच भरे हुये थे। १२ प्रतिशत घरों की खिड़कियों में कोई शीशे इत्यादि न थे केवल कागज़ या लकड़ी के टुकड़े लगे हुये थे, ३० प्रतिशत घरों में प्रकाश की व्यवस्था नहीं थी, ३८ प्रतिशत में चारपाई आदि न थी, २० प्रतिशत में न कुर्सी न मेज़, ३० प्रतिशत गृहस्थों में छः सात प्लेट व दो तीन चम्मचों को छोड़कर कोई बर्तन न थे, ८ प्रतिशत के पास गर्मी की कोई व्यवस्था न थी, ३६ प्रतिशत लोगों को गोश्त केवल विशेष अवसरों पर ही मिल पाता था, ९५ प्रतिशत लोगों को शुद्ध पानी तक की सुविधा न थी, ६९ प्रतिशत न लिख सकते थे न पढ़ सकते थे, ९२ प्रतिशत के पास एक भी पुस्तक नहीं थी, ८८ प्रतिशत को किसी प्रकार की चिकित्सा की सुविधा

नहीं थी। गांवों में १२,००० व्यक्तियों के पीछे एक डाक्टर उपलब्ध था तथा शहरों में ८६० व्यक्तियों के पीछे एक डाक्टर था।

मृत्यु संख्या भी बहुत अधिक थी। डाक्टर जी० काज़िक के कथनानुसार "१९२३-२४ में हर एक हजार मनुष्यों में २३ से २७ तक आदमी प्रतिवर्ष मर जाते थे, ४८ प्रतिशत मृत्यु छूत के रोगों के कारण होती थी। सर्बिया में पैदा होने वाले बच्चों में से आधे से अधिक तो ७ वर्ष की आयु से पहले ही मृत्यु का ग्रास बन जाते थे। युद्ध से पूर्व सर्बिया में अनुमानतः प्रत्येक घर में एक आदमी क्षय का शिकार होता था या अशक्त हो जाता था।"

हल की परिस्थितियां :

इस आन्दोलन के जन्मदाताओं को निम्न तीन सिद्धान्त पथ प्रदर्शन करते थे :

(अ) गांवों में स्वास्थ्य की समस्याओं को उसी प्रकार हल नहीं किया जा सकता जिस प्रकार कि शहरों में किया जाता है। गांवों में भी भौगोलिक स्थिति, जलवायु, आर्थिक व सामाजिक भिन्नताओं के कारण प्रत्येक जगह एक ही जैसा हल नहीं अपनाया जा सकता। गांव इन्हीं कारणों से शहरों की अपेक्षा एक दूसरे से अधिक भिन्न होते हैं।

(ब) प्रचार द्वारा दी गई शिक्षा पर्याप्त नहीं होती, विद्यालय की शिक्षा अधिक प्रभावोत्पादक होती है, क्योंकि इसके द्वारा आदतों का निर्माण होता है। लेकिन चूंकि यह शिक्षा आज के निर्माण के स्थान पर भविष्य निर्माण की ओर अधिक ध्यान देती है (और यह सफल ही हो सके इसमें भी सन्देह है) क्योंकि बच्चा जब ऐसी आदतें सीखता है जो उसकी पहली आदतों से बिलकुल भिन्न है तो वह धीरे-धीरे जब वापिस पूर्व वातावरण में आ जाता है तो नई आदतों को विद्यालय में ही भूल जाता है। इसलिये विद्यालय को यदि आर्थिक सहायता दी जावे तो उसके कुटुम्ब के वातावरण व जनता के वातावरण का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिये। इसके लिये केवल परामर्श देना मात्र उचित अथवा पर्याप्त नहीं है। इसके साथ ही ऐसी परिस्थिति

में इस प्रकार की आर्थिक सुविधायें भी उत्पन्न कर देना आवश्यक है कि व्यक्ति उन परामर्शों के अनुसार कार्य भी कर सकें। यदि प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छता रखने में जिन चीज़ों की आवश्यकता हो, वे प्राप्त हों तो स्वच्छता की आदतों का तो निर्माण अपने आप हो जावेगा। इसलिये देखा जावे तो सारी समस्या इस बात पर आ टिकती है कि लोगों को स्वच्छता की आदतें डालने के लिये उन्हें स्वच्छता की वस्तुयें भी उपलब्ध हों जैसे औषधियां, चिकित्सक की उपस्थिति इत्यादि।

(स) देश की जनता के स्वास्थ्य सुधार के लिये सबसे अधिक आवश्यकता जन सहयोग की है। यदि जनता पर ज़बरदस्ती लाद दिया जावे तो स्वास्थ्य के नियमों का कोई भी प्रभाव नहीं होगा उनके लिये यह आवश्यक है कि जनता उन्हें समझे, स्वीकार करे, और अपना सक्रिय सहयोग दे। इससे भी अधिक बुरी बात यह है कि यदि उन लोगों का सहयोग न हो तो स्वास्थ्य के कार्यक्रमों का ख़र्च बहुत बढ़ जाता है, और यदि बाहरी अधिकारी सतत ध्यान न दें तो आयोजन असफल ही हो जाता है। इसके विपरीत यदि वे लोग स्वयं इसमें सहयोग देते हैं तो इसका मतलब यह है कि लोग उनकी आवश्यकता का अनुभव करते हैं और इस आवश्यकता पूर्ति के लिये साधनों को स्वीकार ही नहीं कर लेंगे पर स्वयं निर्माण करेंगे।

लेकिन इस सब का यह आशय नहीं है कि सरकारी अधिकारियों या जन हितकारी संस्थाओं को गांव की स्वच्छता में दखल देने का कोई अधिकार नहीं है।

इसलिये इन्हीं कारणों की वजह से आन्दोलन के जन्मदाताओं ने यह निश्चय कर लिया था कि अपने उद्देश्य प्राप्ति के लिये सर्वोत्तम विधि स्वास्थ्य सहकारितायें बनाना ही है, जिसमें सारे सदस्य सीधे व्यक्तिगत रूप से रुचि लेते हैं और जिसमें वे सब बराबर के अधिकार और कर्तव्य के साथ भाग लेते हैं। एक और बात भी जिसने उनके इस निश्चय में दृढ़ता ला दी वह यह थी कि स्वास्थ्य सहकारिताओं को पहले से ही उपस्थित (ग्राम) सहकारिता के आन्दोलन से अनुभव और सहायता भी प्राप्त हो सकेगी।

स्वास्थ्य सहकारिताओं का उद्देश्य :

स्वास्थ्य सहकारिताओं का उद्देश्य गांवों में डाक्टरों की स्थापना करना है तथा उन लोगों की जीविका का ऐसा प्रबन्ध करना है कि उन्हें रोगियों की फीस पर निर्भर न रहना पड़े। इसके अतिरिक्त समिति ने सस्ते से सस्ते ढंग से औषधियों व स्वच्छता की वस्तुओं का वितरण करना है, लोगों को स्वच्छता की आदतें डालने के लिये शिक्षित करना है, आवश्यक रोकथाम के साधनों को लागू करना है, नालियों का काम, जल की व्यवस्था, स्वच्छता के साधनों आदि में भी वृद्धि करना इत्यादि है।

काम जो यह सम्भालेगी :

जिस प्रजातांत्रिक ढंग से इसको चलाया जाता है, उसके हिसाब से तो इसमें और सहकारी समितियों में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। इसकी प्रधान मौलिकता इसकी प्रकृति और इसके उद्देश्यों में है।

काम करने का तरीका :

इस समाज की सारी जमा पूँजी इसके सदस्यों की भेंट इत्यादि की है। १६३६-४५ के महायुद्ध से पूर्व समाज के नियमों के अनुसार इसके सदस्य लोग १० से १०० दिनार तक दे सकते थे। यह धन सदस्यों की संख्या पर निर्भर करता था (कि वे अधिक हैं या कम) वैसे औसतन द्रव्य ५० दिनार था। यदि किसी अन्य पार्टी का सहकारी समिति पर कर्ज हो जाये तो उस अवस्था से बचने के लिये सदस्यों की देयता उनके दान से १० गुना अधिक निश्चित कर दी गई थी।

प्रति दिन संख्या में बढ़ती हुई नई-नई सोसाइटियों की चालू पूँजी समाज के अतिरिक्त धन में भी वृद्धि करती है। स्वास्थ्य निधि (हैल्थ फंड) की वजह से धन में और भी वृद्धि हो गई। यह स्वास्थ्य फंड एक प्रकार का स्वास्थ्य बीमा था, प्रायः इस निधि (फंड) में धन देना एच्छिक है किन्तु यदि सामान्य अधिवेशन चाहे तो इसे अनिवार्य भी बना सकता है। प्रत्येक व्यक्ति के पैसा देने की मात्रा लोगों की संख्या के विपरीत होती है। यदि सदस्य कम होंगे तो पैसा अधिक देना पड़ेगा यदि सदस्य अधिक होंगे तो पैसा कम देना पड़ेगा। जो बड़ी समितियां हैं उन्होंने ५० दिनार प्रतिवर्ष की दर निश्चित कर

रखी है। सैद्धान्तिक तौर से अदायगी प्रतिमास होती है। किन्तु वास्तव में अदायगी फसल के समय होती है। सदस्य लोग जिन्स (दूध, पनीर आदि) में भी अदायगी कर सकते हैं, जिनको कि कृषि सहकारी समिति बेच डालती है।

इस तरीके से समिति को ठीक-ठीक मात्रा में और ठीक समय पर धन मिलता रहता है, क्योंकि इसमें धन रोगियों के उपचार पर निर्भर नहीं करता।

जिन-जिन समितियों में यह ढंग प्रचलित है वहां लोगों को उपचार और औषधियां अन्य जगहों की अपेक्षा अधिक सस्ते दामों पर मिल जाती हैं, और उन समितियों में जिनकी आर्थिक अवस्था इसे सहन कर सकती है (प्रायः इसमें वही होती हैं जिनकी संख्या औरों से तनिक अधिक होती है) वहां स्वास्थ्य निधि (हैल्थ फंड) में रुपया देने वालों का उपचार निशुल्क होता है।

इस अदायगी से एक और बड़ा लाभ भी है। इसका लगभग पांचवां भाग सहायता काम के लिये रखा जाता है, जो बीमारी में या मौत पर, या स्वास्थ्य के लिये मकान बनाने वाले लोगों को अल्पकालिक ऋण के रूप में दिया जा सकता है।

स्वास्थ्य केन्द्र :

आरम्भ में स्वास्थ्य केन्द्र बहुत सीधा सादा सा होता है। उस गांव में जिसे केन्द्र के रूप में चुन लिया जाता है, एक दो कमरों को कुछ समय के लिये किराये पर ले लिया जाता है और ये कन्सल्टिंग रूम (परामर्श गृह) की तरह वहां काम देते हैं, इनमें अच्छी तरह सोच विचार कर स्थापित की हुई अच्छे स्तर की डिस्पेन्सरी (दवाघर), मिलने-जुलने के लिये एक दो कमरे, और कभी-कभी फव्वारे का स्नानगृह भी होते हैं। सहकारी समिति के पास सख्त बीमार आदमियों के लिये एक दो सोने के कमरे भी होते हैं।

अमले (स्टाफ) में एक डाक्टर होता है जिसे किसी जगह नर्स या दाई भी सहायता करने को मिल जाती है। डाक्टर गांव में ही रहता है। डाक्टर अक्सर विवाहित व्यक्ति होता है और उसके बहुत से कामों में उसकी पत्नी उसकी सहायता करती है। कभी-कभी स्त्री डाक्टर भी होती है।

चाहे परामर्श के लिये रुपया दिया जावे या नहीं (उपरोक्त बीमे की स्कीम के अनुसार) लेकिन डाक्टर की फीस तो समिति की सामान्य निधि (जनरल फंड) से ही दी जाती है। जहां तक सम्भव हो सकता है डाक्टर की फीस उसके काम के अनुपात में होती है, रोगी के देने की सामर्थ्य पर नहीं। डाक्टर के वेतन में निम्नांकित चीजें होती हैं :

(अ) स्वास्थ्य सहकारी समितियों के संघ (यूनियन ऑफ हैल्थ कोआपरेटिव्ज़) और डाक्टरों द्वारा सहमत क़ानूनों द्वारा निर्धारित एक निश्चित वेतन (इसके अलावा निजी निरीक्षण रात्रि के कार्य इत्यादि के लिये भी अतिरिक्त धन मिलता है, तथा समय पर दी जाने वाली तरक्की भी होती है।)

(ब) सदस्यों की संख्या, चिकित्सा, परीक्षण कार्य इत्यादि के अनुसार निश्चित वेतन, जिसकी दर प्रत्येक सहकारी सोसाइटी के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स तथा डाक्टर यूनियन की सहमति से तय होती है।

स्वास्थ्य गृह :

यद्यपि स्वास्थ्य केन्द्र आरम्भ में बिल्कुल सरल थे फिर भी उन्होंने बहुत से आवश्यक कार्यों को सम्भालने में भारी मदद दी। उनका विकास शनैः शनैः किया गया और कुछ तो आगे चल कर बिलकुल ठीक स्वास्थ्य गृह ही हो गए। इनमें सब से पहले का निर्माण १९३८ में हुआ। स्वास्थ्यगृह में नियमतः डाक्टर के कुटुम्ब के रहने का घर होता है। इनमें एक सब साधनों से युक्त परामर्श गृह, वेटिंगरूम (बैठक का कमरा), एक चिकित्सालय (डस्पेंसरी) (जिसके साथ कभी-कभी प्रयोगशाला भी लगी रहती है) बहुत से बीमारों के लिये कमरे, कभी-कभी नर्सों के लिये कमरे, बाहर के रोगियों के लिये कमरे, फव्वारे के स्नानगृह और अधिकांश स्थानों पर स्नानगृह आदि होते हैं। कुछ में स्कूल का पालि क्लिनिक (अनेक प्रकार का चिकित्सा केन्द्र) होता है; एक प्रसूतिगृह, एक शिशुशाला और अधिकांश में व्यावसायिक प्रशिक्षण (रसोईघर से लगे बाग़, अस्तबल इत्यादि) के लिये अतिरिक्त स्थान होता है। सबों में एक सभा भवन, भाषण भवन, पढ़ाने का सामान और कभी-कभी एक छोटा सा पुस्तकालय भी होता है। कम से कम

उनमें से एक में खुला हुआ तैरने का तालाब भी होता है। सिद्धान्त रूप से ये स्वास्थ्य गृह गांव की अन्य सहकारी समितियों (ऋण समिति, पशुओं को छांटने की समिति, अनाज बेचने की समिति इत्यादि) के सदस्यों के लिये भी खुला रहता है।

कार्यवाहियां

रोग निवारण औषधियां :

यदि स्वास्थ्य निधि (हैल्थ फंड) नहीं होती थी तो एक बार की मशविरे की फीस ५ से १० दिनार तक होती थी। परन्तु अब औषधियां साधारण मूल्य से २० प्रतिशत से ३० प्रतिशत नीचे मूल्य पर दी जाती हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि प्रत्येक रोगी पर अब औसतन व्यय (मशविरे और औषधियों के लये) साधारणतया होने वाले व्यय का एक तिहाई रह गया है।

रोगों से बचाने वाली औषधियां :

स्वास्थ्य समितियों ने अपने ज़िले के लोगों को चाहे वे उसके सदस्य हों या न हों निःशुल्क टीके लगाने शुरु किया। अधिकांश मामलों में समिति के डाक्टरों शिशुओं, बालकों, माताओं और गर्भ-वती स्त्रियों को सप्ताह में एक बार निःशुल्क देखना भी आरम्भ किया। शिशु प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया। कुछ समितियों ने शिशुशालायें खोली जहां अनुभवी व्यक्तियों व समिति के डाक्टर के निरीक्षण में बच्चे सारा दिन व्यतीत करते थे। डाक्टर को प्राथमिक पाठशाला का स्वास्थ्य निरीक्षण भी करना पड़ता था। यही कमज़ोर बच्चों को निगरानी में रखा जाता था और उन्हें नियमित रूप से स्वास्थ्य निरीक्षण करवाते रहना पड़ता था। यह निरीक्षण निःशुल्क होता था और जो बहुत निर्धन बालक होते थे उनको औषधियां भी निःशुल्क दी जाती थी। बच्चों की देखभाल उस प्रमुख आक्रमण का एक भाग थीं जो वहां की मुख्य सामाजिक व बहुप्रचलित बीमारियों के विरुद्ध आरम्भ किया गया था। इन बीमारियों में मलेरिया, क्षय, गुप्त, रोग, आंख का रोग, शराब पीने की लत इत्यादि सम्मिलित थी।

गांव की सफाई में उन्नति :

अधिकांशतः या पूर्णतः ग्राम की सफाई समिति के सदस्यों द्वारा विभिन्न प्रकार के कामों द्वारा प्राप्त की जाती थी। पीने के जल की

व्यवस्था के लिये पानी के नल या कुओं का निर्माण, खाद के गड्ढे, पाख़ाने, कूड़े के गड्ढे इत्यादि का निर्माण, अस्तबल, मुर्ग़ियों के अंडों व कभी-कभी मकान और गलियों की मरम्मत भी सफाई के कार्य में ही सम्मिलित थीं।

स्वास्थ्य विज्ञान की शिक्षा :

इस प्रकार की सारी कार्यवाहियां स्वास्थ्य विज्ञान की शिक्षा देने के निरन्तर और विधिवत् प्रयास का ही एक अंग थीं। यद्यपि इसके लिये सैद्धान्तिक अध्यापन को अधिक विस्तृत नहीं किया गया था किन्तु फिर भी शिक्षा के क्रियात्मक भाग को अच्छा समझा जाता था और वहां किसानों के दैनिक जीवन में स्वास्थ्य विज्ञान के ऐसे प्रश्नों पर प्रकाश डाला जाता था जो उनके जीविकोपार्जन से सम्बन्धित थे।

इस प्रकार के प्रयासों के फलस्वरूप स्वास्थ्य समिति के "यूथ सेक्शन" (नवयुवक विभाग) वीमेंस सेक्शन (महिला विभाग) वैटेरिनरी सेक्शन (पशु चिकित्सा विभाग) की नींव डाली गई।

नवयुवक विभाग की सैद्धान्तिक और क्रियात्मक प्रशिक्षण योजना में उन्हें सहकारी समितियों के कार्य, स्वास्थ्य विज्ञान, तथा फस्लों का सुधार करना व पशु पालने की सामान्य शिक्षा दी गई। प्रत्येक सदस्य अपनी पैतृक ज़मीन जोतता था और इस प्रकार के फल और सब्ज़ियां उत्पन्न करता था जो या तो अप्राप्य थीं या पहले कभी नहीं बोई गई थीं। अथवा बहुत से सदस्य मिलकर अच्छे जानवरों की नस्ल तैयार करते थे जैसे पहले से अच्छे सूअर, बछड़े, मुर्ग़ियों और मधुमक्खियों इत्यादि। युवक संघ गांव और घर के स्वास्थ्य सुधार में भी क्रियात्मक भाग लेता था जैसे फरनीचर बनाना। उनके कार्यों को प्रतियोगिता द्वारा प्रोत्साहन दिया जाता था, इनमें बांट की जाती थी। यह प्रतियोगिता व्यक्ति-व्यक्ति में भी हो सकती है और वर्ग-वर्ग में भी। इस प्रकार उन लोगों ने जन-साधारण के कार्य में भी सहायता दी। किसानों के भोजन में जो रूखा-सूखा व अपर्याप्त होता था नई-नई चीज़ों की वृद्धि की गई। प्रत्येक कुटुम्ब को नये साधन बताये गये और गांव और घर को वे सब वस्तुयें दी गईं जो उनके पास नहीं थीं। और अन्त में चारित्रिक व सामाजिक दृष्टिकोण से भी उन लोगों

ने गांव के युवकों को अपने सामर्थ्यानुसार गांव की सेवा करने की आदत डाल दी।

स्त्रियों के वर्ग को सर्व प्रथम १६३१ में आयोजित किया गया। स्त्रियों व लड़कियों के लिये स्वास्थ्य विज्ञान के पहलुओं पर, कृषि के कार्यों पर (रसोईघर से लगे बाग़, बाग़बानी, फार्म यार्ड) गृह कार्य, बच्चों की सावधानी, मकान को साफ़ और स्वस्थ रखना, ठीक प्रकार से भोजन बनाना (खास तौर से नौजवानों द्वारा पैदा की गई नई-नई सब्ज़ियों) काम करने के तरीकों में सुधार (वस्त्र, बिछौने, कीटाणु-नाश, जाड़ों के लिये फल और सब्ज़ियां सुरक्षित रखना इत्यादि) इन सब पर नये पाठ्य क्रम आरम्भ किये गये। प्रतियोगिता और इनामों का उसी प्रकार आयोजन किया गया जिस प्रकार युवकों के वर्ग के लिये हुआ था।

जिस प्रकार युवक वर्ग ने गांव की स्वच्छता वृद्धि में सहायता दी उसी प्रकार स्त्री वर्ग ने गृह संचालन में और उन्हें स्वच्छ रखने में, चंदे ठीक समय पर दिये जाने में, और पढ़ाई के कोर्स व मीटिंग में लोग नियमित रूप से पहुंच जावें इसमें सहायता दी। गांव को कुछ भागों में विभक्त कर दिया गया। ये ग्रुप एक ज़िम्मेवार आदमी के हाथों सौंप दिये गये, जो लोगों को परामर्श दिया करता था, अगुआ बनने को प्रोत्साहन देता था, निरीक्षण किया करता था और अपनी रिपोर्ट पेश किया करता था। जिन गृहस्थों के बारे में रिपोर्ट सबसे अच्छी होती थी उन्हें इनाम में वे बर्तन दिये जाते थे, जिनकी उनके यहां वास्तव में कमी थी। वर्गों में जो प्रतियोगिता होती थी उनके लिये इनाम हमेशा दैनिक जीवन में काम आने वाला व शिक्षात्मक होता था जैसे एक आधुनिकतम खड्डी, जो उस वर्ग के सब सदस्यों की सम्पत्ति हो जाती थी।

स्त्री वर्ग को भी त्योहारों, संगीत तथा सामाजिक मनोरंजन के अवसरों का आयोजन करने का काम सौंपा गया और यूगोस्लाविया के गांवों में यह सब स्त्रियों का कार्य बहुत सफल हुआ।

कुछ समय उपरान्त किसानों के स्वयं के उत्साह पर पशु चिकित्सालय भी खोले गये, जिनका काम पशुओं को कम से कम मूल्य पर तात्कालिक चिकित्सा पहुंचाना, सामूहिक रोकथाम के उपाय, अपनाना,

पशुओं की नस्ल में सुधार लाना तथा चिकित्सा के समय पशुओं के मालिकों को कर्ज दिलवाना आदि काम थे जो धीरे-धीरे पशुओं के बीमे करने वाली समितियों की स्थापना में परिणित हो गये।

१९३८ में १४ स्वास्थ्य समितियां और पशु संवर्धन समितियों ने, जिनकी सदस्य संख्या १५९५ थी एक विशेष पशु चिकित्सा समिति स्थापित की। उसका कार्यक्षेत्र ३७ गांवों तक फैला हुआ था।

जनता के अधिकारियों के साथ सम्बन्ध :

१९२७ में सैंट्रल ईस्टीटयूट ऑफ हाईजिन ने स्वास्थ्य समितियों के बहुमूल्य कार्य की सराहना की और उसके सहयोग से फैलने वाले रोगों की रोकथाम के विरुद्ध एक जिहाद शुरू कर दिया। इसने सरकारी समितियों के तकनीकी (टेक्निकल) निरीक्षण का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया, उनको प्रदर्शिनियों के लिये सामान दिया, गांव की स्वच्छता बढ़ाने के लिये उनको आर्थिक सहायता दी। उनको गांव में प्रसूति गृह और स्नान गृह बनाने में सहायता दी और कुछ आर्थिक सहायता भी दी। इन कामों के समन्वय को और भी प्रभावोत्पादक बनाने के लिये सैंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ हाइजिन में ही एक स्वास्थ्य समिति का विभाग भी स्थापित किया गया।

सामाजिक मामलों के मंत्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ सोशियल अफेयर्स) और सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग (पब्लिक हैल्थ) ने भी हैल्थ हाउस (स्वास्थ्य गृहों) के निर्माण के लिये धन की सहायता देकर व औषधियाँ देकर स्वास्थ्य समितियों की काफी सहायता की।

३० दिसम्बर १९३० के कानून ने स्वास्थ्य समितियों को वैधानिक पद दे दिया तथा उनकी कार्यों की प्रशंसा की और उनकी वृद्धि के लिये प्रोत्साहन दिया। उनके औषधालयों (डिसपैन्सरियों) पर से वे सब बाधा डालने वाले नियम हटा लिये जो निजी चिकित्सालयों (प्राइवेट डिसपैन्सरियों) के निर्माण और प्रबन्ध के लिये लागू थे। स्वास्थ्य समितियों व शासन के आपसी सम्बन्धों का भी स्पष्टीकरण कर दिया गया था। स्वास्थ्य समितियों को राज्य या 'वेनोबाइन' स्वास्थ्य सेवाओं के नाम से वही अधिकार प्राप्त थे जो इन्हें होते थे। जब स्वास्थ्य समितियों के स्टाफ के सदस्य राज्य के स्वास्थ्य अधिकारियों

के स्थान में मान लिये गये तो जब कभी वे कोई जनता की सेवा का कार्य करें तो शासन के सम्बन्धित अधिकारियों से उन्हें सहायता भी मिलनी चाहिये। क़ानून ने यह भी स्पष्ट रूप से घोषित कर दिया कि सामाजिक मामलों के मंत्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ सोशियल अफेयर्स) और सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग (पब्लिक हैल्थ डिपार्टमेंट) के बजट में स्वास्थ्य सहकारिता समिति संघ (यूनियन ऑफ हैल्थ कोआपरे-टिव्ज़) की सहायता के लिये रुपया अवश्य रहे।

परिणाम :

२१ नवम्बर १६२१ को पहली स्वास्थ्य समिति की स्थापना हुई। १६२२ में उस समय की समितियों ने एक संघ (यूनियन) बना लिया।

१६२३ में ५०४६ सदस्यों की १३ समितियां थीं। १६३८ के अन्त में १३४, इन समितियों में या और भी अधिक ठीक रूप से कहें तो १२५ में ६५,५८६ सदस्य थे लेकिन उनको ३६०,००० व्यक्तियों की देख भाल करनी पड़ती थी क्योंकि यूगोस्लाव में एक कुटुम्ब में औसतन ६ सदस्य होते हैं।

इन्होंने २५ परिचर्या गृह (नरसिंग होम) खोले जिनमें से चार में एक्सरे की मशीनें भी थीं। स्वास्थ्य सहकारी समिति संघ (यूनि-यन ऑफ हैल्थ कोआपरेटिव) ने दांतों की चिकित्सा के लिये एक चलता-फिरता अस्पताल बना दिया जो सारी स्वास्थ्य समितियों का निरीक्षण किया करता था।

१६३८-३६ में १२५ समितियों ने जो अपनी रिपोट दी उसके अनुसार उन्होंने ६५ डाक्टरों की सहायता से १३६,१८७ व्यक्तियों की चिकित्सा की ओर ध्यान दिया, १०२३० मलेरिया पीड़ितों को ठीक किया, १७२४ भावी माताओं और ३२६७ बच्चों का (मेडिकल टेस्ट) डाक्टरी जाँच, २५०५, १ से ७ वर्ष की अवस्था के बच्चों व ६०४३ स्कूल जाने वाले बच्चों को उनके चिकित्सालयों (डिसपैन्सरियों) से सहायता मिली, तथा १८,६३१ स्कूलों के बच्चों की डाक्टरी जांच की जब कि १६२५ में केवल ८६४० की ही हो सकी थी।

१६३४-३५ में पशु चिकित्सालयों की संख्या १४ थी। १६३८-३६ में यह १०५ हो गई। १६३४-३५ में १५६७ सूअरों को टीका लगाया गया था १६३८-३६ में यह संख्या ५६-३३५ तक पहुँच गई।

स्वास्थ्य समितियों के सारे कार्य उनके परिणामों को केवल आंकड़ों में ही नहीं दिया जा सकता। उनकी प्रशंसा में निम्न बात 'इंटरनेशनल लेबर रिव्यू' एक लेख में छपी थी।

वैसे तो स्वास्थ्य समितियां एक विशेष उद्देश्य लेकर स्थापित की हुई संस्थायें हैं, किन्तु वे इस प्रकार के सभी आन्दोलनों से अवश्य सम्बन्धित हैं जो उन्हीं लाइनों पर चलते हों और साथ ही साथ लोकप्रिय भी हों। अब स्वास्थ्य समितियां अपने कार्यों में अभ्यस्त हो गई हैं क्योंकि ये सब इन परिस्थितियों में से निकली हुई आशायें और आवश्यकतायें हैं जिनमें उनका जीवन गुज़रता है। इनकी सारी कार्य-वाहियाँ लोगों की ही सूझ हैं और उन्हीं के सहयोग एवं निश्चयों पर निर्भर करती हैं। इनके सदस्य भी आर्थिक और नैतिक रूप से इससे घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं और इसके कार्य का सारा भार अपने कंधों पर वहन करते हैं।

निर्विवाद रूप से ये समितियां अपनी बहुद्देशीय रुचि के कारण (जो उन्हें प्रेरणा प्रदान करती हैं) उन सिद्धान्तों और तरीकों के कारण (जो यह अपनाती हैं) और अपने विशद प्रभाव के कारण अन्य प्रकार की सहकारी समितियों के साथ गांव में सभ्यता प्रसार का विशद तत्व बन गई हैं, और सम्भव है कि गांव के समाज में एक नई संस्था निर्माण के लिये बीज ही बन चुकी हों।

हम यह तो भली प्रकार देख चुके हैं कि वे कार्य में निहित सिद्धान्तों का पालन ईमानदारी से करती हैं, और इस प्रकार वे शनैः शनैः शिक्षा के हर क्षेत्र में पहुँच जाती हैं। बच्चे, मां बाप, माँ और पत्नी, घर का पिता और कृषक सब तक उसकी पहुँच है। इस दृष्टि से वे न केवल क्रियात्मक स्वास्थ्य केन्द्र ही रह जाते हैं बल्कि संध्या और रविवार के कोर्सेज़ (पाठ्यक्रम) के कारण प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र भी हो जाते हैं और उस प्रौढ़ शिक्षा के कारण जो वे बढ़ईगीरी कांक्रीट के काम और गृहस्थी की कलाओं के बारे में देते हैं और पशु संवर्धन व बाग़बानी में किए गए सुधारों के कारण तो वे अपने नये नये

पाठ्यक्रमों के कारण वे व्यावसायिक स्कूल की भांति ही दिखायी पड़ते हैं। यह सत्य है कि उनके अध्यापन का आधार और उद्देश्य प्रतिदिन का जीवन ही होता है, किन्तु साथ ही वे विज्ञान, अर्थशास्त्र इत्यादि के ज्ञान देने, विचारों को मनन करने का प्रोत्साहन देने व कलात्मकता को उन्नत कर सकने के ऐसे काम भी तो करते हैं। और इस प्रकार वे तकनीकी (टेक्निकल) शिक्षा व सांस्कृतिक शिक्षा दोनों का समन्वय करते हैं। गाँवों के डाक्टर रख कर इन्होंने वहां के बौद्धिक जीवन को समृद्ध बनाने का प्रयास किया है। क्योंकि गांवों के डाक्टरों केवल रोगियों की परिचर्या करने वाला और शेष अपना निजी जीवन बिताने वाला तो होता नहीं, वह तो गांव का पथ प्रदर्शक, दार्शनिक व मित्र सब कुछ ही होता है। डाक्टर केवल लोगों को भला चंगा करने वाला ही नही, बल्कि अपने साथ रहने वालों के जीवन को प्रभावित करने वाले सब प्रश्नों के लिए एक योग्य शिक्षा शास्त्री व परामर्श दाता भी है। गाँव के अध्यापक व डाक्टर के प्रभाव के कारण जिन्हें वे हमेशा अपने काम में शामिल कर लिया करते हैं, उनकी स्वास्थ्य सह-समितियाँ गांव के सांस्कृतिक जीवन का केन्द्र बन गई हैं। इस प्रकार उन्होंने एक दबी हुई प्रवृत्ति को पुनर्जन्म दिया है।

बंगाल में एक प्रयोग

आरम्भ :

१९३२ में बंगाल के बीरभूम जिले के गांवों में यूगोस्लाविया के नमूने पर आधारित एक प्रयोग विश्व भारती इन्स्टीटयूट ऑफ रूरल रिकंस्ट्रक्शन की निगरानी में और उसी के प्रयास स्वरूप हुआ था। रवीन्द्रनाथ टैगोर के सुझाव पर १९३० में ग्राम कल्याणी विभाग (विलेज वैलफेयर डिपार्टमेंट) के सुपरिटेंडेंट को यूगोस्लाविया में वहां के गांवों का स्वास्थ्य संगठन का अध्ययन करने भेजा गया था।

समस्या :

चिकित्सा को घर घर पहुंचाने की दृष्टि से यहां भी समस्या लगभग अन्य निर्धन गांवों जैसी ही थी। सफाई और स्वास्थ्य विज्ञान की कमी, डाक्टरों के स्थान पर अशिक्षित चिकित्सक, नर्सों के स्थान पर नासमझ दाई, बच्चों और स्त्रियों की दुखदाई मौत, इन सबके

अतिरिक्त बीरभूम बंगाल का सबसे अधिक मलेरिया आक्रांत स्थान था जहाँ कुष्ट भी विस्तृत रूप से फैल चुका था।

१९३२ में पब्लिक हैल्थ डिपार्टमेंट ने रिपोर्ट दी कि जन्मसंख्या घट रही है और मृत्यु संख्या विगत दस वर्षों से निरन्तर बढ़ रही है।

इतिहास :

१९३२ में पहली तीन स्वास्थ्य सहकारी समितियां आरम्भ की गईं और एक वर्ष के कार्य के उपरान्त ही वे अपना भार उठाने योग्य हो गईं। १९३७ के अन्त तक समितियों की संख्या बढ़कर १० हो गई। ये ९३ गांवों में फैल गईं जिनकी जन संख्या ३०,००० से भी अधिक थी। १९३८ के मध्य तक १२ स्वास्थ्य सहकारी समितियां काम कर रही थीं। उन्होंने अपना एक संघ (यूनियन) भी स्थापित कर लिया, जहां डाक्टर लोग सप्ताह में एक बार मिला करते थे, अनुभवों की तुलना किया करते थे, कठिन रोगों के बारे में विवाद करते थे, तथा एक सहकारी की सहायता से प्रयोगशाला में चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान भी किया करते थे।

स्वास्थ्य सहकारी समितियों का संगठन :

अन्य सहकारी संघों की भांति, स्वास्थ्य समितियां भी कार्य में रुचि रखने वाले लोगों का समुदाय है जो इसके प्रबन्ध में बराबर का काम करते व सुविधा प्राप्त करते हैं। बीरभूम की समितियां निम्न आधार पर चलायी जाती हैं :

१. प्रत्येक समिति में कम से कम २५० कुटुम्ब होते हैं। इतने सदस्य बनाने के लिये संघ एक गांव से दूसरे गांव तक अपना कार्यक्षेत्र बढ़ा सकता है।

२. सदस्यता में कुटुम्ब के सब लोग होते हैं। चंदे अधिकांश लोगों के सामर्थ्य के अनुसार ही होते हैं। चंदा चार रुपया प्रति वर्ष या इसके एवज में दिये गये श्रम के बराबर होता है। श्रम में तालाब साफ करना, नालियां बनाना, सड़कें खोदना इत्यादि काम हैं। जो सदस्य दो रुपये से अधिक नहीं दे सकते हैं वे साल भर में ८ दिन

का श्रम दे सकते हैं। जो रुपया बिल्कुल नहीं दे सकते वे वर्ष में १६ दिन का श्रम दे सकते हैं।

३. प्रत्येक ऐसे केन्द्र में एक चिकित्सालय (डिस्पैन्सरी) तथा हर समय रहने वाला एक योग्य डाक्टर होता है।

४. सदस्यों को दवा बाज़ार मूल्य पर मिल जाती है, उन्हें चिकित्सालय (डिस्पेन्सरी) में डाक्टर की सलाह के लिये भी कुछ नहीं देना पड़ता। यदि डाक्टर को घर बुलाया जाये तो कुछ थोड़ी सी फ़ीस ज़रूर देनी पड़ती है।

५. सदस्यों द्वारा चुनी हुई एक कमेटी द्वारा समिति (सोसाइटी) का प्रबन्ध होता है।

कार्य क्षेत्र:

स्वास्थ्य सहकारी समितियों (सोसाइटियों) की कार्यवाही रोगियों को चिकित्सा पहुंचाने तक ही सीमित नहीं है। वरन् इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य रोग इत्यादि से बचने के लिए उत्तम वातावरण का निर्माण करना भी है। इसके लिये स्कूलों के स्वास्थ्य निरीक्षक व शैक्षिक प्रचार के भी कार्य किये जाते हैं। गांव के नौजवान आदमी सफाई और रोग निवारण के काम भी करते हैं। ऐसे कार्यों में बदबूदार गड्ढों को पाटना, ट्यूब वैल खोदना, सड़कें और नालियाँ बनाना, जच्चा व बच्चा की देखभाल का काम करना इत्यादि इत्यादि सम्मिलित हैं।

इस आन्दोलन के पीछे जो विचार कम काम करता है वह यह है कि डाक्टर को गाँव के समाज का उत्तरदायित्व सौंप दिया जावे। इसलिये उसे हर सदस्य के स्वास्थ्य का लेखा (रिकार्ड) रखना पड़ता है और समय-समय पर उन्हें परामर्श भी देना पड़ता है। चूंकि उसका वेतन निश्चित होता है, रोगियों की संख्या पर निर्भर नहीं करता, और बीमार लोग ही उसे नौकरी देने वाले होते हैं, इसलिए उसको रोगों में दिलचस्पी न होकर लोगों की भलाई में होती है। इस प्रकार स्वास्थ्य और सफाई का सारा कार्य एक ही संगठन के हाथों में सौंप दिया जाता है।

एक स्वास्थ्य केन्द्र (हैल्थ यूनिट) के वार्षिक आय-व्यय ब्योरे का खाका (युद्ध से पूर्व) इस प्रकार है:

(अ) एक बार होने वाला व्यय

	रुपये
दवाघर व स्टाफ़ के क्वार्टरों का मूल्य	६००
फर्नीचर	६०
एक सायकिल	४०
दफ्तर का सामान	५०
पहली बार लाई गई औषधियों एवं चीरफाड़ के औज़ारों का मूल्य	२००
	१०००

(ब) बार बार होने वाला वार्षिक व्यय

आय प्रति वर्ष		व्यय प्रति वर्ष	
१५० सदस्यों से पूरा चन्दा देने वाले ४ रु० प्रति सदस्य	रु० ६००	डाक्टर का वेतन ५० × १२	रु० ६००
१०० आधा चन्दा देने वाले सदस्यों से २ रु० प्रति सदस्य	रु० २००	कम्पाउंडर का वेतन १५ × १२	रु० १८०
बुलाने; इंजेक्शन लगाने की फीस	रु० २००	स्वास्थ्य संघ को चंदा	१५०
		नौकर व मेहतर ५ × १२	रु० ६०
		आवश्यक	रु० १०
कुल	रु० १०००	कुल	रु० १०००

नोट :—दवाई की क़ीमत इसमें सम्मिलित नहीं है क्योंकि यह आशा की जाती थी कि एक आना प्रति बोतल लेने से दवाई का मूल्य निकल आवेगा।

सफलता :

अगस्त १९३६ से जुलाई १९३७ के बीच ७ स्वास्थ्य सहकारी सिमितयों में १५,५४८ बार रोगी आये और समिति के डाक्टर सदस्यों के घर २००७ बार गए। स्वास्थ्य संघ (हैल्थ यूनियन) द्वारा एक केन्द्रीय प्रयोगशाला भी शुरू की गई। प्रत्येक समिति में सदस्यों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रही है और सम्बन्धित गांवों की ४० प्रतिशत जनता इससे लाभ उठाने लगी है।

आरम्भ :

मलेरिया निरोधक सहकारी आन्दोलन ऊपर से नीचे की ओर आरम्भ हुआ। मलेरिया जो प्रान्त में कुल होने वाली मृत्युओं में एक चौथाई के लिये ज़िम्मेवार था, उससे लड़ने के लिए १६१२ में मलेरिया निरोधक लीग की स्थापना की गई।

सहकारिता पर आधारित प्रथम ग्राम मलेरिया विरोधी समिति के केन्द्र की स्थापना १६१४ में हुई। मलेरिया विरोधी लीग को सहकारिता के लिये केन्द्रीय समिति में परिणित कर दिया और उसका नाम केन्द्रीय सहकारी मलेरिया विरोधक समिति लि० (सेंट्रल कोआ-परेटिव एंटी मलेरिया सोसाइटी लिमिटेड) रख दिया।

रचना :

यह समिति कोई फेडरेशन (संघ) नहीं हैं, बल्कि ग़ैर सहकारी ढंग की एक एजेंसी है। इसके सदस्य ६ रुपया वार्षिक चंदा देते हैं। उनमें से बहुतसों ने जिनमें बहुत से डाक्टर हैं समिति को ५०० रु० से १००० रु० की भेंट भी दी है। यह सरकार और स्थानीय संस्थाओं से भी सहायता (ग्रान्ट) ले सकती है। इसके उद्देश्य स्थानीय मलेरिया विरोधक सहकारी समितियों को संयोजित करना व आर्थिक सहायता देना, थोक से दवाइयों व अन्य वस्तुयें खरीदना, निरीक्षण करना व राय देना है। छोटे-छोटे ज़िले के संघ बनाने गये हैं, जिसमें हरएक में ४, ५ स्थानीय समितियां हैं।

स्थानीय समितियों की कार्यवाहियां :

एस० एस० तालामकी ने उनका वर्णन निम्नांकित रूप से किया है:—

"गांव की मलेरिया विरोधी कार्य करने वाली समिति को इसके सदस्य ४ आने से लगा कर १ रु० प्रति माह तक देते हैं। (प्रत्येक समिति को स्थानीय सरकार (लोकल बोर्ड द्वारा कुछ आर्थिक सहायता मिल जाती है।) इनके ज़िम्मे काम में गांव की सीमा तक के जंगल काटना, गड्ढे भरना, तालाबों को साफ करना, मकानों के चारों ओर सफाई रखना व कुनैन बांटना आदि हैं। सारा काम सेक्रेटरी की निग-रानी में होता है। प्रत्येक समिति एक डाक्टर रखने का प्रयास करती है

और वह सदस्यों के कुटुम्ब वालों की मुफ्त चिकित्सा करता है। केन्द्रीय समिति (संट्रल सोसायटी) के पास एक त्रैमासिक रिपोर्ट भेजी जाती है जिसमें व्यय का हिसाब और कितना काम किया गया इसका लेखा भेजा जाता है। कुछ गावों में एक छोटा सा चिकित्सालय भी (डिसपेन्सरी) शुरू कर दिया गया है। स्थानीय डाक्टर मुफ्त में इसमें दो तीन घंटे के लिये आता है। बहुधा तिल्ली की गणना भी, यह देखने के लिये कि कुछ सुधार हो रहा है या नहीं, की जाती है। मलेरिया के अलावा समितियां काला आज़ार व हैज़ा इत्यादि जैसी भयंकर बीमारियों से रोकथाम करने व ठीक करने के उपाय काम में लाती हैं। कुछ समितियों ने टयूब वैल खुदवा कर स्थानीय जल की व्यवस्था भी सुधारने का काम कर लिया है। समिति की सफलता स्थानीय कार्यकर्ताओं पर ही निर्भर नहीं करती वरन् डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट के स्वास्थ्य अधिकारियों की दिलचस्पी पर भी निर्भर करती है। इस प्रकार स्वयं की मदद से बंगाल के बहुत से गांवों की सबसे कठिन समस्या, स्वास्थ्य और सफाई का आंशिक हल हो गया है और यह उदाहरण अन्य प्रान्त वालों के लिये अनुकरणीय बन गया है।"

पानी सड़ने व उसके मार्ग में दल-दल की परते हटाने के लिये उन्होंने ढकी नालियां बनाई, ढकी नालियों को उखाड़ कर सुधरवाया, नालियों के ठीक बहने के प्रवाह में आई हुई अड़चनों, जैसे बिना योजना के बनाये बांध, मछली पकड़ने के घाट इत्यादि को हटा कर धीरे-धीरे इन लोगों ने सिंचाई विभाग के साथ सहयोग करके, नदी का प्रवाह अपने नियत मार्ग पर रखने के कार्य और सिंचाई के कार्य में भी हाथ बटाया है।

बंगाल कोआपरेटिव होमक्रोफ्टर एसोसियेशन :

इस एसोसिएशन का जन्म देने का विचार मलेरिया विरोधी समिति के सदस्यों से मिला। यदि साफ किये जंगलों के स्थान पर कृषि का ठीक विकास न किया जावे तो बार-बार जंगलों को काटना बहुत कीमती पड़ जाता है। इस प्रकार के स्थानों में यदि कृषि कार्य आरम्भ कर दिया जावे तो यह न केवल मलेरिया व धन नष्ट होने से ही बचावेगा वरन् गांव वालों के स्वयं के उपभोग के लिये और बेचने के लिये ताज़ी सब्ज़ियां भी दे सकेगा।

इस एसोसिएशन की स्थापना १६२७ में हुई और मलेरिया विरोधी सहकारी आन्दोलन के सहयोगी के रूप में इसका संयोजन हुआ। यह मलेरिया विरोधी सहकारी समितियां उनके सदस्य, तथा उन समितियों व व्यक्तियों के लिये खुली हैं जो कृषि में दिलचस्पी लेते हैं।

इसका उद्देश्य, विशेष रूप से मध्यवर्गीय लोगों को इस बात के लिये प्रेरित करना है कि वे अपने फालतू समय में, अपनी ही ज़मीन पर अपनी ज़िम्मेदारी से छोटे-छोटे रसोईघर से लगे हुए बाग़ बना लें। इस एसोसिएशन के पास एक सूचना केन्द्र भी है जो इसके सदस्यों को आपस में अपने अनुभव आदान-प्रदान करने में सहायता करता है। यह उन लोगों को एक दूसरे से अच्छे बीज और औज़ार बदलने में, खाद को प्राप्त करने में और अतिरिक्त उपज को बेचने में भी सहायता करता है। १६३० में इस एसोसिएशन ने कलकत्ते के म्यूनिसिपल बाज़ार में इन पैदा की हुई चीज़ों को बेचने के लिए एक स्टाल (दुकान) भी खोला है।

कुछ आंकड़े :

मलेरिया विरोधी सहकारी समितियों की संख्या १६१७ से १६२० में २ से बढ़ कर १६ हो गई। क्रमशः यह १६२३ में ८५, १६२४ में ३८४ तथा १६४० में अपने २१७२८ सदस्यों के साथ १०५८ हो गई।

औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान

शंघाई में एक सहकारी औद्योगिक स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र

समस्या :

शंघाई में ऐसे छोटे कारखाने बहुत हैं जहां ५ से ५० तक मज़दूर काम करते हैं, जिन लोगों के बार-बार बीमार पड़ने के कारण एक विशेष समस्या उत्पन्न हो गई है। चूंकि ये कारखाने छोटे हैं इसलिये सारे दिन काम करने वाले डाक्टर और नर्स को रखना तो इनके बस से बाहर की बात है अतएव जान यूई के मस्तिष्क में यह विचार आया कि सब लोग मिलकर एक क्लिनिक (चिकित्सालय) स्थापित कर सकते हैं, जिसमें वे अपने मज़दूरों के अनुपात से पैसा दे दिया करें।

सहकारी औद्योगिक क्लिनिक (चिकित्सालय) :

उसके (डाक्टर जान यूई) के प्रयास को धन्य है कि जिसने बिना सरकारी अफसरों की सहायता के अप्रैल १९४२ में सात कोयले की फैक्टरियों के ५०० मज़दूरों में पहली सहकारी औद्योगिक चिकित्सालय (क्लिनिक) खोला। यह चलता फिरता हुआ चिकित्सालय था जिसमें कि एक नर्स काम करती थी और जिसे प्रतिदिन फैक्टिरियों का निरीक्षण करने को भेजा जाता था।

३ महीने उपरान्त ३२ फैक्टरियों ने मिलकर, जिसमें २००० मज़दूर काम करते थे, दूसरा चिकित्सालय (क्लिनिक) खोल दिया। इसमें एक डाक्टर और दो नर्स काम करते थे और जो चिकित्सालय का काम करने के अलावा नियमित रूप से फैक्टरियों में जाकर दवा का भी काम करते थे।

१९४३ के जनवरी माह में ५७ फैक्टरियों ने मिलकर जिनमें १३२० मज़दूर काम करते थे तीसरा चिकित्सालय (क्लिनिक) खोल दिया इसमें एक डाक्टर और एक नर्स काम करते थे।

सहकारी औद्योगिक स्वास्थ्य रक्षा केन्द्र :

१९४३ के आरम्भ में तीनों चिकित्सालयों की देखभाल व आर्थिक सहायता देने के लिये शंघाई सहकारी औद्योगिक स्वास्थ्य केन्द्र (शंघाई कोऑपरेटिव इण्डस्ट्रियल हाइजिन सैंटर) नाम की केन्द्रीय संस्था स्थापित की गई। सदस्यता फीस जो मालिक को देनी पड़ती है हर जगह एक है, इसमें मुफ्त सलाह मशविरा, चीर फाड़ पट्टी करना, साधारण से ऑपरेशन व साधारण दवाइयां भी आ जाती हैं।

१९४३ से सदस्य फैक्टरियों की संख्या बढ़कर १९४६ में ४७६ तक पहुँच गई। मज़दूरों की संख्या १०,००० हो गई।

अक्तूबर १९४३ में एक सहकारी औद्योगिक अस्पताल क़ायम किया गया जिसमें सब साधनों से पूर्ण एक ऑपरेशन का कमरा व १५ चारपाइयों का एक वार्ड था। जून १९४४ में दो और नये वार्ड बनाये गये।

चिकित्सालय (क्लिनिकल) के काम के अलावा यह केन्द्र नाटकों फिल्मों, प्रदर्शिनियों और प्रतियोगिताओं द्वारा स्वास्थ्य बढ़ाने के

कार्यक्रम भी चलाता है जिसमें सफाई निरीक्षण, भोजन की निगरानी, शरीर की जांच तथा स्वास्थ्य शिक्षा मिलती है। एक प्राथमिक सहायता प्रशिक्षण क्लास भी चलाई जा रही है। १९४५ से "इण्डस्ट्रियल हाइजिन" नाम की एक द्विभाषिक पत्रिका भी निरन्तर प्रकाशित होती है।

परिणाम :

यद्यपि इन प्रयोगों के बिल्कुल ठीक-ठीक परिणामों को आंकना तो सम्भव नहीं है, परन्तु फिर भी शंघाई के सारे मजदूरों में बीमार पड़ने की दर घटती चली गई है। बीमारी की दर १९४२ में २३.३६ प्रतिशत थी, १९४३ में १७.८७ प्रतिशत, १९४४ में १२.१२ प्रतिशत तथा १९४५ में ५.८३ प्रतिशत रही।

कुछ अन्य देशों में स्वास्थ्य समितियां :

सहकारिता के आधार पर स्वास्थ्य सेवायें, डाक्टरी निगरानी और कभी-कभी अस्पताल के इलाज का संयोजन बहुत से देशों में शुरू हो गया है और खासतौर पर अमरीका, एशिया और यूरोप में। विशेष रूप से औद्योगिक और शहरी केन्द्रों में कभी-कभी यह वहां की पहले मौजूद सहकारी संस्थाओं से अपना सम्बन्ध बनाये रही (मुख्य रूप से उपभोक्ता सहकारी समिति और बीमा समिति) अथवा इन संस्थाओं की विशेष शाखा की तरह काम करती रही या कारपोरेशन के रूप में और कभी-कभी पूर्ण स्वतन्त्र संस्था की तरह भी काम करती रही।

कनाडा :

जो एसोसियेशन मनीटोबा के गेहूँ उत्पादक समिति से सम्बन्धित है वे अपनी अतिरिक्त निधि (फंड) (१९४४-४५ में यह २० प्रतिशत थी) में से कुछ धन प्रान्त के स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिये देते हैं।

वे ग्रुप अस्पतालों की सहकारी समितियां (हॉस्पिटल कोआपरेटिव) बनाने में भी सहायता करते हैं, १९४५-४६ में इनकी संख्या गांव के ज़िलों में २.७१ तक पहुंच गई। सदस्यों की संख्या १४,२९१ कुटुम्ब थी (यानी ५१.४०१ प्राणी भाग लेने वाले थे।)

ओनटेरियो के क्रेडिट कोऑपरेटिव (ऋणदाता संघ) और मेरी टाइम ज़िले के कुछ उपभोक्ताओं की सहकारी समितियों ने भी इस प्रकार की बहुत सी चिकित्सा सेवाओं का संगठन किया है।

क्यूबा :

४० चिकित्सा सहकारी समिति (मैडिकल कोऑपरेटिव) अपने सदस्यों का रोगों व दांतों के उपचार का प्रबन्ध करती हैं। उनमें से कुछ स्कूल, पुस्तकालय, क्लब इत्यादि भी संगठित करती हैं।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका :

मुख्य रूप से डाक्टर माइकेल शडीई की प्रेरणा पर जिन्होंने १९३१ में एल्क में पहले सहकारी अस्पताल की नींव रखी थी, बहुत से चिकित्सा सहकारी समिति (मैडिकल कोऑपरेटिव) और स्वास्थ्य समुदायों का निर्माण हो गया है। १९४७ में इन समुदायों ने ६,००,००० मनुष्यों से भी अधिक को विशेषज्ञ डाक्टरों द्वारा उपचार की सहायता दी, इनमें से कुछ समितियां तो अस्पताल भी चलाया करती थीं।

१९४७ के आरम्भ में ६ सहकारी अस्पताल उचित रूप से चल ही रहे थे और ४० नये बनाये जा रहे थे। अगस्त १९४६ में उनमें से २४ ने मिलकर अमेरिका का सहकारी स्वास्थ्य संघ (कोऑपरेटिव हैल्थ फेडरेशन ऑफ अमेरिका) बना लिया।

एशिया :

एशिया की स्वास्थ्य समितियां अपेक्षाकृत साधारण स्तर की हैं पर अपनी विभिन्न कार्यवाहियों में वे यूगोस्लाविया की स्वास्थ्य समितियों से मिलती जुलती हैं।

चीन :

चीन की औद्योगिक सहकारी समिति (चाइनीज़ इन्डस्ट्रियल कोऑपरेटिव) और कुछ ग्राम ऋणदाता समितियां अपने ज़िलों के निवासियों के स्वास्थ्य और आर्थिक विकास में लगी हुई हैं। इसके लिए गांव की सफाई की हालत सुधारना, स्नानगृहों की व्यवस्था करना, चिकित्सा और शल्य क्रिया का प्रबन्ध करना, टीके लगवाना इत्यादि का काम कर रही हैं।

भारत :

बंगाल में कुछ मलेरिया विरोध समितियों के होने के अतिरिक्त उसी प्रान्त में, पंजाब व मद्रास आदि में भी कुछ स्वास्थ्य

सहकारी समितियां हैं। बहुत से प्रान्तों में और विशेष कर पंजाब व संयुक्त प्रान्त में अधिक उत्तम रहन सहन की समिति (बैटर लिविंग सोसाइटीज़) स्वास्थ्य समितियों के भी कुछ काम करती हैं।

जापान :

१९३६ के अन्त में ७६५ सहकारी समितियों ने चिकित्सा की सहायता की, तथा साथ ही साथ आर्थिक कार्य (ऋण खरीदना, बेचना इत्यादि) भी किए। उनकी सदस्य संख्या ४६७,७३२ थी।

यूरोप :

महायुद्ध से पूर्व पोलैंड में यूगोस्लाविया के नमूने पर बनी हुई दो दर्जन के लगभग स्वास्थ्य समितियां थीं।

इन समितियों के जन्म से पूर्व उपभोक्ता समितियों ने ट्रेड यूनियन म्युचुअल इन्श्योरेन्स सोसाइटीज़ व कुछ बड़े फार्म सहकारी समितियों (कोऑपरेटिव्ज़) के साथ मिलकर उन देशों में जहां सहकारी आन्दोलन पहले उत्पन्न हुआ था, लोगों के स्वास्थ्य सुधार य स्वास्थ्य रक्षा के लिए ऐसी संस्थाओं, चिकित्सा देने वाली समितियों का जाल सा बिछाने में सहायता दी। इन्होंने अपने सदस्यों को स्वास्थ्य शिक्षा दी, कभी कभी परामर्श केन्द्र स्थापित किये, रेडियो ग्राफिक सेवायें, सेनीटोरियम इत्यादि भी बनवाये।

छठा अध्याय

रीति रिवाजों के सुधार के लिए सहकारी समितियाँ

जीवन सुधार, कृषि सुधार व समझौता कराने वाली सहकारी समितियां :

कर्ज़दारी, निर्धनता और पिछड़ेपन के मुख्य कारण या तो उत्सवों पर फ़िजूल ख़र्ची हो या रहने के ढंग या स्वास्थ्य विज्ञान की कमी या कृषि करने के अकुशल ढंग या छोटे छोटे मुकदमे बाज़ी इत्यादि हैं।

सर्व विदित कठिनाईयों के सम्मुख बेचारे सुधार भी असमर्थ हो उठते हैं। लेकिन प्रायः जैसा देखा गया है कि वह नवीनता जो किसी आदमी के साथ नवीनता रहती है जब बहुत से मनुष्यों द्वारा अपनाली जाती है तो नवीनता नहीं रह जाती। इसीलिए एशिया और अफ्रीका में इन समितियों की स्थापना अधिकतर उपर्युक्त बुराइयों से लोहा लेने के लिए ही की गई है। उनका उद्देश्य सामान्य प्रकार से जीवन सुधार या सीमित कृषि सुधार समितियां, अथवा समझौता कराने वाली समितियों के प्रकार का हो सकता है।

रीति से जीवन सुधार समितियाँ :

अपने सामान्य रूप में ये समितियां विशेष रूप से भारत में बढ़ी हैं। भारत में भी विशेष कर पंजाब, संयुक्त प्रदेश, बंगाल इत्यादि में।

इनका उद्देश्य जैसा कि आदर्श उपनियमों में वर्णन किया गया है, सदस्यों के आर्थिक हितों की वृद्धि करना है और विशेष रूप से—

१. सदस्यों में प्रचलित बुरी प्रथाओं को रोकना।

२. सदस्यों की शारीरिक, चारित्रिक, आत्मिक मनोदशा का सुधार करना।

३. फ़िज़ूल ख़र्ची की आदत हटाकर मितव्ययता की आदत डालना।

४. भयंकर रोगों से बचने के लिए स्वास्थ्य विज्ञान की शिक्षा देना तथा अमल में लेना।

५. स्वाभिमान की आदत डालना और चरित्र हीनता का विरोध करना।

६. सदस्यों व उनके बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध करना, तथा खेल कूद अन्य लाभदायक कामों का आयोजन करना जो एक समाज को अधिक सुखी व उदार बनाते हैं।

७. सदस्यों में मितव्ययता की भावना व आदत डालना। पारस्परिक सहायता व स्वयं सेवा की आदत डालने में जो तरीके लाभदायक हैं उन्हें अपनाना।

वे अपनी उद्देश्य पूर्ति के लिए पुरानी सामाजिक प्रथाओं की जगह नई प्रथाओं को आरम्भ करना चाहती हैं। प्रत्येक सदस्य सामान्य अधिवेशन द्वारा स्वीकार किये गये नियमों को मानने की प्रतिज्ञा करता है, जो इन्हीं से सम्बन्धित है जैसे विवाह में आतिशबाज़ी व वैश्याओं के नाच गाने बन्द करना, दावत में सीमित आदमियों को बुलाना, अधिकतम ज़ेवरों की सूची जो एक पति या उसका पिता अपनी पुत्रवधू को दे सकता है इत्यादि। सामान्य अधिवेशन के निर्णय व्यक्तिगत या सामूहिक स्वास्थ्य, सफाई और टीके के सम्बन्ध में भी हो सकते हैं। वे शिक्षा को भी प्रोत्साहन देने का उद्देश्य इसमें शामिल कर सकते हैं। सदस्य लोग अपने बच्चों को स्कूल में भेजने की शपथ ले लेते हैं, या कभी-कभी समिति एक अध्यापक को नियुक्त कर लेती है व स्कूल की इमारत भी बनवा देती है (जीवन सुधार) समितियां बेरोज़गार आदमी को रोज़गार दिलाने के ढंग सोच निकालती हैं या कुटीर धन्धों को उन्नत करने के ढंग निकाल लेती हैं। उस सदस्य पर जो वचन निर्वाह नहीं कर पाता सहकारी समिति की कमेटी जुर्माना कर देती है।

इस ढंग को अपनाने के जो परिणाम हुए उनके लिए इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि पंजाब की एक जीवन सुधार समिति ने लड़के के लिए शादी के खर्च को ५०० रुपयों से घटाकर ६० रुपये कर दिया।

कृषि सुधार सहकारी समितियाँ :

ये समितियां चुने हुए बीजों के वितरण व प्रचार के लिए, अच्छे औज़ारों के लिए तथा कृषि करने के अच्छे ढंगों का प्रदर्शन करने के लिए वही उपाय काम में लेती हैं।

समझौता कराने वाली समितियां :

प्रत्येक प्रकार के दीवानी मुकद्दमों के लिए इसके सदस्य अपने आप को वचन वद्ध कर लेते हैं कि कोई भी झगड़ा जो उसमें उसके साथी सदस्य हो जावेगा तो यातो उसकी समिति की निर्वाचित कमेटी के या इसके द्वारा नियुक्त सदस्यों द्वारा वह झगड़ा फैसला कर दिया जावेगा और वह उसे मान्य होगा। कोई भी सदस्य जो उपनियमों की अवहेलना करके बिना झगड़ा निपटाने वाली कमेटी के पास गये सीधा कचहरी चला जावेगा तो उसके ऊपर समिति जुर्माना कर देगी और वह उसे देना पड़ेगा।

शराब बन्दी में सहकारिता

मद्रास का एक उदाहरण :

भारत के अन्य प्रान्तों की तरह मद्रास में भी शराब बन्दी शुरू की गई है वहां उसे सहकारी आन्दोलन की ओर से पूरी सहायता व बल मिला है। यह सहायता उन्होंने लोगोंमें मितव्ययता का प्रचार करके तथा टोड़ी (कुछ वृक्षों का सड़ाया हुआ रस) पीने वाले व बनाने वालों के लिए कुछ दूसरे काम ढूंढ कर की है। इस संबंध में यह ध्यान रखने की बात है कि शराब बन्दीके डिप्टी कमिश्नर महोदय सहकारी विभाग के ज्वांइट रजिस्ट्रार भी हैं।

जनवरी १६४८ के अन्त तक जिन ज़िलों में शराब बन्दी शुरू की थी वहां से १८१,००० रुपया बचा कर मितव्ययता समिति में जमा कर दिया गया। १०,००० के लगभग अनोपचारिक "ग्राम संगम" का निर्माण हुआ। जो स्कूल की इमारत बनाने, कुएं व खाद के गडढे

खोदने, सड़कें साफ करने व समाज संगीत तक के मिश्रित कार्यों के लिए संगठित किए गए थे।

किन्तु सम्भव है सहकारिता का सब से अधिक लाभदायक प्रभाव टोड़ी बनाने वाले आदमियों को रोज़गार में लगाने में हुआ है। कुछ स्थानों में टोड़ी निकालने वालों को तात्कालिक सहायता पहुं-चाने के लिए उन लोगों को पाम और नारियल से मीठा रस निकालने की आज्ञा मिल गई है, तथा उन्हें गुड़ बनाने के लिए सहकारी समितियों में संगठित कर दिया है।

कुल मिलाकर इस समय २८,००० सदस्यों की २६५ ऐसी समि-तियां संगठित की गई हैं जिन्होंने अब तक १० लाख के लगभग रुपया कमाया है और अन्य स्थानों में जो शहर के समीप हैं दूध देने वाली समितियां तथा उनके संघों का भी निर्माण किया गया है।

कुछ स्थानों पर शराब पीने वाले लोगों को संगठित करके गांव की विविध दस्तकारियों में लगा दिया गया है जैसे बढ़ईगीरी, चमड़े का काम, चटाई बुनना, टोकरियों बनाना इत्यादि। इसी प्रकार शराब बनाने वाले आदमियों की समितियां बना दी गई हैं जो स्थानीय कच्चे सामान से खास तौर पर ताड़ के रेशों से विभिन्न वस्तुयें तैयार कर सकें। स्त्रियों को भी यह समझाने का प्रयास किया जा रहा है कि मित-व्यता कितनी आवश्यक है और कुटीर उद्योग कितने लाभदायक हैं।

मांडला जिले में पिछड़ी हुई जातियों का पुनर्वास मध्यप्रदेश, (भारत)

समस्या :

मध्यप्रदेश के गौंड लोग जिनकी संख्या ३०,००,००० के लगभग हैं पिछड़ी हुई उन जातियों में से हैं जो जंगलों में बहुत पुराने तरीकों से रहते हैं। इनकी समस्या यह है कि उनका शैक्षिक, आर्थिक, शारीरिक, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास करके उन्हें सभ्यता के समीप लाया जावे।

वर्षों से ईसाई मिशन इस विशाल समस्या के समाधान में लगे हुए हैं। इसके अतिरिक्त गौंड सेवक संघ व एक हिन्दु सहकारी संस्था भी जिसकी स्थापना १९४४ में हुई, शिक्षा विभाग तथा सहकारी एवं ग्रामोद्योग विभाग के साथ मिल कर इस दिशा में कार्य कर रही हैं।

समस्या के हल करने के मुख्य तरीके :

इसे हल करने के कार्यक्रम को संक्षेप में तीन शब्दों द्वारा प्रकट कर सकते हैं शिक्षा, स्वास्थ, सहकारिता।

पिछड़े हुए क्षेत्र के अन्दर कुछ प्राइमरी व मिडिल स्कूल खोले गए हैं। चूंकि इन स्कूलों में आने वाले लड़के और लड़कियां बहुत दूर रहते हैं इसलिए कुछ स्कूलों में जलपान गृह व विश्राम गृह की भी व्यवस्था है।

वैसे पढ़ाई इनमें भी उसी प्रकार की होती है जैसे अन्य स्कूलों में पर इसके अतिरिक्त इनमें औद्योगिक व कृषि प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) का भी प्रबन्ध है।

इनमें बढ़ईगीरी, कातना, रस्से बनाना, खिलौने बनाना, टोकरियां बनाना, बाग़बानी आदि मुख्य हैं। मद्य निषेध, सहकारिता, सफाई तथा प्रौढ़ शिक्षा के लिये भी प्रचार किया जाता है और आदिवासियों में लोकप्रिय 'कर्म' गीत तथा 'शैलेस' नृत्य इस विचार में सहायक होते हैं :

'भारत पीपिल्स मैडिकल सर्विस' नामक संस्था हैदराबाद में तैयार की हुई दवाइयां स्कूलों में निःशुल्क वितरण के लिये दी जाती हैं। एक रिपोर्ट हाल ही में छपी है जिसके आधार पर मार्च १९४७ तक २५०० से भी अधिक मां-बाप इससे लाभ उठा चुके हैं।

सहकारिता :

आदिवासियों की घरेलू और कृषि की वस्तुओं (अच्छे बीज, खाद, औज़ार इत्यादि) देने तथा उनको अधिक सुविधा देने और उनकी पैदा की हुई चीज़ों के लिये उचित मूल्य देने के लिये एक सहकारी विकास योजना तैयार की गई है।

इस कार्य की पूर्ति के लिये प्रान्त को दस ज़िलों में विभक्त किया गया है और प्रत्येक में एक जिला संगठनकर्ता होता है।

मांडला ज़िले में, जहां मार्च १९४८ के अन्त तक ५० बहुद्देशीय सहकारी समितियां स्थापित करने का विचार था, १९४७ के शरद् तक ही ४० बहुद्देशीय सहकारी समितियां स्थापित कर दी गई थीं।

पिछड़े हुये इलाकों में सहकारी समितियों के अधिकांश सदस्य आदिवासी लोग ही होते हैं। हां, उस इलाके के बाहर उसकी सीमा पर अवश्य कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो आदिवासी नहीं हैं।

यहां अधिकांश सहकारी समितियां सहकारी व ग्राम विकास विभाग के अमले के निकट सम्पर्क में रहकर काम करती हैं। इन इलाकों के अन्दर बनी हुई कुछ समितियों का प्रबन्ध ये आदिवासी लोग ही करते हैं। कहा जाता है कि उनका प्रबन्ध सर्वोत्तम है।

मांडला ज़िला सहकारी कृषि संघ का काम इन बहुद्देशीय सहकारी समितियों को चीजें देना तथा उनके लिये मंडी का काम करना है।

उन लोगों के जीवन को आवश्यक वस्तुएं देने के अलावा ये अपने सदस्यों की वस्तुएं (घी और हरड़ जंगल में मिलने वाली वस्तुएं) मंडी में बेचने में भी सहायता करती है। हरड़, जो चमड़ा रंगने के काम में बहुत आवश्यक वस्तु है, मंडी में भेजी जाने वाली वस्तुओं में प्रमुख है। पहले यह व्यापार केवल कुछ बड़े-बड़े सौदागर लोगों के हाथ में ही था, वे इन आदिवासियों का शोषण किया करते थे, किन्तु अब स्वयं आदिवासी यह काम अपने ही हाथ में रखते हैं।

समितियां मूल्य नियंत्रण करने वाली वस्तुयें (चीनी, सूत, लोहा, नमक इत्यादि) उनको देती हैं इसको तीन साल के लिये हरड़ का ठेका (लीज़) भी दे दिया गया है।

सरकारी सहायता :

प्रान्तीय सरकार उन लोगों को अमला (एक संयोजक, ५० के लगभग सहकारी समितियों के प्रबन्धक, प्राइमरी और मिडिल स्कूलों के लिये अध्यापक) देकर व ज़िला सहकारी कृषि संघ को संस्थापन कार्य के आरम्भिक दिनों में आर्थिक सहायता देकर तथा ट्रक खरीदने व एक स्टोर खेलने के लिये कर्ज़ देकर इन लोगों की शैक्षिक और सहकारी योजना को बढ़ाती है।

श्रीलंका के एक गांव का पुनर्वास :

निम्नांकित सूचना जी. डे. सोयेजा द्वारा लिखित 'एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट ऑन दी वर्किंग ऑफ कोऑपरेटिव सोसाइटीज़' १६४६ नामक पुस्तक से लिया गया है।

"थोड़े दिन पहले तक ही, यह गांव अपराध की सृष्टि में अग्रणी समझा जाता था और बदनामी में इसे बेजोड़ देखकर मैं इसका वास्तविक नाम न देकर एक काल्पनिक नाम 'कोहेडा' लिखकर संबोधित कर रहा हूं। दो वर्ष पूर्व जब कोहेडा के आसपास सहकारिता फैल चुकी थी, कोहेडा ग्राम सहकारिता के नाम से भी अपरिचित था उस समय इस विभाग सहकारी के एक हठ-निश्चयी नवयुवक अफसर ने इसे अपने हाथ में लिया और इसके साथ ही इसमें नवजीवनीकरण आरम्भ हो गया जिसका वर्णन डिवीज़न के सहकारी रजिस्ट्रार ने किया है। कोहेडा की समितियों की सहायता केवल बहुत अच्छे चरित्र व आदतों वाले आदमियों को ही प्राप्त हो सकती थी। अतः इस क्षेत्र के गांव वालों की दृष्टि में इसकी सदस्यता का महत्व सबसे बड़े सम्मान की वस्तु हो गई और आज कोहेडा की ऋण और मितव्ययता समितियों गर्व के साथ अपने ५०० सदस्यों की ओर देख सकती हैं। स्त्रियों की मितव्ययता समितियों के अन्दर बचाया हुआ धन १८,००० रु० से भी अधिक है। मार्च १९४५ में एक प्रचार करने के लिये की गई एक मीटिंग में एक स्थानीय अधिकारी ए० एस० पी० ने जनता के बीच बड़े गर्व से कहा था कि वह क्षेत्र, जो अपराध, जूये, शराबख़ोरी, पशु चुराने, फल चुराने, शराब बनाने व तलवारों के दांव पेंच दिखाने के रूप में फल रहा था, अब शांत और अपराध हीन स्थल हो गया है। यह सत्य ही कहा जा सकता है कि कोहेडा के सामाजिक और आर्थिक विकास में सहकारिता ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है।"

सातवां अध्याय

सहकारी शिक्षा और नेताओं का प्रशिक्षण

समस्या का सामान्य रूप :

चूंकि सहकारी समितियां व्यापारिक प्रयास होने के साथ-साथ सामाजिक सुधार के भी अङ्ग हैं अतः उनका मूल्यांकन उनके सदस्यों, नेताओं और प्रबंधक अमले के सदस्यों से ही किया जा सकेगा।

इसलिए सबसे आवश्यक और महत्वपूर्ण बात सहकारी समितियों की स्थापना करना नहीं है वरन सहकारी समिति में काम करने वालों को प्रशिक्षित करना है : इसका आशय यह है कि लोग सामान्य-कार्य करने की परिस्थितियों को समझने व उनके लाभों को समझने का प्रयास करें। यह आवश्यक है कि वे सहकारिता के सिद्धांतों के बारे में जानकारी रखते हों, जो कि सारे नैतिक सिद्धान्तों से ऊपर हैं। सहकारी संस्थाओं की गतिविधि, रूपरेखा और प्रबन्ध से पूर्ण परिचित हों, तथा अल्पकालिक और दीर्घकालिक उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से समझने के लिये जागरूक हों, और साथ ही साथ सहकारिता की आशाओं और सीमाओं से भी परिचित हों। इसके लिए शासन और कार्यकारिणी के सदस्यों में भी आवश्यक तकनीकी (टेकनीकल) योग्यता एवं ज्ञान का होना अनिवार्य है।

यह सच है कि रूस को अलग कर देने पर बचे हुए यूरोप में विश्व की एक तिहाई सहकारी समितियां और एक तिहाई से भी अधिक सदस्य हैं। यह कौन हम लोगों को आश्चर्य में डाल सकती है कि क्या ये विचारधारायें और विचार अन्य स्थानों की जनता के लिये भी उपलब्ध हैं या नहीं ? चाहे वे लोग औद्योगिक क्षेत्र में रहते हों या पिछड़े हुए गावों में।

इस प्रश्न का पहला उत्तर तो इसी बात से मिल जाता है कि जहां भी सहकारी समितियां स्थापित हुई हैं वे सब अधिकतर निर्धन जनता में ही हुई हैं। और यह बात केवल पश्चिम के सम्बन्ध में ही सही नहीं है। एशिया की ग्राम ऋणदाता सहकारी समितियों के विषय में हेनरी डब्ल्यू वूल्फ ने लिखा है साधारणतया हम यह देखते हैं कि जनता जितनी अधिक निर्धन होती है उतनी ही शीघ्र वह सहकारी समितियों के सिद्धान्त को समझ जाती है और उतनी ही शीघ्र ऋण की समितियां वहाँ बढ़ने लग जाती हैं। उसी प्रकार हाल ही में श्री लंका की सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार ने बताया है कि, अब धन के स्थान पर निर्धनता इसकी सदस्यता के लिए सबसे बड़ी सिफारिश है।

इससे भी अधिक पक्का और छोटा सा उत्तर अफ्रीका में गोल्ड कोस्ट, नाइजेरिया और तंग्यायिका की कृषक सहकारी समितियों से मिल जाता है। गोल्ड कोस्ट, नाइजेरिया व तंग्यायिका की कृषक सह-समितियां इतनी अधिक विकसित हो गई हैं कि उन्होंने अपने आप को संघबद्ध कर लिया है। एशिया में श्री लंका की ६००० समितियों में १० लाख सदस्य हैं, भारत की १,७५,००० समितियां जहां १ करोड़ सदस्य हैं, चीन की १,६०,००० समितियों में अब दो करोड़ से भी अधिक सदस्य हैं, फेडरटेड मलाया स्टेट्स, लगभग १००० समितियां और एक लाख सदस्य हैं तथा लियाइन भी १००० से अधिक समितियां हैं।

जे० एच० बायक ने कहा कि "सहकारिता के क्षेत्र में यह देखा गया है कि वास्तव में पश्चिम से भी अधिक सदूर पूर्व इसके स्वागत के लिए अधिक तैयार था। वहाँ की जातीय संस्थाओं तथा आदिवासी जनता में प्रचलित पारस्परिक सहयोग जहाँ लोग सिक्कों के उपयोग से भी परिचित नहीं हैं कि भावना के अनुरूप ही समितियां विकसित हुई।" जर्मनी में रेफेसिन और शूल्जडेलित्से के वर्षों के प्रचार व सारे बौद्धिक व चारित्रिक प्रयास के बाद ही उन गावों और कस्बों के आद-मियों को बड़ी कठिनाई से जीत पाया या जिन्हें व्यक्तिवादी विकास ने द्रोही और सामाजिक कार्यों के लिए अप्राध घोषित किया गया था।

इसी प्रकार मलय के राजसंघ के सहकारी विभाग के मुख्याधि-कारी ने लिखा है "हमारा सबसे बड़ा डर गति से भी अधिक तेज़ी से

बढ़ना है मौजूदा सहकारी समितियों के सदस्य प्रतिदिन अधिक उत्साही होते चले जा रहे हैं और हाल में रेवेरंड ए० विलन्ट (भूतपूर्व-प्रेसीडेन्ट ऑफ दी पार्टलैण्ड सोसायटी, (आस्ट्रेलिया) ने अनुभव किया है कि न्यूगिनी में पापुआ में लोगों में सहकारिता इतनी सुगम हो गई है जितना सांस लेना।"

इन बातों और स्पष्टीकरणों को जो अनुभव के फल हैं, सदेव ध्यान में रखना चाहिये और उनसे पाठ सीखना चाहिये। उन लोगों में सहकारिता का प्रचार करने के लिये जिनके जीवन पश्चिम के प्रभाव से अस्त व्यस्त हो गये हैं पर पूर्ण रूप से बदल नहीं पाये हैं उनकी प्रवृतिगत दृढ़ता और पारस्परिक सहायता करने की मनोवृत्ति को उपयोग में लेना चाहिये। यह दृढ़ता चाहे उन लोगों की एक दूसरे का पारस्परिक सहायता की आवश्यकता से हो या प्रथाओं के कारण दृढ़ हो गई हो, या वास्तव में काल्पनिक रक्त सम्बन्धों के कारण हो या पड़ौसी धर्म के कारण किन्तु यह बहुत सी सामूहिक संस्थाओं में जैसे निर्वाह (प्रोवीडेंट) ऋण पारस्परिक सहायता और अनेक अन्य संयुक्त कार्यों में स्पष्ट दिखाई देती है।

मुसलमानी देशों में "इकट्ठी की गई रसद" कुरान के आदेशों से स्थापित की गई है, और निर्धनों को खिलाने के काम में ली जाती हैं। दूसरी और भविष्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखने वाली एक दूसरी संस्था है (जैसे युद्ध, अकाल) जो "तिमेजागिदा" या तम्बूकाली मस्जिद" और इसकी सामूहिक पूंजी भी उस प्रकार की धार्मिक विचारधारा के कारण उत्पन्न हुई है और उसी प्रकार सहायता करने व ऋण देने का काम करती है।

इस सम्बन्ध की एक बड़ी दिलचस्प बात यह है कि मोराक्को के एटलस पर्वतों की "इगूदार" संस्था अब भी जहाँ कहीं है अपनी उसी शताब्दी पूर्व प्रथा को जिसमें साम्य और समता के मूल नियम है, अपनी सहकारी संस्थाओं के प्रबन्ध में काम में लेती है।

अफ्रीका में भूमध्य रेखा के समीप की कुछ "गुप्त" सोसाईटियां केवल पारस्परिक सहायता संस्थायें ही नहीं है वरन् पुराने ढंग की श्रम समितियां भी हैं (जंगल साफ करने के लिये, सड़कें बनाने के लिये, इत्यादि) इसी प्रकार इंडोनेशिया का जीवन पारस्परिक सहायता

की प्रवृत्ति और कर्तव्य से पूर्ण है (सम्बाटन, टोये लोग, मोने ओलायंग)।

चीन की 'होह हुई', जापान की 'मुजिव' और "होतो कुशा" तथा भारत की 'चित्तस' और 'कुरिस' (मालाबार समुद्रतट की) पश्चमी अफ्रीका की "एसस" की तरह पारस्परिक रूप से ऋण देने वाली समितियां ही हैं। सट्टे की आदत ने इनमें से कुछ को गिरा दिया है किन्तु यह "होतो कुशा" के बारे में नहीं कहा जा सकता जो रेफेसिन की सहकारी समितियों की तरह दृढ़ चारित्रिक सिद्धान्तों से पूर्ण है और अपनी प्रथाओं का पालन करती है तथा जिसने ऋण के कार्यों से भी आगे जन हितकारी कार्य जैसे शिक्षा और सामाजिक कार्यों में अपना पूर्ण सहयोग दिया है।

अन्त में, सब स्थानों में यही देखा गया है कि निर्धनतम वर्ग के लोग ही, (चाहे थोड़े समय के लिये ही मिलें) न केवल कुछ कृषि कार्य के लिये ही अपितु अन्य कार्यों के लिये भी व्यक्तिगत रूप से या समाज की तरफ से कुयें खोदने, सिंचाई की नहरें व बांध बनाने, मकान, मसजिद और आजकल तो स्कूल भी बनाने में सहयोग देते हैं।

कभी-कभी ऐसा होता है कि इनमें से कुछ ग्रुप नियतकालिक या स्थायी हो जाते हैं और बहुत सी बातों में श्रम सहकारी समितियों की तरह दिखाई देते हैं। जैसे कि पहले ही बताया जा चुका है यह बात, अफ्रीका की रहस्यपूर्ण समितियों के बारे में भी सही है। कभी-कभी यह बातें मेडागास्कर की "फौकोनोलोना" के बारे में भी सही उतरती है। भारत के बहुत से पत्थर बांटने वाले, मकान बनाने वाले और खान खोदने वालों के बारे भी यह सही है, और चीन में विशेष रूप से "होयेइ" में भी इसी प्रकार के दल हैं जो कोयले की खानों में काम करते हैं, या कागज़ बनाने के कारखाने या स्पात बनाने के कारखानों में काम करते हैं। इन उदाहरणों में इटली की ब्रेसीएन्टी तथा रूस की आरटेल संस्थाओं को जोड़ देना भी असंगत न होगा।

यह बात आज की सहकारी समितियों को लेकर भी देखी जा सकती हैं कि सामाजिक जीवन की, सामूहिक सम्पत्ति को, पारस्परिक सहायता की, व संयुक्त श्रम की प्राचीन परम्परायें ही आधुनिक सहकारी समितियों के स्थापन या निर्माण का आधार बन सकती हैं।

यह केवल संयोग मात्र नहीं है कि यूगोस्लाविया की सहकारी समितियां सविया "के" फैले हुये कुटुम्ब (ज़दुगा) नाम से सम्बोधित की जाती है। आलिथूनिया की "टाका" और मोराक्को की "दुइज़ा" एक ही प्रकार की संस्था है जिनका अर्थ है पारस्परिक श्रम दान जो स्वयं प्रेरित है, परम्परागत है और विश्व के समस्त ग्राम क्षेत्रों में पाया जाता है। (फसल काटने के लिये, अनाज निकालने के लिये, पशुओं के झुंडों की देख भाल करने के लिये)। लेकिन क्या यह संयोग की ही बात है कि आलिथूनिया की केन्द्रीय सहकारी समिति के मासिक पत्र (रिव्यू) का भी यही नाम हो? उसी प्रकार जापान की सबसे अधिक विस्तृत ऋणदाता समितियों के दल का भी महायुद्ध से पूर्व वही प्राचीन नाम "होतो कुशा" था।

सेवाश्र और फ्रेन्च जूरा की पनीर और दूध की सहकारी समितियों के नाम और मुख्य गुण उसी "प्रयुटीयरिस" जैसे हैं जो बारहवीं शताब्दी में थे।

अन्त में डेनमार्क की खेत सहकारी समिति जिन्होंने बिना विधि निर्माताओं की सहायता के ही लिये उच्च कोटि के और अच्छे नियम बनाये हैं। यह निसंदेह कहा जा सकता है कि इसके लिये उन्हें उन प्राचीन स्वतन्त्र ग्राम संस्थाओं के लिये बहुत कुछ कृतज्ञता ज़ाहिर करनी पड़ेगी जिनकी परम्परायें शनैः शनैः १८ वीं शताब्दी के अन्त तक लुप्त होना आरम्भ हो गई थी। स्वीडन में भी अपनाये गये रीति रिवाज़ों के लिये, 'रूरल क्म्यूनस ग्रामीण ज़िलों' का ही प्रभाव प्रमुख माना जाता है।

आधुनिक सहकारिता के विकसित रूप में और प्राचीन तथा परम्परागत पारस्परिक सहायता करने के रूपों में इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि कभी-कभी तो यह भ्रम हो जाता है कि आधुनिक सहकारिता की कलम प्राचीन पर लगादी जावे तो उत्तम हो। पेरू की सरकार प्राची 'स्थानीय समाज' (एलस खयायण) पर इसी प्रकार की कलम लगाकर इंडियनों की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा करने का प्रयास कर रही है। मेडागास्कर में समुदायों (ऐसोसियेशंस) और ग्राम ऋणदाता समितियों पर १८ अप्रैल १६३० को पास किये गये एक क़ानून के अनुसार वहां के स्थानीय समाज (फोकोनोलोना)

स्थानीय ऋण बैंक का काम कर सकते हैं और सफ़ाई करने वाली नालियां बनाने, सिंचाई का प्रबन्ध करने इत्यादि का काम भी अपने हाथ में ले सकते हैं।

इस प्रकार पुराने सामाजिक तत्वों के स्थान में नये स्थापन करते हुए या जीवित सामाजिक आत्मा को अपने उपयोग में लेने का प्रयास करते हुए, यह सहकारी आन्दोलन परम्परागत रीति रिवाज़ों के आधार पर यह एक नई संस्था का निर्माण करती हैं और इस प्रकार अविकसित लोगों को उनके प्राचीन संसार से नवीन में ले आती है। किन्तु यह परिवर्तन स्वतः ही नहीं आ जाता इसे लाना पड़ता है। समाज की पुरानी परम्परायें समाजवादिता और सहकारी भावना की निर्माता हैं वे स्वयं सहकारी समितियाँ नहीं हैं। चाहे यह बात कितनी ही सहल दिखाई दे, पर आज की सहकारिता पुराने ज़माने की पारस्परिक सहायता से किसी न किसी अंश में भिन्न अवश्य है। यह निश्चित रूप से एक नई बात है जिसे भविष्य के सहकारी कार्यकर्ताओं को सीखना चाहिए। इसके अतिरिक्त आज के युग में हमारे आर्थिक और सामाजिक सम्बन्ध भी इतने जटिल हो गए हैं कि सहकारिता का कार्य चलाने के लिए ज्ञान की परम आवश्यकता है और ऐसे ज्ञान की आवश्यकता है जिसे हमें दूसरों से सीखना पड़ेगा। आर्थिक रूप से पिछड़े हुए देशों में सहकारिता की भावना वहीं की लोकप्रिय परम्पराओं में घुली अवश्य रहती है किन्तु फिर भी वह स्वयं विकसित नहीं हो उठती इसे विकसित करने के लिए वाह्य अभिकर्ता की आवश्यकता होती है।

इस वाह्य अभिकर्ता (एजेंट) आवश्यक रूप से सरकारी अधिकारी वर्ग ही हो यह भी आवश्यक नहीं है यद्यपि आज तक तो (कम से कम उन देशों में जिन पर अंग्रेज़ों का आधिपत्य रहा है) सदैव ऐसा ही हुआ है। सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार द्वारा आज शिकायत सुनी जाती है कि सहकारिता में सरकारी हस्तक्षेप होता है।

निजी (प्राइवेट) या अर्ध-सरकारी संस्थाओं, जिनमें बौद्धिक वर्ग का प्रभाव रहा है, सहकारिता का काम चलाने में अपनी योग्यता दिखा चुकी है। फिनलैंड में भी यही बात थी और जेमेका में भी आज यही बात है।

अन्त में कहीं-कहीं कुछ व्यक्ति, (मिशनरी और प्रचारक लोग) भी सहकारी आन्दोलन चलाने में सफल हुए हैं।

इन तीनों प्रकार के कार्यों का संक्षिप्त में देख लेना तथा सहकारिता की शिक्षा देने वाले और सहकारिता के लिये नेता और कार्यकर्ताओं को तैयार करने वाली कुछ संस्थाओं और तरीकों का पुनर्वेक्षण करना लाभदायक सिद्ध हो सकता है। इस अध्याय के अन्त में दिए गये उदाहरण ऐसे देशों से लिए गए हैं जहां सहकारिता का आन्दोलन पूर्ण विकसित हो चुका है।

सहकारी समितियों को विकसित करने के लिए तीन प्रकार की रीतियां :

(अ) सरकारी कार्य : सहकारी समितियों का रजिस्ट्रार

सरकारी अधिकारियों ने सहकारी आन्दोलन को तैयार करने व निरीक्षण करने में जो योग दिया व रजिस्ट्रार को सहकारी समितियों, सहकारी अधिकारी, सहकारी विकास और सहकारी विभाग के कमिश्नर के कर्तव्यों से भली प्रकार स्पष्ट हो जाता है। यह कार्य वे लोग भारत, श्री लंका, मलाया प्रायद्वीप और अधिकांश अंग्रेजों के आधीन देशों में करते हैं। इन सब के कर्तव्यों को संक्षिप्त में रजिस्ट्रार के उन कर्तव्यों द्वारा भी स्पष्ट कर सकते हैं कि जो उसे भारतवर्ष में विधान तथा व्यवहार द्वारा मिले हैं।

रजिस्ट्रार के कर्तव्य :

जैसा कि उसके नाम से झलकता है रजिस्ट्रार समस्त सहकारी समितियों के रजिस्ट्रेशन अर्थात् पंजीकरण (अनिवार्य) के लिए उत्तरदायी है जिनके नियम विधि के अनुरूप हैं। वह इस बात के लिए भी उत्तरदायी हैं कि वर्ष भर में कम से कम एक बार सहकारी समिति के लेखे जोखे का निरीक्षण करें। वह इस प्रकार की पूछताछ और निरीक्षण के लिए भी आज्ञा दे सकता है जो उसे उचित जान पड़े। यद्यपि वह समिति की शासन व्यवस्था में प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप नहीं करता फिर भी यदि समिति में कोई झगड़ा उत्पन्न हो जाये तो उसे निबटा सकता है। यदि उसे किसी भी सहकारी समिति का परिसमापक ठीक जान पड़े तो वह उसके रजिस्टरों को भी समाप्त कर सकता है।

लेकिन उसका काम इससे और भी विस्तृत और विभिन्न है। उसका काम एक मात्र शासन करना ही नहीं है, सहकारी आन्दोलन को प्रचार द्वारा बढ़ाना भी उसका ही एक मुख्य कार्य है, और इस काम को उचित निर्देशन, प्रसंशा तथा हल्की ताड़ना से आगे बढ़ाते रहना भी उसी का काम है।

इसलिए सामान्य रूप से कहा जाय तो उसके परिसमापन के अतिरिक्त, उसके तथा उसके सहयोगियों के काम खास तौर पर अमरीका और यूरोप की, प्रदेशीय और राष्ट्रीय सहकारी संघों की तरह होते हैं।

योग्यता और प्रशिक्षण :

ये कर्त्तव्य सामान्य प्रकार के नहीं हैं। इन कर्त्तव्यों को प्रयोग में लेने वाले व्यक्तियों की योग्यता व ज्ञान के बारे में भारतीय कृषि पर छपी रायल कमीशन की रिपोर्ट में विस्तृत व स्पष्ट रूप से लिखा गया है।

रजिस्ट्रार को अर्थ शास्त्र और ग्राम अर्थ व्यवस्था को पूर्ण ज्ञाता होना चाहिए, देश की आर्थिक दशा का उसे पूर्ण ज्ञान हो और कम से कम ज़िलों का तो अवश्य ही हो जिसमें वह काम करता है। इसके अतिरिक्त अन्य विभागों जैसे कृषि, श्रम, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि के साथ भी आवश्यक सम्बन्ध निर्वाह कर सकता है। यह आवश्यक है कि अपने साथ के कार्यकर्ताओं और जिले की सहकारी संस्थाओं के सदस्यों के लिए एक योग्य निर्देशक व शिक्षक बन सके। चूंकि वह सहकारिता का प्रसार करने व ज्ञान प्रसार करने के लिए उत्तरदायी है, तथा सहकारी समितियों के निरीक्षण, परामर्श और सहायता में भी उसका हाथ है अतः उसे सहकारिता का कुशल ज्ञाता होना चाहिए और इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि वह प्रत्येक रूप के बारे में अपने व विदेशों की सहकारी समितियों का भी भली भांति अध्ययन कर चुका हो।

रजिस्ट्रार लोगों का दल एक विशेषज्ञों का (प्रवेश क्रम) यहां होता है अतः उसको उचित प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए।

कार्य करने की रीति :

नाइजेरिया सरकार के भूतपूर्व मुख्य सचिव श्री जे० एस० मेबिन साहब ने निम्न रीति इसके प्रचार और शिक्षा के लिए बताई है जो उन्होंने श्री लंका में व्यवहार में लेकर देखी थी।

"कुछ संयोजक लोग नई समितियों को शीघ्र आगे बढ़ाने की इच्छा से उन सोसाइटियों (समितियों) को उन आपत्तियों और ख़तरों के विषय कुछ भी नहीं बताते जिनका उन लोगों को सामना करना पड़ेगा ये केवल उनकी अच्छाइयों के बारे में ही उन्हें बताते हैं। मैं ऐसे तरीकों को बेइमानी समझता हूँ और मैंने इनको कभी भी सफल होते नहीं देखा। सहकारिता तब तक कभी भी सफल नहीं हो सकती जब तक कि सदस्य लोग उन स्वार्थ त्यागों के बारे में न जान लें जो उन्हें करने पड़ेंगे, और जिन्हें वे करने योग्य समझें। श्री लंका के नये क्षेत्रों में हम ने निम्न विधि अपनाई थी। पहले हमने उन लोगों को सार्वजनिक सभा में सहकारिता के काम के उद्देश्य, लाभ और कठिनाइयाँ बताइ। तब हमने एक महीने बाद एक सभा रखी और लोगों से कह दिया कि हमारे परामर्श को आंख बन्द करके स्वीकार न करलें, वरन वे इसके विषय में स्वयं सोचें, वाद-विवाद करें और उस आदमी से भी हमने उनके संदेश और कठिनाइयों के बारे में विस्तृत वाद-विवाद किया। इस समय तक सन्देह रखने वाले व्यक्ति हट गये थे, तब देश के व्यक्तियों के साथ हमने वास्तविक काम आरम्भ किया। हमने उनको सहकारिता के सिद्धान्त तथा सोसाइटी (समिति) के व्यावहारिक काम समझाये कि किस तरह वे सभा बुलायें, ऋण का अनुमान लगायें, व किस प्रकार खाने रखें। उनको समिति के उपनियम, आर्डीनेंस और अधि-नियमों के विषय में पूरी तरह जानना था। सात बैठकों के बाद सोसा-यटी (समिति) के बाद रजिस्ट्रेशन के लिए तैयार हो गई।

रजिस्ट्रेशन के उपरान्त पहले पहल हम लोग महीने में एक बार और तदुपरान्त महीने में दो बार समिति को देखने जाया करते थे। उस समय हम उनके किये हुए काम का निरीक्षण करते थे; ग़लतियां बताते थे और किस प्रकार वे हटाई जा सकती हैं व सुधारी जा सकती हैं, यह बताते थे और साथ साथ हमने यह भी देखा कि कठिनाइयों व सुविधाओं के बताने से हमने कृषक का विश्वास जीत लिया है और

उसको निराशा से बचा लिया है। सदस्य लोग स्वयं सोच सकते थे और उसको उस निराशा से स्वयं ही बन्द कर सकते थे। यहां भी मैं ऐसी ही प्रणाली अपनाना चाहता हूँ। यह तरीका धीमा अवश्य है लेकिन है निश्चित। हम थोड़ी ही सफलता से कार्य आरम्भ करेंगे, कृषक के आत्म सम्मान और आत्म निर्भरता को जाग्रत करेंगे और विश्वास प्राप्त करेंगे। यद्यपि इस प्रकार शुरुआत धीमी गति की हो सकती है किन्तु अन्तिम प्रसाद की भी तो कोई सीमा नहीं है।

(ब) जैमेका में प्राइवेट व अर्ध सरकारी संस्थाओं का कार्य

सहकार विकास कौंसिल (दी कोऑपरेटिव डेवलपमेंट) :

इस कौंसिल के कार्य की तुलना फिनलैंड की पेलेखों समिति के साथ ही नहीं की जा सकती वरन् चीनी अकाल सहायता कमीशन (चाइना फैमिन रिलीफ कमीशन) और इस प्रकार की संस्थाओं के साथ भी की जा सकती है जैसे एन्टीगोनिश (नोबास्कोशिया) में युनिवर्सिटी ऑफ सैंट फ्रेको इस जेक्यिर के एक्सटैंशन डिपार्टमेंट (विस्तार विभाग) तथा क्यूमेक में (विज्ञान विभाग के विस्तार के स्कूल) फैकलटी ऑफ साइन्स के एक्सटैंशन स्कूल जैमेका में १९३८ से पूर्व ही सहकारी आन्दोलन के चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे थे। पर ये प्रयास भिन्न-भिन्न से थे अतः सफलता भी विभिन्न श्रेणियों में थी। परन्तु १९३८ के पश्चात् इसने भली प्रकार काय आरम्भ कर दिया, और १९४३ से सहकारी विकास कौंसिल (कोऑपरेटिव डेवलेपमेंट कौंसिल) की स्थापना के साथ तो प्रगति बहुत तेज़ी से हो चली है।

लोक कल्याण समिति (वेलफेयर) :

जैमेका लोक कल्याण समिति (वेलफेयर) एक स्वतन्त्र संस्था थी जिसकी स्थापना १९३६ में हुई। इसने इस द्वीप के लोगों का जीवन स्तर उठाने का उद्देश्य बनाया पर यह दान द्वारा नहीं बल्कि कुछ रचनात्मक कार्य करके। यूनाइटेड फ्रूट कम्पनी और स्टैंडर्ड कम्पनी ने काफी बड़ी धनराशि से इसकी सहायता की। इसने उसी दिशा में कार्य करने वाली सहयोगी संस्थाओं (दी एग्रीकल्चर सोसायटी, ब्वाय स्काउट्स एसोसियेशन, एग्रीकल्चरल कंटीन्यूयेशन स्कूल, दी चर्चेज़ इत्यादि का सहयोग प्राप्त कर लिया, और आरम्भ से ही इसने

सहकारिता के कार्यों की ओर अपने प्रयास लगाये। जैमेका जन कल्याण समिति ने निश्चित योजना बनाने व कार्य आरम्भ करने से पहले अपने संचालकों (डायरेक्टरों) में से दो को सहकारिता की ट्रेनिंग दिलवाई, एक को इस कार्य के लिए यूरोप भेजा गया व दूसरे को एन्टीगोनिश में फ्राकोइस युनिवर्सिटी के विस्तार विभाग में (एक्स-टैंशन डिपार्टमेंट) में कनाडा और संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के प्रान्तों में स्वीडन वीले सूत्र होकर सैंट फ्रेंकोइस जेवियर विश्वविद्यालय ने अमेरिका महाद्वीप पर सहकारी अध्ययन चक्रों का प्रचार किया था, साथ ही साथ नवयुवक कृषकों ने (यंग फॉर्मर्स क्लब) तथा क्रेडिट यूनियन एजूकेशनल कमेटी भी स्थापित की।

लोक-कल्याण के यह कार्य उन मनुष्यों द्वारा जिन्हें इस कार्य का अनुभव न था आरम्भ किया गया था और उन मनुष्यों में किया गया था जो पिछली बार सहकारिता की असफलता से उसके लिए विश्वास गंवा बैठे थे। अतएव प्रारम्भिक कार्य कुछ ही दिन चला, किन्तु शीघ्र ही पहली ऋण समिति की स्थापना हो गई। जो समितियां पहले से कार्य कर रही थीं उन्होंने भी अपनी कार्यवाहियां बढ़ा दीं और सहकारिता संघ भी स्थापित किये। पहिला क्रेडिट यूनियन एजूकेशनल कमेटी की शाखा (ऋण देने वाला सहकारी संघ) क्रेडिट कोऑपरेटिव यूनियन तथा दूसरा जैमेका कोऑपरेटिव यूनियन (सहकारी संघ)।

समानान्तर कार्यवाहियां

इस काम के साथ ही साथ दूसरी कार्यवाहियां भी उसी प्रकार के उद्देश्यों के साथ शुरू हो गईं। कृषि समिति (दी एग्रीकल्चरल सोसायटी) और एग्रीकल्चरल लोन्स सोसायटीज़ (कृषि के लिए ऋण देने वाली समितियां) को बोर्ड सामान्य शिक्षा और सहकारी शिक्षा देने के कार्य करती थी और चलाती थी, सैंट जॉर्ज के स्कूल ने अपना विस्तार (एक्सटैंशन) स्कूल खोला और सहकारी आन्दोलन को बढ़ाने का अपना काम आरम्भ किया।

सहकार विकास (कोऑपरेटिव डेवलपमेंट) कौंसिल, स्थापना :

जैमेका जन कल्याण समिति के प्रयास से १९४३ के आरम्भ में एक कॉन्फ्रेंस बुलाई गई और उसमें सहकारिता आन्दोलन में दिलचस्पी

लेने वाली सब संस्थाओं और संगठनों को आमंत्रित किया। इस कान्फ्रेंस को बुलाने का मुख्य उद्देश्य यही था कि सरकार को सहकारी आन्दोलन चलाने के लिये एक कौंसिल स्थापित करने को कहा जावे। यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया और जैमेका जन-कल्याण (वेल-फेयर) के प्रेसीडेंट तथा सैंट जॉर्ज के विस्तार कार्य करने वाले स्कूल कॉलेज (एक्सटैंशन स्कूल ऑफ सैंट जार्ज कालेज) के प्रतिनिधि द्वारा कुछ नियम बनाये गये। साथ ही यह भी निश्चित कर लिया गया कि कौंसिल की कार्यवाहियां को निम्न सिद्धान्तों पर बढ़ाया जावे :

सहकारी आन्दोलन को सरकार प्रोत्साहन दे सकती है और सहायता दे सकती है पर वह उसका नियंत्रण नहीं कर सकती, सहकारी ग्रुपों को शिक्षा के द्वारा बढ़ने का अवसर दिया जाना चाहिये ताकि वे अपने कार्यों का नियंत्रण कर सकें।

सदस्यता :

इस कौंसिल में जैमेका वेलफेयर, दी एक्सटेंशन स्कूल ऑफ सैंट जार्जस कॉलेज, दी जैमेकन एग्रीकलचरल सोसायटी, दी एग्रीकल-चर्ज़ लोन सोसाइटीज़ बोर्ड, दी बनाना प्रोड्यूसर्स एसोसियेशन नामक संस्थाओं के तथा जनता के शासनाधिकारियों के प्रतिनिधि भी थे, उनमें शिक्षा, भूमि, मकान, वाणिज्य और उद्योग, विकास सचिव तथा जन-कल्याण सेवा सचिव, इसके अतिरिक्त सहकारी संघ (कोऑ-परेटिव फेडरेशन) के प्रतिनिधि भी थे, दी क्रेडिट यूनियन लीग, दी जैमेका कोऑपरेटिव यूनियन और अब जैमेका एग एंड पोलट्री फेडरेशन भी इसके सदस्य हैं।

उद्देश्य और प्रारम्भिक कार्यवाहियां :

कौंसिल के नियमों द्वारा वर्णित मुख्य नियम ये हैं :

(१) सहकारिता की सब कार्यवाहियों का खासकर शिक्षा, प्रशिक्षण और संगठन का निरीक्षण करना व संयोजन करना।

(२) सारी सहकारी संस्थाओं में एक मिली हुई विचारधारा का प्रवाह करना (वैसे प्रत्येक को अपने काम करने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी)।

(३) अपने वैधानिक संघों में पारस्परिक सहायता और मैत्री पूर्ण सहयोग बढ़ाना।

(४) सहकारी आन्दोलन के साथ सम्पर्क बनाये रखना, तथा इसका शिक्षा और मंडी के कार्यों में सहायता देनी। अन्य सब क्षेत्रों में भी जो सहकारी आन्दोलन से सम्बन्धित हो सहायता देना।

(५) उचित कानूनों द्वारा सहकारी आन्दोलन की रक्षा करना।

कौंसिल तत्काल काम करने लग गई और इसने शिक्षा, विधि निर्माण, मंडी के कार्य और अर्थ व्यवस्था के लिए कमेटियां स्थापित कर दीं। एटस्टेंशन स्कूल ऑफ सैंट जाजस कालेज ने नियमित रूप से सहकारिता के इतिहास व दर्शन पर ऋण समितियों, उपभोक्ता समिति, मंडी समिति तथा सहकारी समितियों के प्रबन्ध पर कक्षायें चलाना शुरू कर दिया तथा देश के विभिन्न भागों में भाषण और निरीक्षण का प्रोग्राम भी रखा। जैमेका वेलफेयर ने, एग्रीकल्चरल सोसायटी और कुछ स्थानीय संगठनों के साथ प्रादेशिक आधार पर अपने शिक्षा के कार्य को जारी रखा, और उसी प्रकार कृषि समिति (एग्रीकलचरल सोसायटी) ने भी अपनी ४५० सदस्य समितियों से अपने कार्य को चालू रखा। शिक्षा विभाग ने अध्ययन केन्द्र बचत संघों के चलाने में सहायता दी। क़ानून बनाने वाली समिति ने सहकारिता पर सामान्य नियमों का मसोदा (ड्राफ्ट जनरल ला) तथा समिति पर एक क़ानून का मसोदा पड़ा और प्रतिनिधियों की सभा (हाउस ऑफ रिप्रिजेंटेटिव्ज) को तैयार किया कि वह आयकर के सम्बन्ध में सहकारी समितियों के विशेष स्थान को मानें।

जैसा कि शिक्षा के सम्बन्ध में है, कौंसिल का प्रत्येक सदस्य संगठन के किसी विशेष क्षेत्र में विशेषज्ञ होता है, परन्तु आवश्यकता पड़ती है तो वह एकाध अन्य सदस्यों की भी सहायता ले लेता है। संघ के (फेडरेशन) अपने काम को कर रहे हैं। भूमि विभाग अपने क्षेत्र की सहकारी समितियों को (जिन पर यह नियंत्रण रखता है) परामर्श और प्रेरणा देता रहता है। कृषि समिति (दी एग्रीकलचरल सोसायटी) ने सहकारिता पर दूध और डेरी के उत्पादन, कूएं खोदना, पानी ले जाना, खेत में आवश्यक चीजें देना, मिट्टी को कटान से बचाना, बन लगाना, इत्यादि कामों को संगठित किया है। गृह निर्माण विभाग (हाउसिंग

डिपार्टमेंट) ने जैमेका वेलफेयर (जन कल्याण) के द्वारा चलाये गये दो गृह निर्माण की सहकारी आयोजनाओं में तकनीकी (टैक्नीकल) सहायता दी है। जैमेका (वेलफेयर) जन-कल्याण के साथ मिलाकर १९४५ के अप्रैल और अगस्त के बीच में मुर्गी के व्यवसाय को उन्नत करके अण्डों का उत्पादन बढ़ाने में और उन्हें इकट्ठे करने के काम पर ज़ोर दिया। वाणिज्य और उद्योग विभाग इस प्रकार इकट्ठे किये गये अंडों को मंडी में बेचने का काम करता है।

पहले प्रयोग से सीखे हुये पाठ :

१९४५ में छपे हुए एक स्मरण पत्र (मेमोरेंडम) में कौंसिल ने इस बात प्रयोग से प्राप्त किये परिणामों और पाठ को लिख डाला और इसके परिणामों की जांच की। पहली बात जो सामने आई उसने तो सन्देश करने वालों को भी आश्चर्य में डाल दिया वह बात थी कि जैमेका में जहां भी कहीं लोगों के मनोविज्ञान को ध्यान में रख कर व उचित शैली को उपयोग में लगाया गया है वहीं पर ज्ञात हुआ है कि अध्ययन चक्र (स्टडी सर्किल) और विचार विनिमय चलाने का ढंग बहुत सफल हुआ है।

उसी प्रकार (और कहीं-कहीं तो उससे भी स्पष्ट रूप से) बचत के आन्दोलन को बढ़ावा देने के प्रयास ने भी बहुत अच्छी सफलता प्राप्त की है। यह भी देखा गया है कि किसी प्रकार सहकारी कार्य को एक बार चलाने के लिये जनता में उनकी पुरानी परम्परा में निहित पारस्परिक सहायता को इसमें सम्मिलित कर लिया है।

अन्त में, यह देखा गया है कि निर्धन से निर्धन में भी सेवा करने वाले नेता निकल ही आते हैं। लेकिन विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा के नीचे स्तर को देख कर यह आवश्यक हो गया है कि उन लोगों को न केवल सहकारी शिक्षा दी जाये बल्कि सामान्य शिक्षा और व्यावहारिक कार्यों में प्रगतिवादी प्रशिक्षण भी दिया जाना आवश्यक है।

परिणाम :

१९४५ के मार्च के महीने तक ऐसे बहुत से क्लब थे जो सहकारी समितियों के पूर्ण रूप थे। वे रजिस्टर में अंकित नहीं थे।

१५७ अध्ययन और बचत के लिये बनाये हुये संघ जिनकी सदस्य संख्या ६,२३६ थी, ८८ मितव्ययता क्लब, सदस्य संख्या ४८०४; ५३ वस्तु क्रय, क्लब संख्या ८६१; १७ कृषि उत्पादन क्लब, सदस्य संख्या १,१८८; १२ कुटीर उद्योग क्लब, ६ गृह निर्माण क्लब और ७ पायेनियर क्लब थे।

इन अपूर्ण संस्थाओं के अलावा उसी तिथि में १६८ रजिस्टर्ड सहकारी समितियां थीं जिनकी सदस्य संख्या ४६,५४७ थी। सबसे पुरानी और सबसे बड़ी सहकारी समिति जनता का सहकारी बैंक था जिसकी १०८ शाखायें और ४३३६७ सदस्य थे। जिसके खाते में १२४,३६२ पौं० की जमा बाक़ी थी (जिनमें से आधे से अधिक यानी ६७,६८३ पौंड सदस्यों द्वारा जमा की हुई सम्पत्ति थी।)

१८ छोटी शाखा सहकारी समितियां थीं जिनमें १२ शाखा संघ भी थे। १० उपभोक्ता सहकारी समितियां थीं जिनकी सदस्य संख्या ११३६ थी। एक सहकारी बेकरी (रोटी बनाने का उपयोग) के अलावा ३१ डंडी की सहकारी समितियां थीं। जिनमें से ३० अंडे और मुर्गियां बेचने वाली समितियां भी सम्मिलित थीं।

(स) व्यक्तिगत प्रयास

बान्टू सहकारी आन्दोलन में प्रौढ़ और सहकारी शिक्षा :

सैंट फ्रैंसिस नेटिव ट्रेनिंग स्कूल के प्रिंसिपल साहब रेवेरंड बर्नहार्डहस से बांटू को आधुनिक सहकारिता पर २५ वर्ष पहले सन्देशा मिला। यह शायद उसी के कारण है कि बांटू के सहकारी कार्यकर्ताओं को शिक्षा में निम्नांकित ध्येय प्राप्त हुआ, आपको (अ) व्यक्तिगत रूप से सोचना चाहिये। (ब) साथ मिलकर सोचना चाहिये, और (स) आगे सोचना चाहिये।

"नवान्तुकोप प्रौढ़ शिक्षा स्कूल" के डाइरेक्टर द्वारा लिखे गये हाल ही के एक लेख से ज्ञात हुआ है कि नेटाल और जलूलैंड में बान्टू के सहकारिता आन्दोलन के १० हजार के करीब सदस्य हैं। इस आन्दोलन ने यह अपने कुछ यूरोपीयन परामर्शदाताओं की सहायता से और अपने स्वयं के छापेखाने (प्रैस) पत्रों और पत्रिकाओं और पुस्तकों, बहुत से कोर्सों (पाठ्यक्रम) अध्ययन चक्र आदि के द्वारा एक बहुत ही

सुव्यवस्थित और विस्तृत प्रौढ़ और सहकारी शिक्षा को चला रखा है ताकि अमेरिका की निर्भरता और निरक्षरता से सफलतापूर्वक लड़ा जा सके।

पत्र-पत्रिकाएं :

बांटू सहकारी आन्दोलन का मुख्य पत्र उबाम्बिस्वानो है। यह एक मासिक पत्रिका है, जिसमें शिक्षा, सामाजिक भलाई और सहकारिता पर लेख निकलते हैं। एक मासिक बुलेटिन "नवान्तुकोंपलिक" अध्ययन दल सचिवों और स्थानीय कमेटियों के मार्ग का काम भी करती हैं।

अमले का प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) :

अमले को प्रशिक्षित करने के लिये केन्द्र पर बहुत से पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं। शिक्षा को इतनी व्यावहारिक बना देते हैं जितनी कि सम्भव हो सकती है। उदाहरण के लिये व्यावहारिक प्रशिक्षण देने के लिये एक दुकान का भी आयोजन किया गया।

प्रतिवर्ष शीतकालीन विद्यालय (Winter Schools) चलाये जाते हैं जिनमें इतिहास, सहकारिता के सिद्धान्त, बही खाता, व्यापार प्रबन्ध, नागरिकता, कृषि सहकारी पुनर्वास योजना, सामाजिक स्वास्थ्य संगीत, नाटक, और क्षय से बचाव पर भाषण दिये जाते हैं। सबसे पहला, जुलाई सन् १९४५ में खुला जिसमें केवल ५० विद्यार्थी थे, दूसरा स्कूल जून १९४६ में खुला जिसमें ८० विद्यार्थी थे। इसमें मिशनरी, अध्यापक, किसान, स्टोर, मैनेजर इत्यादि सभी थे, इसमें पुरुष भी होते हैं और स्त्रियां भी); तीसरा स्कूल ७० विद्यार्थियों वाला जुलाई १९४७ में खुला। दी नेटिव एजूकेशन डिपार्टमेंट (जो प्रौढ़ शिक्षा का भाग था) ने इस कार्य के लिये आर्थिक सहायता भी दी है।

अध्ययन के लिये बने हुये मण्डल :

नेटाल और ज़ुलूलैंड में १४५ बांटू सहकारी अध्ययन थे जिनमें हज़ारों अफ्रीका के पुरुष और स्त्रियाँ सम्मिलित हुआ करते थे। विचार विनिमय के लिये चुने हुये विषयों में उनकी सामाजिक और आर्थिक समस्यायें हुआ करती थीं। साथ ही साथ सहकारिता के

सिद्धान्त, नागरिकता, कृषि, स्वास्थ्य और सामाजिक जन कल्याण के कार्य भी रहा करते थे। मीटिंग के स्थान बहुत ही विचित्र हुआ करते थे, जैसे सदस्यों के घर, फैक्टरियां, स्कूल की इमारतें, गाड़ी और हाल (जिनमें से दो उन आदमियों के द्वारा बनाये गये थे)।

प्रत्येक मण्डल नवान्तुकोप की स्थानीय शाखा की कमेटी के सामान्य निरीक्षण में कार्य करते हैं। शीत कालीन विद्यालय के विद्यार्थियों की प्रार्थना पर ही नवान्तुकोप प्रौढ़ स्कूल की स्थापना की गई है जो कि अध्ययन मण्डलों (स्टडी ग्रुप्स) को डाक द्वारा पाठों के द्वारा पढ़ता है। अध्ययन मण्डल (स्टडी ग्रुप्स) के लोगों के सुनने के लिये रेडियो का भी प्रबन्ध किया जा रहा है। यह आशा की जाती है कि शैक्षिक कार्यों के लिये फिल्मों को भी शीघ्र ही काम में लाया जायेगा।

सहकारिता सिखाने के कुछ केन्द्र

(अ) कनाडा : लवाल विश्वविद्यालय :

समाज शिक्षा के विस्तार विभाग (एक्स्टेंशन डिपार्टमेंट) की स्थापना १६४४ के बसन्त में लवास विश्वविद्यालय (सोशियल साईंसिज़ फैकल्टी) क्युबेक में हुई। इसने फैकल्टी और सामाजिक विज्ञानों (सोशियल साइंसिज़) के अनुभवों को जो उसने इस क्षेत्र में पहले अर्जित किया था काम में लिया और शीघ्र ही लोक प्रिय शिक्षा का प्रमुख केन्द्र बन गया। विस्तार विभाग (एक्स्टेंशन डिपार्टमेंट) का उद्देश्य लोगों को ज्ञान का प्रकाश देकर उसकी सेवा करना और लोगों के बीच में एक कड़ी के समान काम करना है। लोगों को फैकल्टी द्वारा ठोस और मुख्य समस्याओं पर किये गये अनुसंधानों के परिणामों को पहुँचाना और उन लोगों को सामाजिक सुधारों की उपयोगिता पर विश्वास जमाना है।

इन तरीकों में से कुछ तो वही पुराने ढंग के हैं जैसे पुस्तक प्रकाशन, अनुसंधान, सन्ध्या की कक्षायें, पत्र-व्यवहार (कोरसपोडेंस) पाठ्यक्रम और चलता फिरता पुस्तकालय। इनमें माता पिता का स्कूल और गहन अवधिकाल (इटैन्सिव सैशन्स) भी शामिल किये जा सकते हैं। विस्तार विभाग ऐक्सटेंशन डिपॉर्ट में रेडियो का भी उपयोग करता है तथा "अध्ययन दिवस" और "अध्ययन यात्रायें" भी संयोजित करता है।

अमले में (फैकल्टी ऑफ सोशियल साइन्सेज़) सामाजिक किसानों के अध्यापक होते हैं तथा व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कुछ विशेषज्ञ भी।

यद्यपि पढ़ने के रचनात्मक कार्य में सहकारिता ही एक विषय नहीं रहता फिर भी सारे कार्यक्रम का अधिकांश भाग यही विषय रहता है। कनाडा जैसे देशों में लोक शिक्षा और प्रौढ़शिक्षा के नाम धाम व शैली में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया है वहां दोनों ही कार्य साथ होते हैं सहकारिता की शिक्षा देना भी और लोगों के दिमाग सहकारी कार्यों की ओर प्रवृत करना। यह कार्य उसी प्रकार का है जिस प्रकार कि इसका विपरीत सामूहिक कार्य, सहकारिता की शिक्षा को सामाजिक कार्य में बदल कर उसके द्वारा सामूहिक कल्याण के कार्य करवाना है।

संध्या के पाठ्यक्रम :

ये अक्टूबर से मई तक चलते हैं और प्रत्येक व्यक्ति के लिये खुले हुये हैं। नाम लिखने की फीस (ऐनरोलमेंट फी) १५ डालर होती है जो तीन किश्तों में दी जा सकती है। पाठ्यक्रम ४ वर्गों में विभाजित किए गए हैं, सहकारिता, अर्थशास्त्र, शासन और गृह अध्ययन।

अर्थशास्त्र के अध्ययन में सहकारिता की पढ़ाई ६ घन्टे चलती है। इसमें राजनैतिक अर्थशास्त्र पर सामान्य पाठ होते हैं, और कुछ पाठ कनाडा के उद्योगों पर होते हैं।

गृह अध्ययन में दो पाठ सहकारिता पर होते हैं; एक पाठ सहकारी संस्थाओं द्वारा घर के प्रति की हुई सेवाओं का, दूसरा पाठ गृह सहकारिता और गार्डन सिटीज़ (शहर के बागों) पर होता है।

सहकारिता के पाठ्यक्रम में ८० पाठ होते हैं इसके सामान्य विभाग में सहकारिता के सिद्धान्तों (इसमें शिक्षा, विधान बनाना, शासन संगठन और आर्थिक संगठन आदि होते हैं) और एक स्पेशल (विशिष्ट) भाग होता है जिसमें कुछ विशेष प्रकार की सहकारी संस्थाओं का हाल दिया होता है। जहां कहीं सम्भव होता है तात्कालीन आवश्यकताओं के अनुसार व्यावहारिक कार्य भी सिखाया जाता है। कुछ पाठ विभिन्न स्तरों के सहकारी समितियों के प्रशासकों व प्रबन्धकों के लिए होते हैं।

इन सब पाठयक्रमों के बाद परीक्षा होती है जिसके बाद एक प्रमाणपत्र (सर्टीफिकेट) दिया जाता है। पहले साल में इसमें २०० विद्यार्थी शामिल हुए जिनमें से ७५ को सर्टीफिकेट्स मिले।

पत्र व्यवहार का पाठ्यक्रम :

उन व्यक्तियों के लिए जो संध्या की कक्षाओं में नहीं आ सकते थे विभाग ने जनवरी १६४५ में पत्र व्यवहार के पाठ्यक्रम शुरू किए। यह उन सब लोगों के लिए खुले हैं जो पर्याप्त हैं और जिन्हें थोड़ा अनुभव भी है। इसमें नाम लिखाने की फीस १० डालर है।

इन सब में सहकारिता का पाठयक्रम कोर्स सबसे पहले शुरू किया गया था। इसकी विषय वस्तु सन्ध्या की कक्षाओं से थोड़ी ही भिन्न है। यह गहन पाठ्यक्रम (एक्सटेन्सिव कोर्स) है जैसा कि इसकी प्रस्तावना से ही विदित होता है। यह उनके लिए है जो इस आन्दोलन में काम कर रहे हैं या जो इसकी विशेष बातों से पहले ही परिचित हैं।

पाठय सामग्री रोनियोग्राफ रूप में ५ और १० के ग्रुप में विद्यार्थियों को दिखाई जाती है। ये साठ छपी हुई कापियां हैं। वैसे प्रत्येक पाठ १० व १५ पृष्ठों का होता है। कभी तैयार की हुई रूप रेखायें होती हैं। दूसरे में अनिवार्य और ऐच्छिक पाठ्य के लिए कुछ पुस्तकों की सूची होती है। और तीसरे में दो सौ से लगाकर ५ सौ तक पृष्ठ होते हैं।

विशेष रूप से सिद्धान्तों पर सूक्ष्म रेखा में कनाडा और बाहर के लेखकों के उद्धरण होते हैं। इस प्रकार यह विद्यार्थी को पर्याप्त मसाला भी देती हैं और उसे लेखकों के विचारों के सम्पर्क में भी रख देती है।

यदि विद्यार्थी लोग चाहें तो दो डालर वार्षिक के चन्दे से विस्तार विभाग के चलते फिरते पुस्तकालय से अनिवार्य और ऐच्छिक विषयों के पुस्तकें ले सकते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी को प्रत्येक प्रश्न को हल करके अपना लिखित उत्तर विस्तार विभाग के लिये भेजना पड़ता है।

परीक्षा के बाद डिप्लोमा दिया जाता है। इसमें विद्यार्थी के वर्ष भर के कार्य का लेखा जोखा दिया जाता है।

प्रकाशन (दी फोरम इंटेन्सिव सेशन्स पब्लिकेशन) :

१६४१ में दी फैकल्टी ऑफ सोशियल साइन्सेज़ (उस समय के स्कूल) ने सामाजिक और आर्थिक समस्याओं पर छोटी-छोटी पुस्तकें छापना आरम्भ किया। १६४५ के बाद विस्तार विभाग (एक्स्टेंशन डिपार्टमेंट) के नेतृत्व में इन पुस्तकों को एक नया रूप दिया गया ताकि सामूहिक अध्यापन के लिए यह पुस्तकें भली प्रकार उपयोग में ली जा सकें और सहकारिता तथा दूसरे अध्ययन चक्रों में वाद विवाद के भी काम में आ सके। पत्रव्यवहार (कोरसपौण्डेन्स) और सन्ध्या के पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त विस्तार विभाग और दूसरी संस्थायें भी चलाता है जिससे कि इसकी पहुँच अधिकाधिक लोगों तक हो सके और साथ ही वह नये तरीकों को भी काम में ले सके। उन लोगों को सूचना देने के साथ-साथ ये संस्थायें अपने विद्यार्थियों को प्रशिक्षित करती हैं ताकि ये विद्यार्थी लोग स्थानीय नेताओं को प्रशिक्षित कर सकें। अध्ययन चक्रों के द्वारा वाद विवाद के लिए काफी स्थान मिल जाता है।

दी फोरम (गोष्ठी स्थल) :

जब कि स्टैडी सर्किल्स (अध्ययन चक्रों) और गहन अध्ययन (इन्टेन्सिव सेशन्स) उद्देश्य शिक्षित जनता को शिक्षित जनता के लिए शिक्षित समाज में ढालना है, फोरम (सभा) सामान्य रूप से बुलाई जाती है जिसमें या तो किसी समस्या पर वाद-विवाद करके किसी हल पर पहुँचा जाता है या किसी विचार का मूल्यांकन करने के लिए वाद-विवाद किया जाता है। फोरम में व कान्फ्रेंन्स में यही अन्तर होता है कि फोरम में सब लोग अपने विचार प्रकट कर सकते हैं कान्फ्रेंन्स में नहीं यह एक बड़े अध्ययन चक्र (स्टैडी सर्किल्स) की भांति है। केवल बहुत से व्यक्तियों के होने के कारण ही नहीं (४०० व ५०० तक व्यक्ति होते हैं) बल्कि बहुत से प्रश्न जो अध्ययन चक्र (स्टैडी सर्किल्स) में में वाद-विवाद के लिए जो आ चुके हैं वे यहाँ भी आ सकते हैं और साथ ही साथ अध्ययन चक्र (स्टैडी सर्किल) वाले सदस्य दूसरे लोगों को वादविवाद में शामिल करते हैं। उनकी कठिनाइयों का उत्तर देते हैं और बहुत सी नई बातों पर प्रकाश डालते हैं।

रेडियो के होने से फोरम का विस्तार कर देना और भी आसान हो गया है। रेडियो फोरम के विभिन्न भाग ये हैं :

१. स्टूडियो में वाद विवाद जिसमें कुछ समस्याओं को सामने रखा जाता है और उन पर प्रकाश डाला जाता है।

२. मंडल द्वारा अध्ययन मंडल को पहले ही एक बुलेटिन मिल जाता है जिसमें विषय के बारे में लिखा होता है। वे लोग रेडियो पर भाषण सुनते हैं और फिर जिस जगह भाषण ने काम खत्म किया है उस जगह से आगे वाद-विवाद करके समस्या के हल पर पहुँचने का प्रयास करते हैं।

३. शेष भाषण दिये हुए का एक भाष्य सा ही होता है। सबसे पहला रेडियो फोरम १९४३ ४४ में प्रान्तीय सरकार और रेडियो कनाडा सोसायटी के सहयोग से (सुपीरियर कौंसिल ऑफ कोऑपरेशन) ने शुरू किया है। ७२५ सुनने वालों के मंडल आयोजित किए गये और प्रत्येक सप्ताह "भविष्य बनाओ" योजना पर ब्रॉडकास्ट किये जाने से पहले २०००० बुलेटिनें बांटी जाती थी।

सन १९४४-४५ से प्रौढ़ शिक्षा संघ ने ही प्रोग्राम शुरू कर दिया है, इसमें सुनने वाले लोगों के उत्तरों को जांच कर उनकी एक रिपोर्ट रेडियो के लिए तैयार की जाती थी। संघ की प्रार्थना पर बुलेटिन छापने व सम्पादन करने का काम समाज शिक्षा के विस्तार विभाग (ऐक्सटैन्शन डिपार्टमेंट) ने ले लिया है।

गहन अध्ययन काल (इंटैन्सिव सैशन्स) :

इसके द्वारा सजातीय लोगों (सहकारी समितियों के प्रबन्धक, कृषक आदि) को एकत्रित करते हैं और ये लोग मिल जुल कर एक या अधिक समस्याओं पर अध्ययन करते हैं। इनकी मीटिंग एक दिन से लगाकर एक महीने तक की होती है। इन लोगों का उद्देश्य लोगों को एक दूसरे के सम्पर्क में लाना है। ताकि एक ही प्रकार की रुचि रखने वाले लोग पारस्पिरिक रूप से अपने अनुभवों का आदान प्रदान कर सकें। ये लोग कान्फ्रेन्सें, वार्तालाप, और वाद विवाद के द्वारा भाग लेने वाले लोगों को सैद्धान्तिक और व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करते हैं। हां इनके इस उद्देश्य में पूर्ण ज्ञान देने का विचार कम है और उन लोगों में पारस्परिक सहायता और उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न

करके लोकतन्त्रीय विचारों का प्रसार करना अधिक है। यही कारण है कि पूरे सैशन के अन्दर लोगों को एक साथ रक्खा जाता है और जब कभी सम्भव हो सकता है तो सदस्य लोग अपने सामूहिक जीवन को संगठित करने का प्रयास भी स्वयं ही करते हैं। सैशन (बैठक) की शैली अध्ययन केन्द्र (स्टेडी सर्किल) व फोरम से मिलती है और प्रायः निम्न योजना के अनुसार काम होता है :

१. एक घंटे के लगभग अध्यापक का भाषण
२. भाग लेने वाले लोगों को ५ व ६ सदस्यों के ग्रुपों में विभाजित कर दिया जाता है व प्रत्येक ग्रुप भाषण के समय बताई गई किसी एक समस्या पर विचार विमर्श करता है।
३. इसके बाद एक मीटिंग होती है जिसमें प्रत्येक ग्रुप अपने वाद विवाद के परिणामों के स्वरूप बतलाता है। इसके बाद सब लोग वाद विवाद में शामिल हो जाते हैं और सबसे अन्त में अध्यापक सब बातों को इकट्ठा करके लोगों के सामने पेश करता है।

इस प्रकार तीन घंटे निरन्तर काम चला लेने के बाद ४५ मिनट का समय लोगों के व्यक्तिगत अध्ययन के लिए दिया जाता है।

इस सारे काम में अध्यापक निरन्तर एक पथ-प्रदर्शक का कार्य करता है। कभी एक अध्ययन करने वाले मंडल (स्टडी ग्रुप) से दूसरे में जाता है कभी विद्यार्थियों से उनके खाली समय में मिलता है और उन लोगों को नई बातें बताता है और उनकी भविष्य योजना पर वाद विवाद भी करता है।

सन् १६४४ में सहकारिता का अध्ययन करने के लिए तीन इन्टेन्सिव सैशन की सीरीज़ शुरू की गई। पहले के अन्दर अध्यापक लोग आये (दो सप्ताह के लिए), दूसरी दो में कॉलेज के विद्यार्थी आये (तीन सप्ताह के लिए) आगे के कुछ वर्षों में एक सप्ताह से एक महीने तक के पाठ्यक्रम, सहकारी संस्थाओं के प्रबन्धकों के लिए (४ सप्ताह के लिए) और ग्रामीण नेताओं के लिए (१ सप्ताह) चलाए गए।

एक और संस्था जो इसी प्रकार के संगठन के सिद्धान्तों को काम में लेती है और शिक्षा के तरीकों को अपनाती है, उल्लेखनीय है।

इसका नाम "पौपूलर स्कूल ऑफ कोऑपरेशन" है। जहां विद्यार्थियों को इकट्ठा करने का एक बहुत ही मौलिक और सफल तरीका अपनाया गया है। इसका उद्देश्य सहकारिता के ज्ञान को फैलाकर ग्रामीण जनता में उनकी समाज शिक्षा और आर्थिक संगठनों को विकसित करना है। इस कार्य के लिए ऐसे लोगों को प्रशिक्षित करके इन बस्तियों में रखना था जो सहकारिता के ढंग ठीक तरह से जानते हैं और आस-पास के लोगों को उनके लिए प्रभावित भी कर सकें। समस्या यह थी कि इन लोगों को चुना कैसे जाये ? इसके लिए एक ऐसा तरीका सोचा गया कि जो लोग अध्ययन के लिए जा रहे थे उनमें लोगों को दिल-चस्पी जाग उठी। साथ ही साथ चुने जाने वाले लोग भी एक प्रकार से वचन बद्ध हो गए कि वे लौटकर अपने गांव की सेवा करेंगे। तरीका यह था कि वे लौट कर अपने गांव के लोग जो इस प्रयोग में रुचि रखते थे अपने अपने ग्रुप में से एक आदमी चुनेंगे और उस चुने हुए आदमी का खर्चा भी वह स्वयं ही करेंगे। इस प्रकार विद्यार्थियों में और उन दलों में जिनमें से ये विद्यार्थी लिए जायेंगे और वापिस जायेंगे उनमें आपस में एक निकट सम्पर्क स्थापित हो जायेगा।

इस प्रकार जनवरी १६४३ में स्कूल (अब फैकल्टी ऑफ सोशियल साइन्सेज़ और सुपीरियर कौंसिल ऑफ कोऑपेरशन) के सहयोग से पहला प्रयोग शुरू हुआ। छः महीने बाद ही जहां से विद्यार्थी लोग आये थे उन बस्तियों में जाकर इसका परिणाम देखा गया। पूछने पर ज्ञात हुआ कि ८५ प्रतिशत भर्ती उपरोक्त बताई गई रीति से ही हुई थी। इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि चुनाव भी बहुत ही सफल था क्योंकि विद्यार्थियों ने लौटते ही अपने आपको सहकारिता द्वारा निर्माण के कार्य में लगा लिया। फलस्वरूप बहुत से अध्ययन केन्द्र शुरू हो गए, एक जगह मक्खन और मलाई निकालने की सहकारी फैक्टरी बनाई गई, दूसरी जगह ऋण सहकारी समिति (जनता के बैंक)। तीसरी जगह स्थानीय किसान सहकारी समिति स्थापित हो गई और साथ ही साथ कूड़ा उठाने वाले लोगों की भी एक समिति स्थापित हो गई।

दूसरे साल भी प्रयोग को उसी प्रकार चालू रक्खा गया। भर्ती करने के वही तरीके काम में लिये गये। और प्रयोग पांच जिलों में भली भांति चल निकला।

समाज शिक्षा के विस्तार विभाग ने बहुत सी संस्थायें और शैलियां अपने उद्देश्य पूर्ति के लिये आरम्भ कीं। किन्तु इसका सबसे अधिक कार्य सुपीरियर कौंसिल ऑफ कोऑपरेशन के साथ सम्बन्ध व सहयोग स्थापित करना है, जो प्रान्त के लिये शिक्षा व सहकारिता को संगठित करने की केन्द्रीय संस्था है। इस प्रकार इस कड़ी के द्वारा सामाजिक शिक्षा विभाग का विस्तार विभाग, अध्ययन गोष्ठी इत्यादि की सहायता से कार्य चलता है और उसके द्वारा गांव गांव में सहकारी आन्दोलन को प्रशिक्षण मिलता है।

चीन

बैली स्कूल्स सान्दन, कान्सू

दि बैली स्कूल्स :

बैली स्कूल्स का नामकरण एक अमेरिकन मिशनरी जोज़फ बैले के नाम से हुआ। उसे यह आशा थी कि पश्चिमी की ग़ल्तियों और सामाजिक व्यय को बिना दुहराये हुये ही चीन में औद्योगीकरण हो जाये किन्तु दुर्भाग्य से उसकी यह योजना पूर्ण होने से पहले ही उसका देहान्त हो गया।

यहां पर इस प्रकार के ६ स्कूल चल रहे हैं। इनमें पहले स्कूल की स्थापना १६४१ में हुई थी। अधिकांश को पिछले दो तीन वर्ष में आर्थिक संकट और सैनिक आक्रमण के कारण बन्द कर देना पड़ा। जून १६४८ में सान्दन के बेले स्कूल में ३२५ विद्यार्थी थे। जिन में दस लड़कियां भी थी। जब कि अन्य स्कूलों में विद्यार्थीयों की संख्या ४० से ऊपर नहीं थी। जब १६४४ में इसे शुरू किया गया तो इसने अन्य दो स्कूलों के विद्यार्थीयों को भी आश्रय दिया जो दुर्भाग्य से बन्द कर देने पड़े थे। अपने किस्म की इस समय यही एक संख्या है। यद्यपि दो सप्ताह से एक महीने तक के चलने वाले छोटे विद्यालय भी बहुत से स्थानों पर खोले गये हैं, जो औद्योगिक सहकारिता और संघ के सदस्यों व अफसरों को प्रशिक्षण देते हैं।

सान्दन बैली स्कूल का उद्देश्य :

चाईनीज़ इन्डस्ट्रीयल कोऑपरेटिव्ज़ (सी. आई. सी.) तकनीकी प्रशिक्षण का स्कूल होने के कारण इसके उद्देश्य, रूप रेखा व पढ़ाने

के ढंग सी. आई. सी. आन्दोलन के उद्देश्यों और दर्शन से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं। इस आन्दोलन का जन्म शरणार्थियों को बसाने के लिये और सेना तथा जनता के लिये कम्बल, जूते इत्यादि ५०० अन्य वस्तुऐं बनाने के लिये हुआ था। इसके नेताओं के सामने चीन के युद्धोपरान्त औद्योगीकरण का प्रश्न भी था।

उन्होंने सोचा कि इस समस्या का हल चीनी ही हो, विदेशी नहीं, उन्होंने कहा कि उद्योक लोगों के लिये है लोग उद्योगों के लिये नहीं। इसके लिये आवश्यक था कि विकेन्द्रित और सहकारी उपभोग की वस्तुओं का निर्माण किया जाये और साथ ही साथ ग्राम की आर्थिक अवस्था व ग्राम जीवन को भी सुसंगठित किया जावे ताकि कृषि व उद्योगों का विलीनीकरण हो सके।

स्कूल के स्थानापन्न प्रधानाध्यापक महोदय के शब्दों में जिस चीज़ की आवश्कता है वह पूंजी तथा अन्य किसी भी वस्तु से अधिक आवश्यक है और वह है ऐसे लोगों की उपलब्धि जिनमें तकनीकी योग्यता हो और हो सहकारिता का व्यावहारिक ज्ञान। इसलिये इस स्कूल का प्रयास यही रहता है कि ऐसे लोगों का उत्पादन हो जिनमें टैकनीकल योग्यता हो, जो यह जानते हो कि छोटे उद्योगों को किस प्रकार संगठित किया जावे, जिन लोगों की जड़ें गांव में फैली हुई हों, जो किसी भी व्यवसाय को योग्यता से चला सकते हों, और आपस में मिल जुल कर अपनी योजना को सफल बना सकें।

स्कूल के स्थान :

समुद्र तट से ६ हजार फीट ऊपर पश्चिमी कान्सू के अविकसित भाग में बसे हुये निर्धन श्रेणी के (सान्दन गांव में ओल्ड सिल्क रोड के समीप ही स्थित है) यह क्षेत्र कृषि और चरागाहों से पूर्ण है। इसका कुछ उपजाऊ भाग सिंचाई की प्रतीक्षा में यों ही पड़ा हुआ है और कुछ मुख्य खनिज और पेट्रोल भी दबे पड़े हैं। इसमें से जंगल काट डाले गये, नदियों ने इसे बहा डाला, युद्ध, अकाल, भूकम्प और सूखे ने इसे तबाह कर दिया।

इसकी जन संख्या ६००० के करीब है। उनमें से अधिकांश भयंकर निर्धनताग्रस्त हैं, सैकड़ों बच्चे कंपा देने वाली सर्दी में भी

अर्धनग्न घूमा करते हैं। अतः इस प्रदेश में पिछड़े हुये ग्रामीण समाज की लगभग वह सभी समस्यायें हैं जो प्रत्येक ग्राम सहकारी उद्योग को हर जगह बर्दाश्त करनी पड़ती हैं।

और उन्हीं परिस्थितियों के कारण स्कूल का काम चल रहा है जैसा कि वहां के स्थानापन्न प्रधानाध्यापक महोदय ने कहा है "यदि हम यह चाहते हैं कि हमारे प्रशिक्षित किये हुए लोग इस विश्व में जाकर अपना उत्तरदायित्व सम्हालने की योग्यता को बटा लें तो हमें अपने प्रयोग ऐसी कठिन परिस्थितियों में करने पड़ेंगे जो हमारे विद्यार्थियों को वास्तव में झेलने पड़े।" और इससे भी अधिक ग्राम की निर्धनता तथा इसकी शहर से दूरी का स्पष्ट अर्थ है कि लोगों को पढ़ा लिखाकर इस प्रकार के औद्योगिक ढांचे में ढाला जाय कि जो सारे चीन में काम दे सके।

विद्यार्थी, अध्यापक, अमला :

विद्यार्थियों की आयु १२ और २० के बीच है। (सबसे अधिक बच्चे १६ से १८ के बीच के हैं) विद्यार्थी लोग लगभग प्रत्येक प्रान्त से आते हैं। मुख्य रूप से वे किसानों के बच्चे हैं। कुछ युद्ध के कारण हुए अनाथ बच्चे भी हैं।

गांव के अन्य स्कूलों के आठ वर्ष के अनुभव ने यह सिखा दिया है कि बच्चों को छांटते समय पूरी सावधानी बरतनी चाहिये। अच्छे खाते पीते व्यवसायियों के बच्चे तो बाबूगीरी का चाव छोड़कर इधर आते ही नहीं, अतः सबसे अच्छा विद्यार्थी इस बेले स्कूल के लिये वह है जो १४-१५ वर्ष का हो और जिसने कि पहले भी कभी कुछ काम किया हो, प्रारम्भिक शिक्षा पाई हुई हो, और जो ऐसे घर का हो जहां हाथ से काम किया जाता है।

वास्तव में बच्चों को दाखिल करने से पहले उन्हें ६ महीने की अल्पकालिक शिष्यत्व (एप्रेंन्टिसशिप) में रहना पड़ता है। इस समय में उन्हें स्कूल के फार्म पर बड़ी मेहनत से काम करना पड़ता है। और साथ ही साथ शारीरिक परिश्रम के लिये उचित मानसिक विचारधारा भी पड़ती है।

बच्चे की आयु, बुद्धि और अनुभव के आधार पर पाठ्यक्रमों का कार्यकाल २ से ४ वर्ष तक का होता है। विद्यार्थी लोग अपने समय का साधारण कक्षा के पाठयक्रम व रचनात्मक कार्य में बांट लेते हैं। क्लास में पढ़ाये जाने वाले विषयों में चीनी, अंग्रेज़ी, इतिहास, भूगोल, विज्ञान और गणित हैं। सर्दी में ४ घंटे तथा गर्मी में ५ घंटे क्लास लगाई जाती है। इसके अलावा विद्यार्थियों के तीन घंटे प्रतिदिन संध्या के समय अपने काम की तैयारी में लगाने पड़ते हैं और सप्ताह में ५ घंटे मशीन चलाने के लिये।

स्कूल के एक या अधिक प्रशिक्षण आयोजनाओं (ट्रेनिंग प्रोजेक्ट्स) में व्यावहारिक कार्य होता है। इस व्यावहारिक कार्यों में मिट्टी के बर्तन बनाना, कपड़े का काम, चमड़े का काम, मशीन के औज़ार बनाना बिजली व इंजीनियरिंग का काम, कृषि और चरा-गाहों का काम, खान, सिंचाई, रसायन शास्त्र, शीशा, कागज़ बनाना, यातायात आदि सम्मिलित हैं।

विद्यार्थियों के पढ़ने, खाने पीने व रहने के लिये व्यय नहीं करना पड़ता। कुछ विद्यार्थियों को तो प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) विभाग में काम करने के एवज़ में पैसा भी मिलता है। अमले में २२ चीनी व विदेशी तकनीकी अध्यापक हैं और इनकी सहायता करने के लिये क्लास के बड़े लड़के हैं। इसके स्थानापन्न प्रधानाध्यापक न्यूज़ीलैंड के मिस्टर रेवी ऐली हैं। इन्होंने ११ वर्ष तक शंघाई में कारखानों के मुख्य इन्सपैक्टर के पद पर कार्य किया है और तत्पश्चात् सी० आई० सी० के प्रमुख विशेषज्ञ और सलाहकार के रूप में प्रसिद्ध हो गये।

प्रशिक्षण के ढंग और स्कूल की रूपरेखा :

ट्रेनिंग के आखिरी उद्देश्य के अनुसार विद्यार्थियों को केवल सारी कक्षायें और व्यावहारिक कार्य ही नहीं दिया जाता, जिसे कि वे कर सकते हैं बल्कि इसके अलावा जो उत्तरदायित्व वह वहन कर सकते हैं वह भी उन्हें सौंप दिये जाते हैं। यह सिद्धान्त स्कूल की प्रत्येक कार्यवाही में बरता जाता है, कक्षा में, वर्कशाप में, खेतों पर, यातायात में, यात्राओं में और यहां तक कि प्रशासन के कार्यों में भी।

इस प्रकार चूंकि शिक्षक लोग काम में बहुत व्यस्त रहते हैं, इसलिये छोटी क्लासों को पढ़ाने का सारा काम बड़े लड़कों द्वारा होता

है जो विद्यार्थी अध्यापक की भांति काम करते हैं। वह पढ़ाना सीखते हैं और पढ़ाने से स्वयं भी नई बातें सीखते हैं।

व्यावहारिक और प्रशासनिक कार्य में भी वही सिद्धान्त बरते जाते हैं।

तकनीक और रचनात्मक भावना :

भेंटों और अन्य साधनों से धीरे-धीरे स्कूल के उपादानों को और भी अधिक आधुनिक व पूर्ण बनाया जा रहा है। अन्तिम रिपोर्ट (१६४८) से ज्ञात होता है कि अभी भी चीजें बहुत कम और बेमेल ही इकट्ठी की गई हैं। यहां बहुत पुराने औज़ार व तरीकों को बहुत आधुनिक तरीकों और औजारों के साथ काम में लेते हुये देखा गया है।

किन्तु फिर भी यह बात हमें हतोत्साहित नहीं कर पाती है यह तो उल्टा उन्हें प्रशिक्षित करने का ढंग ही बन गया है। रेवी ऐली ने कहा है "मुख्य चीज़ जो हमें निर्माण करनी है वह तो रचनात्मक भावना है।" उन्होंने आगे कहा है "वह टेक्नीशियन जिसमें सामान्य बुद्धि हो और जो पुराने तरीकों की अच्छाइयों को ढूंढ सके हमारे लिये बहुत आवश्यक है।"

पुराने औज़ारों से एक दम नये औज़ारों के साथ काम शुरू कर देना तो रचनात्मक भावना के लिये एक बहुत ही अच्छी प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) है और जब आधुनिक औज़ार इन्धन, शक्ति या अतिरिक्त भाग के न मिलने के कारण वह बेकार हो जाते हैं तो पुराने औज़ारों की सहायता लेना उनमें से अच्छाइयाँ ढूंढ़ निकालने के लिये एक बहुत अच्छा अवसर है।

रेवी ऐली ने लिखा है "हम कितना शीशा बनाते हैं यह कोई विशेष महत्व की बात नहीं है लेकिन महत्व की बात तो यह है कि हम रेन्च्यूंग युआन और उसके सहकारियों में से क्या निर्माण कर सकते हैं? और जब वे लोग अपनी आयोजनाओं का सफलता के साथ निर्वाह करते हैं तो वे यह अनुभव करेंगे कि उन्होंने वातावरण पर स्वामित्व प्राप्त कर लिया है। और जहां कहीं भी उन्हें सामान मिल जावेगा वे लोगों की मन पसन्द चीज़ें तैयार कर सकेंगे।"

विदेशों में भेजे गये विद्यार्थी :

लेकिन यह देखा गया है कि कुछ विद्यार्थियों को अधिक विशेषज्ञता प्राप्त करने की आवश्यकता है और वे इसके योग्य भी हैं किन्तु स्कूल यह सब कुछ नहीं दे पाता। या यह भी हो सकता है कि एक योग्य तकनीक के ज्ञाता के अभाव में स्कूल एक नयी और लाभकारी आयोजना नहीं चलाने पाता। उस समय यदि कोई अवसर आता है तो विद्यार्थियों को चीन के अन्य प्रशिक्षण केन्द्रों में भेजा जा सकता है या विदेशों में, जहां से अपना प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) समाप्त करके वे लोग एक नई शैली ग्रहण कर अपने स्कूल में वापिस लौटें।

इस प्रकार जून सन् १९४८ में दो विद्यार्थियों को "ब्रिटिश यूनाइटेड ऐड टू चाइना" (बी० यू० ए० सी०) के अन्तर्गत लोबुरो के सहकारी कालेज में भेजा गया। वहां एक साल अध्ययन करने के बाद में उन्हें चुनी हुई कपड़ा बुनने वालों की फैक्टरियों में व्यवहारिक काम करना पड़ता है। ऐसा विचार है कि लौटने पर उन्हें बैली स्कूल कपड़ा बुनने वाले (टेक्सटाइल) विभाग में ले लिया जायगा।

२० और विद्यार्थियों को चीन में अन्य प्रशिक्षण केन्द्रों में भेजा गया है, जहां या तो वे विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे या अन्य लोगों के प्रशिक्षण में सहायक होंगे।

ग्रामीण अस्पताल :

बैली के विद्यार्थियों में भी दुर्घटनायें और बीमारियां हो सकती हैं और उस प्रदेश में तो कई बार संक्रामक रोग भी फैल चुके हैं। इस लिए स्कूल ने एक निःशुल्क चिकित्सालय शुरू किया और उसकी देख रेख के लिये एक डाक्टर को नियुक्त किया। ग्रामीण चिकित्सालय हाल ही में इसके कार्यकलाप में जोड़ा गया है।

डाक्टर और उसकी पत्नी, जो एक प्रशिक्षित नर्स थी न्यूज़ीलैंड से कौंसिल ऑफ औरगेनाइज़ेशन (कोर्स को) द्वारा सहायता के कार्य के लिये भेजे गये थे। इस नये अस्पताल में एक ऑपरेशन (चीरा फाड़ी) का कमरा है। तीन चिकित्सालय हैं तथा दो चिकित्सालय (कलीनिक विचाराधीन हैं।

बैली के छः विद्यार्थियों को वहां ग्राम स्वास्थ्य कार्यों के लिये प्रशिक्षित किया जा रहा है। वे लोग वहां, प्राणि शास्त्र, स्वास्थ्य विज्ञान, अणुवीक्षण यंत्र का उपयोग, औषधियां तैयार करना, कीटाणुनाशक औषधियां का ज्ञान तथा चीर फाड़ के काम में सहायता देना सीखेंगे।

डाक्टर और उसकी पत्नी प्रतिदिन लगभग १०० बाहर के रोगियों का निरीक्षण करते हैं, और कुछ रोगी तो जीवन में पहली बार उपचार के लिये ६०-६० मील चलकर आते हैं।

उपभोक्ता लोगों का स्टोर :

१००० डालर और १६० सदस्यों के साथ एक सहकारी स्टोर खोला है इसके लिये स्कूल के क्षेत्र में ही दो कमरे बना दिये गये हैं।

एक लड़के ने इस सारे काम को निम्न शब्दों द्वारा प्रकट किया है "हम लोग हर किस्म की सहकारिता का अनुभव प्राप्त करना चाहते हैं यद्यपि हम लोग अपना सारा काम और कक्षायें भी सहकारिता के आधार पर चलाते हैं फिर भी हम सारा अनुभव प्राप्त करना चाहते हैं। यदि हम इस प्रकार एक दूसरे से मिल जावें तो हम लोग स्कूल के स्टाफ, टेक्नीशियनों, विद्यार्थी और कार्यकर्ताओं की सहायता कर सकते हैं और आपस में अधिक दिलचस्पी और मित्रता का व्यवहार पैदा कर सकते हैं।

पुस्तकालय :

स्कूल में एक चीन पुस्तकालय (५००० पुस्तकें तथा बहुत से अखबार और पत्रिकायें हैं) और एक अंग्रेज़ी पुस्तकालय (४००० पुस्तकें) हैं।

प्रतिदिन—अधिकतर संध्या के समय मुख्य विद्यालय में रहने वाले लगभग ६० प्रतिशत विद्यार्थी चीनी पुस्तकालय से लाभ उठाते हैं। पुस्तकालय का अध्यक्ष एक चीनी अध्यापक होता है और उसकी सहायता के लिये कैटेलॉग (क्रम लगाने) में दो प्रतिशत विद्यार्थी होते हैं।

अंग्रेज़ी पुस्तकालय का उपयोग अधिकतर चीनी और अंग्रेज़ी स्टाफ के सदस्य, बड़े विद्यार्थी जो अंग्रेज़ी पढ़ना जानते हैं, करते हैं।

पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यक्रम :

हर शनिवार की रात को मैजिक लालटैन से पुस्तकें, पत्र-स्लाइडें और मूक चित्र दिखाये जाते हैं।

विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद भी होता है। इसमें ग्राम उद्योग और शहर में केन्द्रित उद्योग स्त्री पुरुष की समानता, "बेले" स्कूल ठीक प्रकार का प्रशिक्षण दे रहे हैं अथवा नहीं ? इत्यादि पर भी वाद-विवाद होता है।

कभी-कभी नाटक और खेल का भी आयोजन किया जाता है।

काम का सहकारी संगठन :

व्यावहारिक कार्य सदैव ग्रुप के द्वारा किया जाता है। व्यक्तिगत आधार पर नहीं। प्रत्येक विभाग में एक सहकारिता की इकाई होती है जहां लोग व्यावहारिक रूप से सहकारिता सीखते हैं, सैद्धान्तिक ही नहीं। प्रत्येक विभाग में बहुधा मीटिंगें होती हैं, नेताओं का चुनाव होता है, रिकॉर्ड और लेखा-जोखा रखा जाता है, अतिरिक्त भाग, गेसोलिन और बचा हुआ तेल, काम में आया हुआ ईंधन, अतिरिक्त व्यय इत्यादि का रिकॉर्ड भी रखा जाता है।

निर्माण, चूने और ईंटों के भट्टे, भट्टी के बर्तन बनाना, यातायात, टैक्सटाइल, चमड़ा, बिजली के वर्कशाप इत्यादि में आपस में एक दूसरे विभाग की सेवायें उपयोग में ली जाती हैं। रेवी ऐली ने लिखा है कि "उन विद्यार्थियों के लिये जो प्रशिक्षण के उपरान्त सहकारिता के कार्य में व्यस्त होंगे हमारी योजनाओं की पारस्परिक संबधता स्वयं ही एक उत्तम कोटि का प्रशिक्षण होगो।"

संघीय स्वरूप :

सामान और सेवाओं के पारस्परिक आदान-प्रदान के लिये, कार्य की सामान्य योजना के लिये, विभिन्न कार्यवाहियों को समन्वय करने के लिये, स्कूल के प्रति दिन के जीवन को आयोजित करने के लिये सारे स्कूल के कामों को आपस में इस प्रकार सम्बन्धित किया जाता है कि लोगों को यह सब संयोजन एक संघ का सा प्रतीत होने लगता है। इस रचना के विभिन्न अवयवों का कार्य प्रायः विद्यार्थियों

द्वारा ही चलाया जाता है जो अपने प्रशिक्षण के अन्तर्गत उत्तरदायित्व का भी पाठ ग्रहण करते हैं।

इस रचना के दो मुख्य अंग सामान्य कार्यसमिति (जनरल अफेयर्स कमेटी) तथा विद्यार्थी संघ (स्टूडैंटस बॉडी) हैं। पहली व्यावसायिक कार्य का आयोजन करती है दूसरी संगठन का। जनरल अफेयर्स कमेटी, जिसका अध्यक्ष स्टाफ का एक सदस्य ही होता है सप्लाई (वितरण) की कठिन और सतत बनी रहने वाली समस्या को हल करती है। इसको वितरण के साधन ढूंढने पड़ते हैं, ठेके देने पड़ते हैं, परमिट (आज्ञापत्र) प्राप्त करने पड़ते हैं, और ट्रक इत्यादि भेजने का काम करना पड़ता है। यह यातायात विभाग के निकट सहयोग से कार्य करती है और स्कूल की व्यावसायिक समिति स्टॉक, रसद विभाग, खाद्य विभाग, जनरल स्टॉक भी इसकी सहायता करते हैं।

उदाहरण के लिये "स्कूल बिज़नेस कमेटी" विद्यार्थियों को उनकी आवश्यकता की वस्तुयें वितरित करती है चाहे वे स्कूल में बनाई गई हैं या बाहर से खरीद कर लाई गई हैं। जैसे कपड़ा, सैंडिल, मौजे, पैंसिल, स्याही, साबुन, टूथब्रश इत्यादि।

खाद्य स्टोर का काम यह होता है कि वह यह उचित निरीक्षण करे कि प्रत्येक रसोईघर में उचित भोजन सामग्री पहुंच गई है और यह सब सामान खाने के खाते में लिख दिया गया है।

केन्द्रीय स्टोर प्रत्येक विभाग की आवश्यकता के अनुसार माल प्राप्त करता है, रखता है और उन विभागों को भेज देता है। कुछ विभाग (जैसे यातायात) अपना सामान अपने स्टोर में ही रख लेते हैं किन्तु यह सब सामान भी केन्द्रीय स्टोर के लेखे में ही दर्ज किया जावेगा।

स्कूल का सामान्य प्रशासन स्कूल के प्रौढ़ लोगों के बोर्ड के हाथ में होता है (जिसकी मीटिंग में विद्यार्थियों के प्रतिनिधि भी आते हैं) किन्तु स्कूल के दैनिक जीवन की समस्याओं का समाधान स्टूडैंट्स बॉडी (विद्यार्थी संघ) या उसकी समितियां द्वारा होता है।

स्टूडैंट बॉडी (विद्यार्थी संघ) में मुख्य दो भाग होते हैं : विद्यार्थियों की कौंसिल तथा निरीक्षण समिति।

विद्यार्थी कौंसिल क्लास में चुने हुये विद्यार्थियों के प्रतिनिधियों द्वारा बनती हैं। यह सप्ताह में एक बार समस्याओं पर वाद विवाद करने के लिये एकत्रित होती हैं। यह दस उपसमितियां की स्थापना भी करती हैं जो निम्न कार्यों में दक्ष होती हैं :—

अनुशासन, खेल, स्वास्थ्य, नाटक और मनोरंजन, भित्ति समाचार पत्र (बाल न्यूज़ पेपर) वाद विवाद प्रतियोगिता, शिक्षा, (कक्षा और पुस्तकालय की समस्याओं पर बहस होती है) भोजन और व्यापार।

निरीक्षण समिति में बड़े लड़के होते हैं। यह विद्यार्थी कौंसिल की कार्यवाहियों पर नियंत्रण रखती है और उन्हें प्रोत्साहन भी देती है, इसकी लिखित कार्यवाहियों का निरीक्षण करती है, तथा एक निश्चित निश्चय पर पहुंचने में इसकी सहायता भी करती है।

विस्तार (एक्सटेंशन) कार्य :

अपने रहने के क्वार्टर्स, खेत, अनाज इकट्ठा करने के गोदाम, वर्कशाप, उपभोक्ता स्टोर, अस्पताल, यातायात के साधन को मिलाकर स्कूल एक समाज की तरह है। बहुत सी वस्तुओं की कमी के कारण हम इसे आदर्श समाज तो नहीं कह सकते किन्तु ग्राम के एक समाज की समस्याओं और कठिनाइयों को साथ लिये आगे की ओर बढ़ रहा समाज अवश्य कह सकते हैं।

यह अपने आप में ही सीमित और बंद सा समाज हो यह बात भी नहीं है। यह अपने कार्यों और उपस्थिति से सारे वातावरण को प्रभावित करता है। दूर-दूर से दर्शकगण इसकी बिजली की बत्तियाँ देखने या इसके ट्रेक्टरों को चलता देखने के लिये उमड़ पड़ते हैं। लेकिन यही सब कुछ नहीं है स्कूल का जीवन स्थानीय जीवन में भी घुलने का प्रयास करता है और स्कूल की कार्यवाहियों से स्थानीय लोगों के पुनर्वास का काम भी होता जाता है। अस्पताल ने इसमें क्या सहयोग दिया यह ज़ोर से लिखने की कोई आवश्यकता नहीं सर्वविदित है। हाल ही में बनाये फार्म से केवल स्कूल की सहायता की चीजें मिल जावें यही पर्याप्त नहीं है; लेकिन यह किसानों को यह भी दिखाता है कि किस प्रकार ज़मीन को बंजड़ होने से व टूटने फूटने से बचाया

जा सकता है, कैसे फिरसे वन लगाये जा सकते हैं तथा साथ ही साथ उन लोगों में नये बीज, औज़ार और तरीकों का भी प्रदर्शन किया जाता है।

स्कूल अपने पड़ौस में उत्तम प्रकार के पानी के पहिये भी लगा रहा है।

स्कूल के कपड़ा बुनने की मशीनों में दो मशीनें ऐसी हैं जो स्कूल की आवश्यकता पूर्ति के लिये ही नहीं चुनी गई हैं, बल्कि गांव वालों के सामने भी उनका प्रदर्शन किया जा सके इसलिये खरीदी गई हैं। वे बनाई भी गांव के लिये ही गई हैं।

गांव के उपयुक्त रासायनिक उद्योग गांव वालों तथा सहकारी समिति के नवयुवकों को सिखाये जा रहे हैं। जैसे मिट्टी के बर्तन, कागज़, चमड़ा, रंगाई, साबुन बनाना, तथा रासायनिकों का विश्लेषीकरण करना वहां के लोगों के जीवन तथा विचारधारा का एक अंग बन गया है।

सब से महत्वपूर्ण काम जो स्कूल ने किये हैं वे हैं कोयले की खान तथा सिंचाई योजना को विकसित करने के।

पहली योजना में कोयले की खान के मजदूरों की दशा सुधारना तथा स्कूल और स्थानीय आवश्यकता के अनुसार कोयला देना आ जाता है।

दूसरी योजना १९४८ की ग्रीष्म ऋतु में पूरी होगी। यह १०,००० एकड़ ज़मीन को सींचने की है। (जिसमें से २००० एकड़ का प्रबन्ध स्कूल करता है)।

दोनों योजनायें चीनी और विदेशी विशेषज्ञों की अध्यक्षता में चाइना रिलीफ मिशन, एग्रीकल्चरल इंडस्ट्रीज़ सर्विस तथा गवर्नमेंट वाटर कंज़रवेंसी ब्यूरो के सहयोग से पूरी की जावेंगी। उन लोगों को बेले के विद्यार्थियों के अलावा १००० मज़दूरों को काम पर लगाना था।

आर्थिक सहायता जो प्राप्त हुई :

विद्यार्थी लोग अपनी और बहुत सी स्कूल की आवश्यकताओं की पूर्ति अपने परिश्रम से पूरा कर लेते हैं। उन लोगों ने अपने रहने

के क्वार्टर्स, भंडार तथा वर्कशाप बनाई हैं या बनाने में मदद की है अपना फर्नीचर व साधारण औज़ार भी वे लोग स्वयं ही बना लेते हैं। अधिकांश खाने की चीजें वहीं पैदा कर लेते हैं तथा अपना कोयला, भी स्वयं खोदते हैं। कुछ अन्य आवश्यक चीजें भी बनाते हैं जैसे साबुन, स्याही, कागज़, कपड़े, बर्तन इत्यादि। फिर भी जैसा कि स्थानापन्न प्रधानाध्यापक ने बार बार कहा है—"हमारा उद्देश्य इन्सान बनाना है चीजें बनाना नहीं, हमारा मुख्य उत्पादन है 'टेक्नीशियन्स' सहकारी टेक्नीशियन्स का।"

स्कूल का उद्देश्य पूर्ण आत्मनिर्भर हो जाना नहीं है। बहुत सी चीजें बाहर से खरीदनी पड़ती हैं, इसलिए एकाएक कीमतों के बढ़ जाने से बहुत आर्थिक संकट आ जाते हैं। ये कठिनाइयां अब तक तो किसी न किसी तरह से बहुत से उन संगठनों की सहायता से हटा दी गई हैं, जो कि सी. आई. सी. आन्दोलन में या बेले स्कूल में दिलचस्पी रखते हैं।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है विदेशी तकनीकी अध्यापकों की नियुक्ति समुद्र पार के सहायता संगठनों द्वारा की जाती है। धन, मशीनें तथा सामान इन्डस्को (सी. आई. सी. के लिए अमरीका की कमेटी) उत्तरी एग्रीकल्चरल इन्डस्ट्रीज सर्विस (ए. आई. एस.) इन्डस्को ने भोजन, कपड़े और किताबें भी दी हैं। कपड़ा और कुछ औषधियां कोरसो न्यूज़ीलैंड इन्टरनेशनल रिलीफ कमेटी, अमेरिकन रेडक्रॉस, फ्रेंडस् सर्विस यूनिट (एफ. एस. यू.) कनेडियन रिलीफ कमेटी से प्राप्त हुई। औज़ार न्यूजीलैंड के कोयले की खानवालों ने, इन्टरनेशलन रिलीफ कमेटी ने व दी अमेरिकन रेड क्रॉस ने भेजे। बिजली के उपादान और एक टेक्नीशियन का वेतन अमेरिका की सी. आई. ओ. ने भेजा। बीज कनाडा की रिलीफ कमेटी ने, कोरसो ने भेजी। टेक्नीकल सहायता उत्तरी तथा एग्रीकलचरल इन्डस्ट्रीज़ सर्विसेज़ ने भेजी। ब्रिटिश यूनाइटेड एन्ड टू चायना (बी. यू. ए. सी.) फ्रैंडस सर्विस यूनिट (एफ. एस. यू.) तथा उनरी ने ए. आई. एस. के द्वारा चीन के कुल लड़कों के विशेष टेक्नीकल प्रशिक्षण के लिए इंगलैंड तथा चीन ने सहायता दी है।

फ्रेन्ड्स एम्बुलेंस यूनिट (एफ. एस. यू.) ने भी कई तरीकों से सहायता दी है जैसे आदमियों को कुछ समय के लिये भेज कर, ट्रकें देकर, काम में लिये चुइये कपड़े तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था करके। "कोऑपरेटिव वीमेंस गिल्ड इन लंदन" ने विशेष आर्थिक सहायता देकर अस्पताल बनवाया है और इसके खर्च के लिए चाइना रिलीफ मिशन आर्थिक सहायता देता है, इसमें डाक्टर व नर्स कोरसो ने भेजे हैं।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्कूल को सहायता की और भी आवश्यकता है परन्तु यह आशा की जाती है कि कुछ समय उपरान्त चीनी उद्योग समितियां इसे चला सकेंगी।

ग्रेट ब्रिटेन : सहकारी संघ की शैक्षिक कार्यवाहियां :

ग्रेट ब्रिटेन में सहकारी शिक्षा की इकाई अलग अलग उपभोक्ता सहकारी समितियां हैं। यद्यपि सारी सहकारी संस्थायें शिक्षा के लिए धन नहीं देतीं, और अतिरिक्त धन जो इस कार्य के लिए वे समितियां अलग रखती हैं, वह भी प्रत्येक समिति का अपने अनुपात ही से होता है। फिर भी शिक्षा के लिए रखा गया वह उपभोक्ता समितियों का धन काफी होता है। १९४९ में यह धन राशि पिछले वर्ष की संख्या ३२, २५१ पौंड से बढ़कर ३३३, ७९१ पौंड पर पहुँच गई। सहकारी उत्पादक समिति, सहकारी थोक समिति, तथा स्काटलैंड की थोक समिति ने भी शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता दी थी।

स्थानीय समितियों का मार्गदर्शन व प्रोत्साहन का कार्य सहकारी संघ अपने शिक्षा विभाग द्वारा करती है। १९४८ की कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार इस विभाग का प्रशासन एक नई शिक्षा का प्रबन्ध करने वाली प्रबन्धकारिणी द्वारा होता है। प्रत्येक सहकारी संघ का एक विभाग एजूकेशन की कौंसिल होती है; उन प्रत्येक के दो सदस्य मिल कर शिक्षा प्रबन्ध कमेटी (एजूकेशनल एक्ज़ीक्यूटिव) बनाते हैं।

शिक्षा विभाग का तात्कालिक देखने भालने का कार्य प्रधान शिक्षा अधिकारी द्वारा होता है जो एक स्थायी अफसर है और साथ ही सहकारी कॉलेज का प्रिन्सिपल भी। उसके नीचे दफ्तर का काम देखने के लिए एक मंत्री होता है, जो साथ साथ शिक्षा विभाग के विस्तृत प्रशासनिक कार्य का भी प्रबन्ध करता है। नवयुवकों के कार्य के लिए,

पत्र व्यवहार के पाठ्यक्रम के लिए, प्रौढ़ तथा टैक्नीकल शिक्षा के लिए एक राष्ट्रीय संयोजक होता है। तथा कॉलेज के लिए एक प्रशासनिक अधिकारी होता है, जो कॉलेज के भीतरी प्रबन्ध के लिए तथा इसके अन्य सहकारी समितियों के साथ सम्बन्ध निर्वाह के लिए उत्तरदायी होता है। सहकारी संघ के प्रत्येक भाग में एक शिक्षा अधिकारी होता है जो संघ का शैक्षिक कार्यवाहियों का प्रतिनिधित्व करता है, तथा स्थानीय संस्थाओं को उनके शिक्षा के कार्यों में परामर्श देता है।

सहकारी संघ की शैक्षिक सेवाओं को चार भागों में बांट सकते हैं स्थानीय समितियों और संगठनों को तकनीकी शिक्षा में सहायता देना, पत्र व्यवहार द्वारा शिक्षा देने का कार्य, सहकारी नवयुवक आन्दोलन का विकास, प्रौढ़ आवास शिक्षा के लिए सहकारी कॉलेज।

स्थानीय उपभोक्ता सहकारी समितियों के पास इस काम को देखने भालने के लिये और विकसित करने के लिये एक शिक्षा समिति होती है। और बहुत सी समितियों के पास तो सारे दिन काम करने वाले शिक्षा सचिव भी होते हैं। कुछ बड़ी समितियां अपने विस्तृत शिक्षा विभाग द्वारा बहुत विस्तृत रूप से सैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यवाहियां चलाती हैं। इस प्रकार लन्दन कोऑपरेटिव सोसाइटी जिसने कि १६४६ में २६०१५ पौंड शैक्षिक कार्य के लिये खर्च किए, सहकारिता के विषय पर कक्षायें लगाती है और वाद विवाह ग्रपों का भी आयोजन करती है, सामान्य सामाजिक और शैक्षिक विषयों पर भाषणों के पाठ्य क्रम है, फिल्म दिखलाती हैं, कान्फ्रेन्स व सामुदायिक स्कूल लगवाती है। व्यवसायिक कान्फ्रेन्सज़ व कर्मचारी आदमियों के लिये तकनीकी पढ़ाई का प्रबन्ध करती है। कर्मचारियों के सम्मेलन (रेलीज़) का आयोजन करती हैं जिसमें प्रबन्धक और शिक्षा कमेटी के सदस्य कर्मचारियों के रिश्तेदारों और मित्रों के सम्मुख भाषण देते हैं तथा संगीत का आयोजन करती है। वही नाटक व थियेटर का प्रबन्ध करती हैं और नौजवान पुरुषों और स्त्रियों के मिले जुले गिल्ड (संघ) बनाती है।

स्थानीय समितियों को अध्ययन के पाठ्य क्रमों में सहायता करने के लिये सहकारी संघ ने सामाजिक और सहकारिता पर, सहकारिता प्रबन्ध और सचिव कार्य के लिये भी पढ़ाई आयोजित की

है। वह सारे विषयों पर पाठय विषय बनाती है, परीक्षाओं का आयोजन करती है तथा सर्टीफिकेट और डिपलोमा देती है। सन् १९४६ व ४७ में दिवस, व संघ कक्षायें (जिनमें शामिल होने के लिये सहकारी समिति के कर्मचारियों को काम करने के समय पर भी छोड़ दिया जाता है) ५४ सहकारी समितियों द्वारा चलाई जाती थी और जिसमें ३२१२ विद्यार्थी आते थे। टेक्नीकल शिक्षा की ३४३ कक्षायें थीं व४८६९ विद्यार्थी सहकारी संघ में रजिस्टर्ड थे, सामाजिक विषयों में २१० कक्षायें थीं और ३९९८ विद्यार्थी थे। इनके अलावा बहुत से सामाजिक और तकनीकी पढ़ाइयों के सहकारी संघ से रजिस्टर्ड नहीं थे। इसी प्रकार के सांस्कृतिक व नाटकीय दल भी थे, अल्पकालिक स्कूल व कान्फ्रैन्सेज़ भी थीं।

पत्र व्यवहार द्वारा पढ़ाई के अन्तर्गत १९४६-४७ में सामाजिक प्रबन्धक और सचिवालय के कार्यों को सीखने के लिये २६६१ विद्यार्थी लगे हुये थे। यह काम भी युद्ध के दिनों और दूसरे काम की तरह हानि उठा चुका था। लेकिन धीरे-धीरे पूर्ण करने का प्रयास कर रहा था।

बच्चों और नवयुवकों में शैक्षिक व सामाजिक कार्यवाहियां बहुत दिनों से विभिन्न उपभोक्ता समितियों द्वारा चलाई जा रही थीं। १९४२ में इन कार्यवाहियों को सहकारी नवयुव आन्दोलन में शामिल कर दिया गया था। यह छोटे बच्चों के ग्रुप और नवयुवकों के क्लब का राष्ट्रीय संगठन था। इसमें ७ से ११ वर्ष तक के बच्चों के लिये प्लेवेज़, ११ वर्ष से १५ वर्ष के बच्चों के लिये पाथ फाइन्डर्स और १५ से २१ वर्ष के आदमियों के लिये यूथ नामक क्लब थे। सब इकाइयां, स्थानीय सहकारी समितियों के सहयोग से बनाई जाती है। और सहकारी संघ का काम इनको जागृत रखना, परामर्श देना, और संयोजित करना है।

सहकारी (नवयुक आन्दोलन) की सदस्यता सब नौजवानों के लिये खुली हुई है। यों तो यह अनेकों कार्य करती है किन्तु मुख्यतः यह सहकारिता के सामाजिक महत्व को समझाने में लगी हुई है। १९४८ के लिये तो हमें ठीक-ठीक आंकड़े नहीं मिल पाते, किन्तु फिर भी विभिन्न ग्रपों और उनके सदस्यों की संख्या उपलब्ध है; उसके अनुसार पाथ फाइन्डर्स ने २५४ ग्रुप, सदस्य संख्या ७७२५, यूथ क्लब में ३०२

ग्रुप, सदस्य संख्या १६६३८। इस प्रकार कुल ग्रुपों की संख्या ७८२ है और उनके सदस्यों की संख्या ३११, १७६ है।

सहकारी कॉलेज जिसको हाल ही में अपने नये स्थान स्टेनफोड हॉल, लोबोरों में स्थानांतरित किया गया है, इसकी स्थापना १६१६ में हुई थी। उसको तीन निकायों में विभक्त किया गया है; सामाजिक, प्रबन्धकीय और साचिविक। विद्यार्थी लोग प्रायः तीनों (टर्म्स) अवधियों में रहते हैं। उन लोगों को सहकारी संघ की राष्ट्रीय निधि से, संघ के ज़िलों व विभागों से व्यक्तिगत थोक और परचून समितियों से तथा कभी सरकारी काम से भी वज़ीफा मिलता है।

१६४७-४८ के वर्ष की प्रथम अवधि में ८६ विद्यार्थी आये और उन्हें तीन इकाइयों में निम्न प्रकार विभक्त किया गया।

सामाजिक ३६, प्रबन्धकीय २८ और साचिविक २२, इनके अतिरिक्त उपनिवेशिक भागों से १२ विद्यार्थी आये। इन लोगों के लिए उपनिवेश कार्यालय की प्रार्थना पर औपनिवेशिक सहकारिता की पढ़ाई का आयोजन किया गया। इसमें अतिरिक्त कॉलेज, स्टैन फोर्ड हॉल तथा अन्य स्थान पर ग्रीष्म कालीन विद्यालयों का भी विस्तृत आयोजन करता है।

अपनी शिक्षा की नीत में ब्रिटिश सहकारी आन्दोलन जनता के अधिकारियों और अन्य संगठनों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न करना है। जहां तक टेक्नीकल और प्रौढ़ शिक्षा का सम्बन्ध है एजूकेशन ऐक्ट्स १६४४ (इङ्गलैंड और वेल्स) तथा १६४५ (स्कॉट लैंड) के अनुसार स्थानीय शिक्षा अधिकारियों को आगे की शिक्षा के लिए (चाहे वह प्रौढ़ शिक्षा हो या टेक्निकल) पर्याप्त सुविधायें देनी पड़ती हैं। उन लोगों की योजनायें बनाने में भी इनको उन योजनाओं का आदर करना पड़ता है। सहकारी संघ के इस प्रकार की संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करता है, जैसे नेशनल फाउन्डेशन फॉर एडल्ट एजूकेशन (जिसका कि प्रमुख उद्देश्य प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में व्यस्त संस्थाओं को आपसी मामलों पर सहकारिता का आभास कराना) दी कौंसिल फॉर एजूकेशनल ऐडवान्स (नेशनल यूनियन ऑफ टीचर्स वर्कर्स ऐजूकेशन एसोसियेशन, दी ट्रेडस् यूनियन कांग्रेस और कोऑपरेटिव यूनियन है ताकि प्रगतिवादी शिक्षा

के क़ानूनों के माग में कोई बाधा न हो सके) दी वर्कर्स एजूकेशन एसोसियेशन, दी ब्रिटिश एसोसियेशन फॉर कमर्शियल इन्डस्ट्रियल एजूकेशन इत्यादि इत्यादि । इन सबका उद्देश्य जनता में जागृति उत्पन्न करना है।

सहकारिता आन्दोलन जनता की शिक्षा संस्थाओं तथा अन्य शिक्षा संगठनों में, उनके पाठ्यक्रमों में सहकारी अध्ययन को सम्मिलित कराने का प्रयत्न करता है। यद्यपि उस दिशा में किए गये प्रयास अभी भी बहुत कम हैं और अब भी केवल सहकारी आन्दोलन के प्रत्यक्ष शिक्षा के साधन ही ग्रेट ब्रिटेन में सहकारिता के सिद्धान्त शैलियों के अध्ययन का माध्यम बने हुए हैं।

(द) भारत बम्बई प्रान्त में सहकारी शिक्षा

१९४६ तक बम्बई में सहकारी शिक्षा और प्रशिक्षण की दो एजेंसियाँ थीं। पहली एक बम्बई प्रान्तीय सहकारी इन्स्टीच्यूट (स्थापित सन् १९१८) जो सहकारी संस्थाओं के आदमियों को शिक्षा व प्रशिक्षण देने के लिये स्थापित की गई थी, दूसरा सहकारी विभाग था जिसने अपने कर्मचारियों के प्रशिक्षण का भार लिया हुआ था।

अप्रैल १९४६ में सर जे० ए० मदान की अध्यक्षता में सहकारी शिक्षा पर बम्बई प्रान्त द्वारा एक समिति स्थापित की गई, जिसका कार्य मौजूदा प्रबन्धों का अवलोकन करके भविष्य के लिए सुझाव देने का था। मुख्य बात जो समिति ने अक्टूबर १९४६ में बताई वह यह कि प्रान्त की सहकारी शिक्षा और प्रशिक्षण का प्रशासन बम्बई प्रान्तीय सहकारी इन्स्टीच्यूट की अध्यक्षता में केन्द्रित किया जावे। धीरे धीरे उसके कार्य कर्ताओं में परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन कर दिया जावेगा।

इन सुझावों को जिन्हें अब अपना लिया गया है हमें बम्बई सहकारिता की प्रगति के आधार पर आंकना चाहिए। युद्ध की परिस्थितियों ने जो अभिवृद्धि करदी थी उसने सामान्य रूप से सहकारिता आन्दोलन को बहुत बढ़ा दिया था। इस स्थिति में ग्रामीण ऋणदाता बहुत सी समितियों के कार्यक्रमों में भी उनको अन्य काम करने की आज्ञा देकर वृद्धि कर दी गई थी व सहकारी मण्डी संस्थाओं का तो एक जाल सा ही बिछा दिया गया था, उधर उपभोक्ता समितियों में भी

काफी वृद्धि हो गयी थी। १६४४-४५ के अन्त तक प्रान्त में ६६५३ समितियां थीं जिनकी सदस्य संख्या १,१६१,७६१ थी। इसमें सबसे अधिक कृषि की ऋणदाता समितियाँ थीं (४१६०)। तत्पश्चात् कस्बों की ऋणदाता समितियां ३७२ थीं। जिनमें १८४ बहुद्देशीय संस्थाएं भी थीं। कृषि सुधार के लिए २३१ सहकारी संस्थायें थीं। १५३ जुलाहों और छोटे उद्योगों की समितियां थीं, १२६ गृह निर्माण समितियां थीं। इनमें से कुछ समितियां तो जैसे मंडी और उपभोक्ता समितियां अपनी कार्यवाहियों में बहुत वृद्धि कर चुकी हैं। और कुछ ऐसी आशा है कि कुछ जैसे छोटे उद्योग समिति आदि, सहकार विभाग की युद्धोपरान्त योजना के अन्तर्गत बढ़ जावेगी।

भूत, वतमान और भविष्य की प्रगति की आशाओं ने मदान कमेटी को यह विश्वास करा दिया कि सरकारी समितियों का भविष्य उज्ज्वल है। उसने लिखा "हमारे प्रान्त में सहकारिता आन्दोलन अब उस स्तर पर है जहां से उसके प्रचार वृद्धि के लिये हमें अपने कर्मचारियों को उचित प्रकार से प्रशिक्षित करना पड़ेगा।" कमेटी ने इस तत्व को सामने रख कर कि, इस प्रान्त में सरकारी और ग़ैर सरकारी लोगों ने बहुत निकट सम्पर्क में रह कर कार्य किया है उसने सहकारी विभाग तथा इंसटीच्यूट को शिक्षित करने की योजना को एक दूसरे में मिश्रित कर दिया।

मदान कमेटी द्वारा प्रस्तावित तथा प्रान्तीय इन्सटीच्यूट द्वारा कार्यान्वित योजना के अन्तर्गत बम्बई प्रान्त की सहकारी शिक्षा का ढांचा तीन स्तरों पर आधारित होगा, जैसे ज़िला, प्रदेश और प्रान्त।

ज़िले के स्तर पर :

इस नई योजना की नींव ज़िले के संगठन पर आधारित है। इसका प्रशासन भार ज़िला सहकारी बोर्ड पर होता है जिनका उद्देश्य प्रत्येक ज़िले में शैक्षिक काम चलाने के लिये इन्सटीच्यूट की सहायता करना, सहकारिता कर बढ़ाने में एक स्थानीय रंगमंच की तरह काम करना, तथा वही कार्य जो इन्सटीच्यूट एक प्रान्त के लिये करता है अपने ज़िले भर के लिये करना भी है। इन्सटीच्यूट प्रत्येक ज़िले में एक पूरे वक्त काम करने वाले योग्य शिक्षा के निरीक्षक को नियुक्त करता है जो ज़िला बोर्ड की निगरानी और अध्यक्षता में अपने काम

के अलावा इसके सेक्रेटरी (सचिव) का भी काम करता है। एजूकेशनल सुपरवाइज़रों को अपने अपने ज़िले में सहकारी शिक्षा का संगठन करने के प्रमुख कार्य के अतिरिक्त खोज, प्रकाशन और प्रचार का कार्य भी करना पड़ता है।

जिले में प्रमुख शैक्षिक कार्य कृषि के लिये ऋण दाता समितियों व बहुउद्देश्यीय सहकारी समितियों के सेक्रेटरियों (सचिव) के प्रशिक्षण कौंसिल का प्रबन्ध करना है। यह कोर्स ४ सप्ताह की कक्षाओं के होते हैं और वर्ष में कम से कम दो बार आयोजित किये जाते हैं। जो भी व्यक्ति भली प्रकार कोर्स पूरा कर लेते हैं उन्हें सर्टीफिकेट (प्रमाण पत्र) दिये जाते हैं। कक्षाओं में बैठने की अनुमति तो सचिव का काम न करने वाले व्यक्ति को भी मिल जाती है किन्तु सर्टीफिकेट तब ही मिल पाता है जब वह लोग एक या एक से अधिक सहकारी संस्थाओं में व्यावहारिक कार्य कर लेते हैं। सचिवों के पाठ्यक्रम में विधि (क़ानून) विधान, सहकारी समितियों का और प्रबन्ध, सहकारी समितियों का आय-व्यय लेखा तथा सचिविक अनुभव केन्द्रीय तथा भूमि बन्धक बैंक, कृषि की ऋण देने वाली समितियां, प्रचार और निरीक्षण के लिये उचित आदेश, कृषि और कृषि व्यापार इत्यादि समिलित हैं।

इन पाठ्यक्रमों के अलावा सरकारी समितियों के सचिवों के लिये सात दिन के रिफ्रेशर्स कोर्स भी होते हैं। यह भी सोचा गया है कि प्रत्येक सेक्रेटरी (सचिव) को अपना पाठ्य क्रम समाप्त करने के उपरान्त दो वर्ष के उपरान्त कम से कम एक बार रिफ्रेशर्स कोर्स में अवश्य दाख़िला लेना चाहिये। इसके अतिरिक्त कृषि, ऋण तथा बहु-उद्देशीय समिति की कमेटी के सदस्यों के लिये त्रिदिवसीय कोर्स भी होते हैं। इनका आयोजन ज़िले में होता है तथा इनके पाठ्यक्रम में सहकारी आन्दोलन, सहकारी समिति का कार्य, कर्मचारी, सदस्य तथा सचिवों के कार्य, कोऑपरेटिव (सहकारी) विभाग का सहकारी समितियों के साथ सम्बन्ध, केन्द्रीय वित्तीय संस्था तथा निरीक्षक संघों का काम सम्मिलित है। इसके शैक्षिक कार्यक्रम में सहकारी समितियों के सदस्यों के सम्मुख शिक्षा सलाहकार (एजूकेशनल एडवाईज़र) का भाषण भी होता है। आदर्श बात तो यह है कि प्रत्येक समिति (सोसायटी) के सदस्य, को सहकारिता के प्रारम्भिक सिद्धान्त और व्यवहारिक बातें

तथा सामान्य नियमों, जिनके अन्तर्गत उसकी समिति काय करती है का भी ज्ञान हो।

प्रादेशिक स्तर

ऋण देने वाली तथा बहुद्देश्यीय समितियों व अन्य ग्राम समितियों के प्रशिक्षण का कार्य तो एक ज़िले में भी चलाया जा सकता है। किन्तु बहुत बड़ी बहुद्देशीय समितियों तथा छोटी मंडी की व्यवस्था करने वाली समितियों के सचिवों को प्रशिक्षण में बहुत अच्छे और व्यवस्थित प्रबन्ध की आवश्यकता होती है। जैसे कि सहकारी विभाग तथा सहकारी समितियों के निम्नांकित कमचारियों, सुपरवाइज़र, बैंक इंस्पैक्टर, उप सहकारी समिति अफ़सर, इत्यादि के प्रशिक्षण में होता है। अतः इस प्रकार की विशेष आवश्यकता पूर्ति के हेतु बम्बई में प्रकृति विभाजित तीन भाषा भागों में एक-एक प्रादेशिक स्कूल स्थापित किया है। स्कूलों का प्रशासन एक डिवीज़नल बोर्ड द्वारा होता है, जिसमें इंस्टीच्यूट का एक प्रादेशिक प्रतिनिधि, बोर्ड तथा ग्राम ऋण-दाता समिति द्वारा स्थापित ग्राम ऋण दाता समिति का एक सदस्य, और स्कूल का सुपरिन्टेंडेंट सम्मिलित होंगे। धीरे-धीरे जब कि स्कूल ठीक प्रकार से स्थापित हो जाता है तो ये बोर्ड इंस्टीच्यूट की प्रादेशिक शाखाओं की समिति के रूप में और भी बढ़ सकती हैं और प्रदेश में वे वही काम करना आरम्भ कर सकती हैं जो इंस्टीच्यूट को प्रान्त में करना पड़ता है। सहकारी विभाग द्वारा बहुत से अफ़सरों को पूरे समय के लिये अध्यापकों के रूप में ले लिया जाता है और कृषि विभाग से भी तीन फार्म सुपरिन्टेंडेन्ट कुछ समय के लिये अध्यापन कार्य के लिये, लिये गये हैं। तीनो स्कूल १६४७ में खोले गये और प्रत्येक में विद्यार्थियों की संख्या ५० निर्धारित कर दी गई है। पाठ्यक्रम (अ) सामान्य विषय (ग्राम अर्थ शास्त्र, तथा सहकारिता के सिद्धान्त और व्यवहार, सहकारी व अन्य क़ानून, खाता रखना और आय-व्यय लेखा, सहकारी समितियों का सामान्य प्रबन्ध तथा सचिविक व्यवहार, कृषि के तत्व) और (ब) विशेष विषय (मंडी का कार्य, बैंकिंग, औद्योगिक सहकारिता, उपभोक्ता सहकारिता) इत्यादि विषय सम्मिलित हैं। पांचों सामान्य विषय अनिवार्य हैं और विषेश विषयों में से एक को ऐच्छिक बनाया जा सकता है। प्रादेशिक स्कूल में कोर्स पाठ्यक्रम की अवधि

६ महीने हैं। जिसमें ४ महीने सिद्धान्त के लिये व २ महीने व्यवहार के लिये होते हैं। स्कूल की योजना में सप्त दिवसीय रिफ्रेशर्स कोर्स भी होता है जिसमें भाग लेने वाले लोगों को तीन वर्ष में एक बार अवश्य आना पड़ता है।

प्रान्तीय स्तर

पूना में सहकारी प्रशिक्षण के कालेज की स्थापना ने सहकारी शिक्षा के इस भवन को पूर्ण कर दिया है। यह विभागों के उच्चाधिकारियों तथा सहकारी संस्था में प्रमुख स्थानों पर नियुक्त व्यक्तियों को प्रशिक्षण देगा। इसका कोर्स एक वर्ष का होता है (जिसमें ९ महीने सिद्धान्त और ३ महीने व्यावहारिक अनुभव में लगाये जाते हैं) इसके विपरीत प्रादेशिक में ६ माह का कोर्स होता है। यहां शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी है तथा प्रादेशिक में वर्नाक्यूलर (स्थानीय भाषा)। इस कॉलेज में केवल ग्रेजूयेट ही प्रवेश पा सकता है, प्रादेशिक में मैट्रिक। कॉलेज विद्यार्थियों को "दी हायर डिप्लोमा इन कोऑपरेशन" देता है प्रादेशिक स्कूल "दी हायर कोऑपरेटिव सर्टीफिकेट" देते हैं।

कॉलेज पाठ्यक्रम में (अ) कुछ अनिवार्य विषयों का ग्रप होता है जिसमें सहकारिता के सिद्धान्त, इतिहास और व्यवहार होते हैं, सहकारी तथा अन्य क़ानून, बही खाता रखना तथा जमा ख़र्च व कृषि के तत्व व लेन देन, और (ब) ऐच्छिक विषय, जिनमें से प्रत्येक विद्यार्थी को एक विषय लेना पड़ता है। इसमें सहकारी संस्थाओं का विस्तृत कार्य, सहकारी शिक्षा का कार्य, ऊंचे दर्जे की जमा और ख़र्च और ऑडिटिंग, मंडी का कार्य तथा लेन देन होते हैं।

सहकारी कालेज का प्रबन्ध इंस्टीच्यूट का अध्यक्ष, सहकारी समितियों का रजिस्टार, एक ख्याति प्राप्त शिक्षा शास्त्री, एक ख्याति प्राप्त सहकारी कार्यकर्ता, सहकारी बैंक संघ अध्यक्ष, तथा कालेज का प्रिंसीपल होता है। सहकारी विभाग के तीन उच्चाधिकारियों को यहां प्रिंसीपल और प्रोफेसरों का काम करने के लिये नियुक्त कर दिया गया है। इनके अलावा अध्यापन कार्य करने वालों में तीन थोड़े समय के लिये काम करने वाले विशेषज्ञ भी हैं। १९४८ में ५० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे थे जिनमें से ३२ सहकारी विभाग के अफसर थे, ७ सहकारी संस्थाओं के अफसर थे और १३ बाहर के लोग थे।

अपने यहां काम करने वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने के अतिरिक्त बम्बई प्रान्तीय सहकारी इंस्टीच्यूट, मदान कमेटी के सुझाव पर, सहकारिता का ज्ञान सदस्यों तथा सामान्य जनता में फैलाने का भी काम करता है। इसलिये शिक्षा विभाग के अध्यक्ष ने प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों में सहकारिता पर कुछ पाठ उनकी पुस्तकों में सम्मिलित किये जाने की स्वीकृति प्रदान की है। इंस्टीट्यूट ने ऑल इंडिया रेडियो से भी तय कर लिया है कि प्रतिमास बम्बई स्टेशन से सहकारिता पर तीन भाषण प्रसारित किये जा सके। प्रादेशिक स्कूलों में भी सहकारिता के पुस्तकालय और अध्ययन कक्ष खोले जा रहे हैं।

सहकारी शिक्षा के ढंग में थोड़ा परिवर्तन लाने के लिये अंग्रेज़ी और प्रादेशिक भाषाओं में उचित साहित्य निर्माण की भी आवश्यकता अनुभव हुई है। इसलिये इंस्टीच्यूट ने एक प्रकाशन माला निकालने का विचार किया है। इसमें सहकारिता के नियम सहकारिता पर पाठ्य पुस्तकें भी होंगी। इंस्टीट्यूट अंग्रेज़ी में अपनी एक पत्रिका "दी बौम्बे कोऑपरेटिव क्वार्टरली" निकालता है और यह विचार है कि प्रादेशिक भाषाओं में भी प्रादेशिक स्कूल मासिक व त्रैमासिक पत्रिकायें निकालें। इसके अतिरिक्त इंस्टीच्यूट अंग्रेज़ी में एक बुलेटिन निकालने का भी विचार करता है जिसमें ज़िले के एजूकेशनल (शिक्षा के) सुपरवाइज़रों द्वारा भेजी हुई खबरें तथा सहकारिता, कृषि, ग्राम विकास इत्यादि पर लेख भी प्रकाशित किये जावेंगे।

परिवर्तित सहकारी शिक्षा योजना के चलाने के लिये जिस धन की आवश्यकता पड़ेगी उसके लिये बम्बई की सरकार ने मदान कमेटी का यह सुझाव स्वीकार कर लिया है कि प्रान्त भर की सारी सहकारी समितियां जो ४० प्रतिशत से ऊपर लाभांश घोषित करें वे अपने लाभ में से १ या २ प्रतिशत इंस्टीच्यूट के स्कूल के चंदे में देंगी इस आय से ऊपर जितना व्यय होगा वह सरकार को स्वयं देना पड़ेगा।

(अ) पोलैंड :

जगीलोनियन विश्वविद्यालय में उच्च सहकारी शिक्षा :

१९२४ में जगीलोनियन विश्व विद्यालय (क्रेको) में स्थापित "हायर कोर्स इन कोऑपरेशन" (सहकारिता की उच्च शिक्षा) को १९४६ के आरम्भ में पुनर्संगठित किया गया और काफी विकसित भी

किया। पोलड सहकारिता आन्दोलन के विकास के साथ साथ यह कोस भी अपने क्षेत्र में तथा विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि पाता ही गया। जनवरी १६४६ में शिक्षा मंत्रालय द्वारा सहकारिता की आगे की पढ़ाई के लिए कुछ नए परिनियम बनाए गए, और सितम्बर १६४६ में उसी मंत्रालय द्वारा परीक्षाओं तथा डिग्रियों (अर्थ शास्त्र और सहकारिता) को संचालित करने के लिए नए नियम बनाए गए। इन दो नए उपायों ने हायर इकोनोमिक्स एन्ड कोऑपरेटिव स्टडीज़ (अर्थ शास्त्र व सहकारिता के) नाम के नए स्कूल की नींव जगीलोनियन विश्वविद्यालय में रखी।

चार सर्वप्रथम विभागों (सहकारिता का अर्थ शास्त्र, व्यवसायिक टेकनॉलोजी, सहकारी व्यापार का संगठन, और सहकारी उद्योग का संगठन) के अतिरिक्त पांचों विभाग (आर्थिक और वित्तीय नीति) भी अब खोला जा रहा है। कोर्स खोलने का मुख्य उद्देश्य लड़कों को सहकारिता तथा अन्य सम्बन्धित विषयों में खोज करने के लिए तैयार करना है, कार्यकर्ताओं को सहकारिता तथा अन्य सम्बन्धित यंत्रों के लिये प्रशिक्षित करना है तथा सहकारी स्कूलों के लिए अध्यापकों का प्रबन्ध करना है। (इस समय पौलैंड में ६० सहकारी कॉलिज तथा बहुत से छोटे स्कूल हैं।)

सहकारिता के कोर्स में दाखिल होने के लिए वही योग्यतायें होनी चाहिएँ जो विश्वविद्यालय के अन्य विभागों में मांगी जाती हैं। यानी मैट्रिक का सर्टीफिकेट। इस कार्यक्रम में चार वर्ष का कोर्स है। ३ वष के कॉलेज लेक्चर के बाद पढ़ाये हुए विषयों में परीक्षा होती है। उसके बाद दो अवधियों का व्यावहारिक कार्य होता है और अन्त में एम. ए. की उपाधि के लिए परीक्षा होती है जिसमें अर्थशास्त्र और एक सहकारिता का अर्थशास्त्र, और एक पर्चा प्रोफेसर के संरक्षण में तैयार किया हुआ रहता है। परीक्षा बोर्ड के सदस्य निकायों (फैकल्टी) की कौंसिल द्वारा व शिक्षा मंत्री द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

प्रति वर्ष विशेष विषयों के अतिरिक्त कार्यक्रम में निम्न में से दो विदेशी भाषा (व्यावसायिक पत्र व्यवहार के साथ) लेनी पड़ती है। जैक, अंग्रेजी, फ्रेंच जर्मन तथा रूसी। पहले और दूसरे वर्ष में विद्यार्थियों को व्यावसायिक टेकनॉलाजी में व्यावहारिक कोर्स लेना पड़ता है, तीसरे वर्ष वे स्वतन्त्र होते हैं कि निम्नांकित शाखाओं में से किसी एक में विशेषज्ञता प्राप्त कर लें। इस समय निम्न शाखायें हैं : विक्रय के

लिये कृषि की वस्तु तैयार करना (विशेष करके कृषि सहकारिता की अर्थ व्यवस्था तथा संगठन; कृषिउत्पादन की नींव; फसल पैदा करना, पशुपालन, उत्पादित वस्तुओं को मंडी में भेजना इत्यादि। अन्य विशेतज्ञतायें में भी शीघ्र ही आरम्भ की जावेगी, जैसे अनाज और बीज का व्यापार, दुग्धालय इत्यादि), बीमा, वित्त (विशेष रूप से ऋणदाता समितियों का संगठन और प्रशासन) और शिक्षा (विशेष रूप सेमनोविज्ञान, शिक्षा शास्त्र और सामाजिक स्वास्थ्य विज्ञान), विद्यार्थी लोगों को व्यक्तिगत काम के सेमीनार द्वारा करने के लिए दी हुई अभ्यासों द्वारा प्रशिक्षित कर दिया जाता है।

जगीलोनियन विश्वविद्यालय में स्थित (स्कूल ऑफ कोऑपरेशन) ने सहकारिता स्कूल पौलेंड में बहुत लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। इस समय १००० विद्यार्थी वहां शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और स्थानाभाव के कारण बहुत से प्रार्थियों को लिया भी नहीं जा सकता है। युद्ध के दिनों में जब कोलेज का नवीनीकरण हो रहा था इसे अनेक कठिन परिस्थितियों में से निकलना पड़ा। परन्तु फिर भी कोलेज ने जो कुछ प्राप्त किया है वह उन कठिनाइयों को देखते हुए साधारण बात नहीं है। स्कूल के पास अपना स्वयं का पुस्तकालय है, बहुत योग्य कर्मचारी हैं, तथा इसने अपना पहला वैज्ञानिक प्रकाशन भी निकाल दिया है। ऐसी योजना बनाई जा रही है कि स्कूल का अपना स्वयं का भवन हो। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के रहने के लिए भी रहने के मकान बनाए जा रहे हैं। क्योंकि साथ साथ रहने से विद्यार्थी लोग भविष्य में अपना सहकारी कार्य करने के लिए और भी अधिक योग्य हो जावेंगे।

१६४६ में जगीलोनियन विश्वविद्यालय में स्कूल ऑफ कोऑपरेशन) के मित्र संघ (ऐसोसियेशन ऑफ फ्रैन्डस) की स्थापना हुई। इसके सदस्य लोग सारे देश में से हैं और इसके बोर्ड में सहकारिता आन्दोलन, तथा आर्थिक और प्रशासनिक क्षेत्रों के बहुत सुविख्यात लोग हैं। इसका मुख्य उद्देश्य स्कूल के विभिन्न संस्थाओं के विकास के लिए आर्थिक साधन जुटाने में सहायता करना है।

(फ) स्वीडेन :

वारगार्ड सहकारी स्कूल :

स्वीडन कोऑपरेटिव यूनियन (स्वीडेन के सहकारी संघ) की अध्यक्षता में संयोजित सहकारिता पढ़ाने का कार्य, तीन प्रमुख संस्थाओं

पर केन्द्रित हैं : पत्र व्यवहार स्कूल (स्थापित १६१६), सहकारी अध्ययन क्षेत्र जिसमें से प्रथम की स्थापना १६२१ में हुई, और सहकारी स्कूल वारगार्ड (हमारा घर) जिसकी स्थापना १६२४ में हुई। स्कूल की मासिक पत्रिका "वार टिडनिंग" (हमारा अखबार) तथा साप्ताहिक पत्र 'वी' (हम) का उल्लेख भी आवश्यक है। पिछला पत्र स्वीडिश सहकारी संघ का है और यह प्रमुखतया गृहस्थों का ही पत्र है और किसी प्रकार से भी प्रत्यक्ष रूप से सहकारिता के शिक्षण से सम्बन्धित नहीं है। किन्तु इस समय स्वीडेन के साप्ताहिकों में इसका प्रचार सर्वाधिक है।

"वार गार्ड" में पढ़ाते समय यह पहले से ही अनुमान लगा लिया जाता है कि पत्र व्यावहार के स्कूल के द्वारा विद्यार्थी लोग प्रारम्भिक ज्ञान और कुछ व्यावहारिक अनुभव पहले प्राप्त कर चुके हैं या नहीं ? यह पूर्व अनिवार्य प्रशिक्षण को अनुवर्तित करने का इतना प्रयास नहीं करता जितना कि वह इस प्रशिक्षण को अपने स्वयं मार्ग प्रदर्शन द्वारा अधिक लाभप्रद बनाने का प्रयास करता है।

१६३३ से पत्र व्यवहार पाठ्यक्रम स्कूल से स्वतन्त्र हो गये हैं और स्वेडिश कोऑपरेटिव यूनियन के एक स्वतन्त्र विभाग द्वारा चालू किये जाते हैं। वे सामान्य जनता के लिये हैं और निम्न विषय उनकी परिधि में आ जाते हैं : स्वेडिश भाषा, बही-खाता राजनैतिक अर्थ शास्त्र, सहकारिता इत्यादि।

सरकारी अध्ययन चक्रों की कार्यवाही उनके ढंग और स्वेडिश सहकारी आन्दोलन को उन्नत करने के प्रयास किसी से छिपे नहीं हैं अतः उनके वर्णन में समय नष्ट करना उचित नहीं जान पड़ता।

इन विभिन्न प्रशिक्षण के पारस्परिक अवलम्बन को उचित रूप से जानने के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि सहकारी स्कूल में कुछ पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने के लिए यह आवश्यकता है कि विद्यार्थी ने कम से कम एक शीत ऋतु के पाठ्यक्रम में अध्ययन चक्र में भाग लिया हो जिसने कम से कम एक वर्ष किसी उपभोक्ता समिति में काम न किया हो वह इसमें प्रवेश नहीं पा सकता है, और अन्त में यह कि स्कूल के पत्र व्यवहार द्वारा पढ़ाने में और ज़बानी पढ़ाने में कोई अन्तर नही है बल्कि एक दूसरे के पूरक हैं और समन्वय करते हैं।

स्कूल की तीनों प्रकार की कक्षाओं में प्रवेश के निम्नांकित प्रकार हैं : पहला जिसकी अवधि एक सप्ताह की है वह नवयुवक कर्मचारियों के लिए है जिनकी आयु २० वर्ष के लगभग हो, दूसरा २५ से २७ वर्ष तक के बीच के इन कर्मचारियों व कुछ प्रबन्धकों (मैनेजरों) के लिए (एक महीना) हैं, तीसरा २७ से ३० के बीच के उन कर्मचारियों लिए है, जिनकी रुचि प्रबन्धक (मैनेजर) या इसी प्रकार के किसी उत्तरदायी-पद के लिए हैं।

पहले पाठ्यक्रम में प्रवेश पाने के लिए विद्यार्थी सहकारिता पर पत्र व्यवहार तथा अन्य आदर्श नियमों का पालन तथा स्टोर में काम कर चुका हो दूसरे के लिए उसने बहीखाता, गणित, लेखन शैली, राजनैतिक अर्थशास्त्र, सहकारिता इत्यादि में पत्र व्यवहार का पाठ्यक्रम प्राप्त कर लिया हो। तीसरे के लिये यह आवश्यक है कि विद्यार्थी ने पहले ही पत्र व्यवहार पाठ्यक्रम द्वारा व्यावहारिक नियम पढ़ लिए हों और राजनैतिक अर्थशास्त्र, बही-खाता, इत्यादि में आगे की शिक्षा भी पाई हो। प्रार्थियों ने दूसरा पाठ्यक्रम समाप्त कर लिया हो तथा उनमें योग्य नेता बनने के गुण भी हों।

इसके अतिरिक्त विभिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों के लिए भी स्कूल विशेष पाठ्यक्रम का प्रबन्ध करता है, उदाहरण के लिए निम्नलिखित विभागों के कर्मचारियों के लिये १ सप्ताह का पाठ्यक्रम होता है। पंसारी, कसाई, होज़ियरी, जूते बनाना, मैनेजरों के लिये एक पाठयक्रम (१ महीने से लगाकर ५ सप्ताह तक) अनुपूरक पाठ्यक्रम (१ महीने से ५ सप्ताह तक) और रिफ्रेशर्स पाठ्यक्रम (२ सप्ताह), सुपरवाइज़रों के लिये (एक सप्ताह)। स्वेडिश (कोऑपरेटिव यूनियन) सहकारी संघ की एक सप्ताह की मीटिंग ज़िले के आडिटर्स के लिये होती है।

इस सप्ताह के ऐसे भी पाठ्यक्रम हैं जो प्रबन्ध कमेटी, ज़िला कमेटी, सहकारी अध्ययन चक्र के अध्यक्ष, स्त्रियों के ग्रुप इत्यादि के लिये हैं।

अन्त में दो वर्ष का निवास उन विद्यार्थियों के लिये रखा जाता है जिन्हें विशेष ध्यान से डाइरेक्टर, प्रचार डाइरेक्टर जैसे पदों के लिए चुना जाता है। जब वह विद्यार्थी स्कूल में रहते हैं तो उन्हें सहकारी

प्राफेसर्स के काम के लिये प्रशिक्षित किया जाता है। वह लोग उपभोक्ता समितियों का दौरा करते हैं, उनके कर्मचारीगण में मीटिंग करते हैं और भाषण देते हैं। अधिकांश विद्यार्थी स्टोर मैनेजर होते हैं जो तीनों पाठ्यक्रम भी सीख लेते हैं और उनमें नेता बनने के गुण भी होते हैं। चूंकि वह सारे समय स्कूल में ही रहते हैं अतः उन्हें उतना ही वेतन मिलता है जितना वह लोग अपने पिछले पद पर ले रहे थे।

सिद्धान्त रूप में प्रायः अधिकांश विद्यार्थियो के साथ यह देखा गया है कि पत्र व्यवहार पाठ्यक्रम, स्कूल में रहने का ख़र्च व आने जाने के ख़र्च या तो स्वेडिश कोऑपरेटिव यूनियन (सहकारी संघ) को भुगतने पड़ते हैं या उस सहकारी समिति को जहां वह काम करता था।

जो तरीके स्कूल में काम में लाये जाते हैं उनमें यह बात ध्यान में रखी जाती है कि विद्यार्थी लोगों का आवास यहां अल्पकालिक है और उनका प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों को जो कुछ उन्होंने अध्ययन चक्रों में या पत्र व्यवहारों पाठ्यक्रमों द्वारा प्राप्त कर लिया है उसके विस्तार करने में सहायता देना है। वह लोग प्रमुखतया विद्यार्थियों में उन विषयों में रुचि उत्पन्न कराना चाहते हैं जो उन्होंने पढ़े हैं अतएव वे उसी के लिये ज्ञान प्राप्त करने के साधन देना चाहते हैं-ज्ञान देना नहीं। पाठों में विद्यार्थी और शिक्षकों में आपस में प्रश्नों का पूछा जाना भी सम्मिलित होता है। विद्यार्थियों की खोज के लिये प्रशिक्षण किया जाता है और इस काम के लिये खोज (अनुसंधान) दलों में संगठित की जाती है ताकि अध्यापक के निर्देशन में वह लोग यह जान सकें कि खास विषय में खोज (अनुसंधान) किस प्रकार की जाती है।

जहां कहीं भी ज़ुबानी पाठों में या व्यावहारिक अभ्यासों में किसी यथार्थ (ठोस) वस्तु का वर्णन आता है वहीं उन्हें पढ़ानें में यथार्थ रीतियों का उपयोग किया जाता है। ऐसी स्थिति में यथासाध्य वास्तविक वस्तुओं को ही काम में लाते हैं, चीज़ों को, सजाकर प्रदर्शन के लिये खिड़की में रखते हैं, स्वेडिश कोऑपरेटिव यूनियन के उत्पादन के स्थानों का दौरा भी किया जाता है।

स्कूल, सहकारी आन्दोलन के निकट सम्पर्क में रहता है। अध्यापक और उनके सहायक लोग, सहकारी समितियों में जाते हैं। स्टोरों

में रात्रि को कक्षायें लगाते हैं। दिन में स्वयं स्टोर में काम करते हैं। सदस्यों के सम्मुख भाषण देते हैं, वाद विवाद सभायें करते हैं तथा प्रबन्धकों तथा ज़िला कमेटियों से मिलते जुलते हैं। इन सम्पर्कों से पढ़ाने का उद्देश्य शीघ्रता से आवश्यकताओं के अनुसार बदला जा सकता है। और उसी प्रकार अपने पढ़ाने की रीतियां भी ठीक की जा सकती हैं। "वार टिडिनिंग" नामक पत्र कर्मचारियों के सम्बन्ध में परामर्श देता है और स्पष्टीकरण भी करता है।

अन्त में स्कूल अपने विद्यार्थियों के भविष्य के कार्यक्रम का अनुसरण करता है। इस प्रकार यह उन लोगों के गुणों, अवगुणों, आवश्यकताओं एवं समस्याओं का पूरा पता लगा लेता है क्योंकि आंशिक रूप में उनकी सफलता, असफलता इत्यादि इसकी स्वयं की सफलता या असफलता भी है। इन अनुभव से यह अपनी कार्यवाहियों के लिये लाभदायक शिक्षा ग्रहण करने की चेष्टा करता है, और सहकारी संस्थाओं के किसी पद के लिये व्यक्ति चुनने में सहायता भी करता है। साथ-साथ वह सहकारी संघ कोऑपरेटिव (यूनियन) के काम दिलाऊ ब्यूरो को भी सहायता प्रदान करता है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उसको देखते हुये यह बड़ी दिलचस्प बात होगी कि २० से ३० वर्ष की आयु के बुद्धिमान नवयुवक का 'आदर्श' अध्ययन-काल का कुछ हाल मालूम किया जावे।

एक या दो साल तो वह पत्र व्यवहार स्कूल के पाठ्यक्रमों का अनुसरण करेगा, और इनके साथ-साथ ही जहां वह काम करताहै वहां व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त करता चला जावेगा। इसके उपरान्त एक सप्ताह 'वार गार्ड' में व्यतीत करेगा, जहां वह ख़ास तौर से यह चक्र सीखेगा कि किस प्रकार अध्ययन करना चाहिये। इसके उपरान्त वह अपना अध्ययन-पत्र व्यवहार द्वारा जारी रखेगा। जिसमें खाते रखना तथा सहकारी साहित्य की भूमिका होगी और फिर अध्ययन के वाद विवादों में सम्मिलित होगा। इसके बाद किसी छोटी स्टोर का मैनेजर हो सकता है। सिद्धान्त रूप में मैनेजर बनने से पहले या कभी-कभी नियुक्ति हो जाने के बाद उसे स्कूल में ५ सप्ताह के जवानी पाठ्यक्रम में सम्मिलित होना पड़ेगा जहां उसे चीज़ों के गुण व उपयोग के बारे में तथा प्रसार, सम्पर्क, आंकड़े रखना, दुकान का प्रबन्ध इत्यादि के बारे

में बताया जावेगा। इसके उपरान्त वह अपना पत्र व्यवहार द्वारा अध्ययन चालू रखेगा जिसमें राजनैतिक अर्थशास्त्र, खाते रखना और व्यापारिक नियम होंगे और उसी समय उसे विभिन्न सहकारी समितियों में अनुभव प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया जायेगा। अन्त में उच्च पाठ्यक्रम के लिये (५-५ सप्ताह के लिये) स्कूल में दाखिल किया जावेगा जहाँ पर उसे नेता बनने के गुणों को सीखना पड़ेगा तथा जनता में बोलने की आदत डालनी पड़ेगी और राजनैतिक अर्थशास्त्र सहकारिता इत्यादि के अपने ज्ञान को पूर्ण बनाने के लिये साधन जानने पड़ेंगे।

और सब से अन्त में यदि वह बहुत योग्य हो तो दो वर्ष के लिए उसे स्कूल में (ऐसिस्टेंट) सहायक प्रोफेसर के प्रशिक्षण के लिये बुलाया जावेगा जिससे वे सहकारिता आन्दोलन में ऊँचे पद पर काम करने के योग्य बन जायें।

(ग) स्वीटजरलैंड :

सहकारी शिक्षा :

विशेष दशाओं में अपने उद्देश्यों के अनुसार सहकारिता के अध्ययन को तीन प्रकार के पाठ्यक्रमों में बांटा जा सकता है :

(१) वे कि जिनका उद्देश्य कर्मचारियों को व्यवसाय का प्रशिक्षण देना है। साथ ही साथ यह अध्ययन प्रबन्ध करने वाले व्यक्तियों, सहकारी समितियों के अंकेक्ष (ऑडीटर) तथा अध्ययन चक्रों के नेताओं की योग्यता बढ़ाते हैं।

(२) वे जिनका उद्देश्य सहकारी समितियों की शिक्षा है।

(३) सहकारिता पर उच्च पाठ्यक्रम (जो कि विश्वविद्यालय, टेक्नीकल या कमिर्शियल हाई स्कूल में दिया जाता है)।

स्वीडन की तरह स्विटज़रलैंड में भी सहकारिता आन्दोलन की अध्यक्षता में उसकी आर्थिक व नैतिक सहायता द्वारा सहकारिता प्रशिक्षण को उन्नत करने का प्रयत्न आरम्भ किया गया। इस कार्य में स्वीस यूनियन आफ कनज्यूमर्स कोऑपरेटिव सोसाइटीज़ (यू. एस. सी.) और इससे सम्बन्धित समितियों ने महत्वपूर्ण कार्य किया है।

यूनीवर्सिटी और कॉलेज की शिक्षा को छोड़ कर स्विस आन्दोलन का वास्तविक शिक्षा केन्द्र बेसले के समीप फ्रेडॉर्फ़ का कोआपरेटिव सैमिनार ही माना जा सकता है।

इस संस्था की स्थापना १६२३ में हुई। और अब १६३३ में इसे विक्रय की प्रशिक्षण के लिये व्यवसायिक स्कूल मान लिया गया है। इसके पास दस व्यक्तियों का एक स्टाफ है और अब यह केवल सहकारिता समितियों के विभिन्न कार्यों के लिये प्रशिक्षित करने का ही उद्देश्य नहीं रखता वरन् जनता के लिये अनेक प्रकार की कक्षाओं, भाषणों तथा फिल्म शो इत्यादि से सहकारिता के विचार को आर्थिक क्षेत्र में फैलाने में भी सहायता करता है।

१६४६ तक जो भी व्यक्ति फ्रेडॉर्फ़ में विभिन्न पाठ्य क्रमों के लिये आता था उसे पढ़ाई, खाने पीने व रहने के लिये कुछ भी नहीं देना पड़ता था। परन्तु १६४६ से उन लोगों को अपने रहने के ख़र्चे के लिये थोड़ा सा धन देने के लिये कहा गया है।

जो शिक्षा उन्हें दी जाती है उसमें पहली चीज़ जो सम्मिलित है वह अल्पकालिक कार्यक्रम है। जो प्रायः गर्मियों में होता है और कई दिन से कई सप्ताह चलता है। उदाहरण के लिये रिफ्रैशर कोर्स प्रशासन के कर्मचारियों के लिये, कमेटी के सदस्यों के लिये, अंकेक्षकों (ऑडीटर्स) इत्यादि के लिये होता है। कुछ पाठ्यक्रम गृहस्थियों के लिये, अध्ययन चक्र के नेताओं के लिये, सहकारी नवयुवक संघों के लिये और अध्यापकों के लिये भी (जो सहकारीं आन्दोलनों में दिलचस्पी रखते थे) होता था।

दूसरे ऐसे पाठ्यक्रम होते हैं जो विशेष रूप से विक्रय कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिये होते हैं। "स्त्रियों को विक्रय कार्य सिखलाने के लिये एक आदर्श स्कूल" माध्यमिक शिक्षा प्राप्त लड़कियों के लिए चलता है जिसमें १४ विद्यार्थी लिये जाते हैं। (सात विद्यार्थी पाठयक्रम के प्रति वर्ष के लिये) इसमें दो साल का कोर्स (पाठ्यक्रम) होता है। इसके बाद एक परीक्षा के उपरान्त सर्टीफिकेट दे दिया जाता है। विक्रय शिक्षण के सिद्धान्त और व्यवहार के बहुत से विषयों के अलावा (वस्तुओं को छांटना और खरीदना, चीजें भेजना, विनिमय, टेलीफोन द्वारा चीज़ें बेचना, खिड़कियां सजाना, चीजों को पैक करना और

प्रचार के बहुत से तरीके इत्यादि) इसके अलावा विद्यार्थी जर्मन और फ्रैंच की कक्षाओं में भी आ सकते हैं। जिसमें शुद्ध लेख, व्यावसायिक पत्र व्यवहार, बीजक बनाना, शिकायतें तैयार करना इत्यादि भी सम्मिलित हैं। इसके अलावा उन लोगों को आय-व्यय लेखा, व्यावसायिक क़ानून की शिक्षा, राजनैतिक व सामाजिक विज्ञान और नागरिकता की भी आवश्यक शिक्षा दी जाती है। घरेलू अर्थ व्यवस्था, भोजन बनाना, स्वास्थ्य विज्ञान, मरीज़ों की सेवा सुश्रूषा और अन्य बहुत से विषयों में भी प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती है। फ्रेडॉर्फ़ सैमीनार चार महीनों के उच्च पाठ्यक्रम का आयोजन करती है और उसे बेसले और ज़िले की जनरल कन्ज्यूमर्स सोसाइटी के नौ सिखिये व्यक्तियों के लिये रखती है। पहले से प्रशिक्षित विक्रय कर्मचारियों के लिये उच्च सैद्धान्तिक और व्यवहारिक पाठ्यक्रम यह भी चलाये जाते है जो चार महीने के होते हैं। इनमें लगभग ६० आदमी पढ़ते हैं।

विभिन्न शाखाओं में वस्त्र, जूते, तथा घर में काम में आने वाली वस्तुएं इत्यादि के लिये विशेष पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं, जिन में इन शाखाओं में काम करने वाले व्यक्तियों को प्रवेश मिल सकेगा। १९४७ में एक छः मास का प्रशिक्षण प्राठ्यक्रम शुरू किया गया था। यह हर दूसरे वर्ष शुरू किया जाता है और स्त्रियों को वस्तु विक्रय करने के ज्ञान को उचित रूप से बढ़ाने का प्रयत्न करता है। उसी छः महीने का एक पाठयक्रम सामान्य प्रशासन में भी शुरू किया गया था जिनमें १०-१२ आदमियों ने दाखिला लिया। उन लोगों को परचून बिक्री वाले सर्टीफिकेट के लिये होता है और सहकारी समितियों के दफ्तरी अमले को प्रशिक्षित करता है। यह शिक्षण दो महीने के पत्र व्यवहार के पाठ्यक्रम द्वारा आरम्भ होता है और सैमीनार दो महीने के अध्ययनोपरान्त पूर्ण होता है।

अकेले फ्रेडॉर्फ़ सैमीनार पूरी-पूरी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ है। अतः १९४७ में फ्रेंच बोलने वाले स्विटजरलैंड के लोगों के लिये भी एक उसी प्रकार की संस्था आरम्भ की गई। इसका नाम सैन्टर कोऑपरेटिव रोमैन्ड है। और लौसाने के समीप चैट्रीज़ पर बसा हुआ है। इसके लिये धन यू० एस० सी० तथा उससे सम्बन्धित वैस्ट स्विस सोसाइटीज़ ने दिया है।

हमें स्विस कन्ज्यूमर्स कोऑपरेटिव मूवमेंट (उपभोक्ताओं के सहकारी आन्दोलन) की सफलता को छोड़ कर अन्य सहकारी केन्द्रों द्वारा किये गये शिक्षा के कार्य को भी ध्यान में रखना पड़ेगा। यूनियन ऑफ ईस्ट स्विस एग्रीकलचरल कोऑअरेटिव सोसाइटीज़ (वोल्ग) से सम्बन्धित कोन्जुम्वेरिन जो विंटरथर में है १६३४ से अपने स्टाफ के लिये भाषण तथा अध्ययन ग्रुपों का आयोजन कर रही है। उसने कर्मचारियों के विशिष्ट कामों के लिये सहकारिता पर कक्षायें चला रखी हैं। उसी प्रकार "फेडरेशन ऑफ रेफेसेन फंड्स ऑफ दी कैंटन ऑफ वॉड" ने दिसम्बर १६४६ से खजांचियों तथा फंड्स की कमेटियों के सदस्यों के लिये पढ़ने के प्रादेशिक पाठयक्रम तथा प्रबन्ध सम्बन्धी व्यावहारिक पाठय क्रम चला रखे हैं।

तीन स्विस विश्वविद्यालयों में सहकारिता साधारण पाठ्यक्रम का ही विशेष भाग बन गया है। १६४४ में जेनेवा के विश्वविद्यालय ने सहकारिता अध्ययन के लिये एक सर्टीफिकेट आरम्भ किया जो फैकल्टी ऑफ सोशल एंड इकॉनॉमिक साईन्स के मास्टर और डाक्टरों को दो अवधियों के अनुपूरक अध्ययन उपरान्त दिया जाता है। इसके लिये आवश्यक है कि विद्यार्थी ने भाषण सुने हों, सहकारिता के कार्य में भाग लिया हो, वर्ष में दो पर्चे इन पर प्रेषित किये हों, और दो महीने का समय किसी सहकारी संस्था में व्यतीत किया हो। इनके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि उन्होंने बहुत सी लिखित और ज़बानी परीक्षायें भी पास की हों। वे कक्षायें तथा लेक्चर जिनके उपरान्त यह सर्टीफिकेट दिया जावेगा एक तरफ तो निकाय (फैकल्टी) में नियमित शिक्षण के रूप में दिये जाते हैं और दूसरी तरफ इनका अध्ययन सहकारी अर्थशास्त्र के विभिन्न भागों के विशेषज्ञों को सौंप दिया जाता है।

वेसिले और बर्न के विश्वविद्यालयों ने क्रमशः सहकारिता का विभाग १६४५ और १६४८ में आरम्भ किया। पीपल्स यूनीवर्सिटी वेसिले में नियमित रूप से सहकारिता पर कक्षायें लगती हैं और कभी-कभी वर्कर्स यूनीवर्सिटी, जेनेवा में भी। अन्त में, सैंट गाल में गत दो वर्षों से कमर्शियल हाई स्कूल के पाठ्यक्रम में सहकारिता का पूरा पाठ्यक्रम आरम्भ किया है, और फेडरेल पॉलीटेकनीकल स्कूल

भी, ज्यूरिच में बहुत वर्षों से कृषि में सहकारिता पर पाठ्यक्रम चला रहा है।

(घ) संयुक्त राज्य अमेरिका

जी० एल० एफ० स्कूल ऑफ कोऑपरेटिव एडमिनिस्ट्रेशन

काम करो और पढ़ो :

'कोऑपरेटिव ग्रेन्ज लीग फार्मर्स एक्सचेंज' (जी० एल० एफ०) नामक न्यूयॉर्क स्टेट की वितरक और मंडी सहकारी कमेटी ने १६३७ में 'जी० एल० एफ० स्कूल ऑफ कोऑपरेटिव ऐडमिनिस्ट्रेशन' स्थापित किया। और १६४० में अपने कर्मचारियों के लिये प्रशिक्षण योजना का आयोजन किया। यह प्रोग्राम किसानों को सहकारिता की आधारभूत बातों को बताने के लिये खुला था। और इस बात पर आधारित था कि काम करने से लोग बहुत अच्छी तरह सीख सकते हैं। यही कारण है कि यहां इस बात पर जोर दिया जाता है कि सहकारिता पर शिक्षा मुख्य रूप से व्यावहारिक हो।

संगठन :

अधिकांश जी० एल० एफ० स्कूल तीन तरह के हैं : स्थानीय, प्रादेशिक और केन्द्रीय। स्थानीय स्कूलों में केवल एक ही समाज होता है और वे प्रायः एक माह में एक बार अवश्य मिलते हैं। केवल वे कर्मचारियों के लिये ही नहीं खुले रहते हैं वरन् भावी कर्मचारियों और जी० एल० एफ० के मित्रों के लिये भी हैं। प्रादेशिक स्कूल उस प्रदेश के काम करने वाली ऐजेन्सियों के कर्मचारियों के लिये होते हैं। इसमें बहुत से समाज या व्यक्तियों के लोग होते हैं। इसलिये जी० एल० एफ० की सीमा का काम चलाने के लिये २५ व ३० ऐसे स्कूलों की आवश्यकता है। ये स्कूल प्रायः शाम को लगते हैं। ये केन्द्रीय स्कूल जी० एल० एफ० के सारे भाग के कर्मचारियों के लिये प्रायः ईथाका, एन० वाई० पर लगाया जाता है। दोनों ही प्रादेशिक और केन्द्रीय स्कूल या तो एक विभाग के लोगों या बहुत से विभाग के कर्मचारियों को शिक्षित करते हैं। लेकिन दोनों ही तरीकों से वे अन्तर्विभागीय कार्य कर सकते हैं।

विद्यार्थी दल :

सबसे बड़े और सबसे गहन केन्द्रीय स्कूल पाठ्य क्रम, स्टोर मैनेजरों, सहायकों और खरीदने वाले एजेन्टों के लिये होते हैं। वे प्रायः तीन दिन चलते हैं और इनके उपस्थित होने वाले लोगों की संख्या १०० से ऊपर होती है। दूसरे केन्द्रीय स्कूल भी उसी प्रकार से मन्डी विभाग के मैनेजरों के लिये, खेतों से सम्बन्ध रखने वाले आदमियों के लिये, पैट्रोल मैनेजरों के लिये, खाद बनाने वाले कारखानों के सुप्रीन्टेंडेंटों के लिये, बहुत से विभागों के फोरमैनों, खेतों को वस्तु वितरण करने वाले व्यक्तियों और प्रबन्ध करने वाले व्यक्तियों के लिये, सेक्रेट्रियों, स्टेनोंग्राफरों तथा स्टोर और क्षेत्रीय कार्यालयों में काम करने वाली स्त्री कर्मचारियों के लिये लगाये जाते हैं। नये कर्मचारियों के लिये समय-समय पर विशेष पाठयक्रम चलाया जाता है। इनके अलावा सैनिक छटनी के दिनों में जी० एल० एफ० के कर्मचारियों के लिये जो सैनिक शिक्षा से वापिस आते थे हर महीने ५ दिन रिफ्रेशन कोर्स हुआ करते थे।

पढ़ाने के विषय और ढंग :

इनमें सिद्धान्त कम से कम पढ़ाये जाते हैं तथा विद्यार्थियों को इनमें अधिक से अधिक भाग लेना पड़ता है। उन्हें व्यावहारिक रूप से काम में आने वाली समस्याओं का हल भी निकालना पड़ता है। उसके बाद समस्या पर सामूहिक रूप से वाद विवाद होता है और उपस्थित व्यक्तियों से अपने विचार व्यक्त करने और परामर्श देने को कहा जाता है। स्कूल के कार्यक्रम में भिन्नता लाने के लिये वे लोग किसी समीपवर्ती सहकारी प्रतिपालन केन्द्र पर जाते हैं या किसी सामाजिक जलसे में जहां बाहर से वक्ता लोग एकत्रित हों।

पाठ्यक्रम इसी प्रकार का होता है जिस प्रकार का पढ़ने वाला वर्ग रहता है। नये कर्मचारियों को सहकारिता का इतिहास, दर्शन और नियम बताने पड़ते हैं। बहुत से विद्यार्थियों को जी० एल० एफ० की नीति और संगठन के बारे में भी बताया जाता है। चीज़ों के क्रय विक्रय से सम्बन्धित सब विषय भी बताये जाते हैं जैसे खरीदना, मन्डी का काम, तालिका और वस्तुओं के गुणों का ज्ञान। किन्तु इनके अलावा ऋण और बीमा के प्रकार भी बहुत आवश्यक समझे जाते

हैं। जी० एल० एफ० की सारी नई उत्पादित वस्तुओं के बारे में भी उन्हें पूर्णतया बताया जाता है। सहकारिता द्वारा दी गई बहुत सी बातों पर, जैसे खोज, शैक्षिक कार्य आदि पर भी अनेक प्रकार की सूचनायें दी जाती हैं। विद्यार्थियों को व्यक्तिगत और सामाजिक सम्बन्धों पर आवश्यक बातें बताई जाती हैं। इस सम्बन्ध में किसानों के विचारों को सीखने वालों के सम्मुख जी० एल० एफ० के किसी संरक्षक द्वारा रखा जाता है। कृषि की अल्पकालिक और दीर्घकालिक समस्याओं पर भी सामान्य रूप से वाद विवाद होता है।

उद्देश्य और सिद्धान्त :

चूंकि जी० एल० एफ० के स्कूलों का आधारभूत कार्य सहकारी सदस्यों द्वारा की जाने वाली सेवाओं में विकास लाना है इसलिये मुख्यतया सहकारिता के सिद्धान्त, रीतियां और शब्दों के स्पष्ट अर्थ जानने पर अधिक ज़ोर दिया जाता है। ईमानदारी, नम्रता और आत्म-विश्वास जैसे बुनियादी गुणों पर भी ज़ोर डाला जाता है जिनको प्रतिदिन के व्यवहार में परिणित करने से सहकारिता की भावनाओं को निरन्तर बढ़ाया जा सकता है।

ये पाठयक्रम खास तौर पर मैनेजर और खरीदने वाले ऐजेंटों को अपना कार्य योग्यता से सम्पादित करने में सहायता देते हैं। उन्हें अपने संरक्षकों को परामर्श देने में उनको विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रखने के लिये प्रशिक्षित किया जाता है। उदाहरण के लिये उन लोगों को यह ध्यान में रखना चाहिये कि उनके संरक्षक खरीद करी हुई चीज़ों के लिये नकद रुपया दे सकते हैं या नहीं? और वह खाद जो उन लोगों को वह दे रहा है वास्तव में उसके काम में आने योग्य है या नहीं? इस प्रकार प्रशिक्षित होने के बाद और खरीदने वाले एजेन्ट किसान संरक्षकों के लिये वास्तव में टेकनीकल (तकनीकी) सलाहकार और निस्वार्थ मार्ग प्रदर्शक बन जाते हैं। साथ ही साथ ये पाठ्यक्रम अध्यापकों और भविष्य के सहकारिता के नेताओं को भी प्रशिक्षित करता है।

अध्यापक वर्ग :

स्कूल अध्यक्ष तो कोई शिक्षा विशारद होता है परन्तु अधिकांश शिक्षक जी० एल० एफ० के पदाधिकारियों में से लिये जाते हैं। शैक्षिक

उत्तरदायित्व उनके कर्तव्य का एक हिस्सा मात्र हैं। जी० एल० एफ० के शिक्षक लोग अपनी शैक्षिक योजनाओं को विभागों के अधिकारी और शैक्षिक अध्यक्ष के सहयोग से बनाते हैं। कभी-कभी कालेज और फार्मों से विशेषज्ञों को भी बुलाया जाता है।

परिणाम और सम्भावनायें :

यद्यपि जी० एल० एफ० की योजना बहुत विशाल है फिर भी इसके जन्मदाताओं द्वारा यह अब भी अपर्याप्त ही समझी जाती है और स्थानीय मामलों में तो ऐसा है ही। इसलिये इसके प्रचार का प्रस्ताव लोगों के सामने है। प्रायः एक सुझाव जो विद्यार्थियों द्वारा बार-बार सम्मुख लाया जाता है वह एक ऐसी वस्तु की आवश्यकता है जो सहकारिता के दर्शन (फिलॉसफी) की मांग को पूरा कर सके।

स्कूल सहकारिता

परिभाषा :

स्कूल सहकारिता प्राथमिक और माध्यमिक स्कूल के विद्यार्थियों का एक ऐसा समुदाय है (जिसमें कभी-कभी पिछले विद्यार्थी भी होते हैं) जो कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में या तो विद्यार्थियों द्वारा स्वतन्त्रता पूर्वक तथा अन्य परिस्थितियों में अपने अध्यापकों के मार्गदर्शन में सामूहिक रूप से एक छोटी सी आयोजना चलायी जाती है। इस कार्य का उद्देश्य उन लोगों की आर्थिक व सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अलावा स्कूल की आवश्यकताओं से भी सम्बिन्धित रहता है। हां सहकारिता का मुख्य गुण यहां शैक्षिक होता है, आर्थिक नहीं।

ये मुख्य रूप से स्कूल सहकारिता समितियां यूरोप महाद्वीप पर फैल गयी हैं। इनके साथ "यंग फार्मर्स क्लब" "यंग स्टॉक ब्रीडर्स क्लब" इत्यादि आन्दोलन भी सम्बन्धित हैं। जो मुख्य रूप से ऐंग्लो-सेक्सन तथा स्केन्डिनेवियन देशों में फैली हैं।

भौगोलिक विस्तार :

इस प्रकार एक न एक रूप में ये स्कूल सहकारी समितियां या नवयुवक सहकारी समितियां कम से कम २६ देशों में शुरु हो गई हैं, अर्जैंटाइना, बेल्जियम, ब्राज़ील, बल्गेरिया, केमेरुन्स, कनाडा,

जेकोस्लोवाकिया, डेनमार्क, फिन्लैंड, फ्रांस, फ्रेंचवैस्ट अफ्रीका, ग्रेट ब्रिटेन, हंगरी, भारत, मैक्सिको, पोलैंड, रूमानिया, स्पेन, स्वीडन, स्वीटज़रलैंड, यूनियन ऑफ साउथ अफ्रीका, यू० एस० ए०, यू० एस० एस० आर०, वैनेजुएला, यूगोस्लाविया।

कार्यवाहियां, उद्देश्य और कार्य करने के ढंग :

इनके द्वारा एक छोटे स्तर पर स्कूल सहकारिता के विभिन्न कार्यों को, जैसे खरीदना, लेनदेन, बचत, बेचना, उत्पादन, कृषि या पशु पालन एक साथ शुरू कर देते हैं। किन्तु स्कूल की सहकारी समितियों, देश की स्थिति अथवा मांग अथवा उपस्थित साधनों के अनुसार विभिन्न कार्यवाहियों में लगी रहती हैं। उदाहरण के लिये वे स्कूल की किताबों और स्टेशनरी का सामान इकट्ठा खरीदने और कभी-कभी सौंदर्य प्रसाधन की वस्तुयें खरीदने या शारीरिक परिश्रम के लिये कच्चा माल खरीदने, छोटे आमोद ग्रहों (रेस्टोरेंटों) संगठन करने, छापेखाने, धन बचाओ आन्दोलन, ऋण लकड़ी या धातु की चीज़ों के निर्माण या मिट्टी की चीज़ें बनाने, कसीदा काढ़ने, बुनने इत्यादि या कृषि या बाग़बानी की वस्तुओं के उत्पादन, चीज़ें बनाने और बेचने, पुनः वनस्थापन, पुस्तकालयों के संगठन, कान्फ्रैन्सों के संगठन, युवक-उत्सव, नाटक समितियां, खेल-कूद और शारीरिक शिक्षा, स्कूल की सजावट और सुन्दर प्रबन्ध, स्कूल के अजायब घर का निर्माण और शिक्षा प्रद वस्तुयें एकत्रित करने के काम चलाती हैं।

स्कूल सहकारिता द्वारा आर्थिक सुधार या तो स्वयं है, (या उसका कुटुम्ब) जो उसे आर्थिक सहायता देता है और जिससे कि उसके स्कूल के वर्षों की पढ़ाई के खर्चे को कम किया जा सके, हो सकता है। या आर्थिक सुधार स्कूल का हो सकता है जिससे कि उसकी व्यवस्था और उपादान उत्तम हो सकते हों, या बस्ती व प्रदेश भी हो सकता है। इस प्रकार के अनेकों उदाहरण जुटाये जा सकते हैं जहां स्कूल सहकारिता ने ऐसी विधियों का प्रचार किया है जिनसे उत्पादन में वृद्धि हुई है, या अपनी बस्ती और प्रदेश के त्याज्य समझे गये साधनों को फिर से काम लेने योग्य बना लिया गया है। और इस प्रकार प्रयासों में अपने समाज के प्रति प्रेम भी प्रकट होता है क्योंकि यह प्रयास किसी ऐसे दुर्भाग्य को जो बहुत समीप है, दूर हटाने का ही एक प्रयास है।

इन सब समितियों से जो विशेषता पायी जाती है तथा जिसके कारण यह अन्य बालकों की सोसाइटियों से अलग समझी जा सकती हैं वह इस कारण से कि इनका निर्माण और कार्य करने की शैली सब से पृथक है । इनमें से प्रत्येक एक स्वस्थ आर्थिक इकाई के रूप में कार्य चलाती है जिसे विथार्थी लोग एक संगठित समुदाय के रूप में चलाते हैं। इसके लिये वे सारे नियम स्वयम् ही बनाते हैं। इन पर सोचने-विचारने और नियंत्रण करने के लिये भी वे कई ढंग रखते हैं अधिकांशतया अध्यापक लोग परामर्श देने और निरीक्षण करने का कार्य करते हैं और यह भी बहुत होशियारी से।

नवयुवकों की शिक्षा में उनका भाग :

इनके द्वारा जो आर्थिक लाभ प्राप्त होते हैं उनके अतिरिक्त स्कूलों की सहयोग समितियां शिक्षा में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण योग प्रदान करती हैं। यह योग उन सभाओं के अतिरिक्त हैं जो कि प्रकट अथवा अप्रकट रूप से शिक्षा के कार्य में आर्थिक लाभ होने से उत्पन्न होता है। उनके विषय में यह कहना अयुक्त है कि वे "नवीन विधि की शिक्षा के मूर्तिमान प्रतीक हैं।" उससे इस कार्य में दुहरा लाभ पहुंचता है।

कुछ देशों में एक ओर तो उनके स्कूलों की वह सामग्री प्राप्त होती है जिसकी कि स्कूलों को रचनात्मक विधियों के प्रयोग के लिये आवश्यकता हुआ करती है। दूसरी ओर उन शिक्षाविदों की सम्मति में जिनका कि इन विषयों पर अधिकार है वे सहयोग के लिये मानसिक व आत्मिक प्रशिक्षण स्वयं एक साधन, एक विधि, और एक ढंग भी हैं। यह केवल कुछ दिनों का केन्द्र न होकर (जहां कि कक्षा में प्राप्त ज्ञान जमा होता, विकसित होता और अधिक उपयोगी बनता है) वे ऐसे साधन बन जाते हैं कि जिनके द्वारा व्यावहारिक रीति से उस ज्ञान को प्राप्त किया जा सकता है। इसमें हम उस ज्ञान को (उदाहरण के लिये आरम्भिक अर्थशास्त्र) सम्मिलित नहीं कर रहे हैं कि जिसे प्राथमिक कक्षा में स्थान नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि यह बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रभाव डालता है जो कि कक्षा के अन्य कार्यों में प्रयुक्त नहीं होगा। इन योग्यताओं में, निर्णयात्मक बुद्धि व्यावहारिक विचार शक्ति, कल्याण शक्ति और सलीका जैसे मानसिक

गुण भी आ जाते हैं। जिनके द्वारा संगठन की शक्ति बढ़ती है तथा एकता व कलात्मिकता के भावनात्मक गुण भी आ जाते हैं। इसी प्रकार चरित्र के अन्यान्य गुण जैसे प्रेरण, निश्चय, आत्मनियंत्रण, आत्माभिमान, दूसरों के प्रति आदरभाव, स्वतन्त्रता के लिये प्रशिक्षण, व दायित्व आदि भी इसी के अन्तर्गत आ जाते हैं। दूसरों से मिल कर काम करने के समय मन की गतिविधि की तुलना से विचार शक्ति भी बढ़ती है। मिल जुल कर काम करने से, सहयोग से काम करने वालों को अनुशासन का वास्तविक अर्थ व नैतिक नियमों के बल का ज्ञान होता है। इसी प्रकार किसी दायित्व को निभाने के जिन ख़तरों और ज़िम्मेदारियों को सामने रखना पड़ता है उनसे सहयोग के खेल में गम्भीरता व वास्तविकता का पुट भी आ जाता है।

अन्त में, स्कूल में सहयोग, सामाजिक जीवन के लिये भी एक प्रकार से तैयारी के समान हैं। चूंकि इसके द्वारा स्कूल में एक उचित समय पर सामाजिक जीवन का अभ्यास आरम्भ हो जाता है अतएव इस दृष्टि से इसकी उपयोगिता और भी अधिक बढ़ जाती है।

—इति—